वर्ष : 14 • अंक : 1 • जुलाई 2022
ISSN : 2319-4375
मूल्य : ₹150
सोच विचार
साहित्यिक पारिवारिक मासिकी
काशी अंक 13

सोच विचार

साहित्यिक पारिवारिक मासिकी

वर्ष-14 • जुलाई, 2022 • अंक- 1

•

संपादकीय कार्यालय
के. 67/135 (ए) ईश्वरगंगी, वाराणसी- 221001 (उ.प्र.) भारत
दूरभाष : 0542-2211586
Email : sochvicharpatrika@gmail.com

•

प्रादेशिक कार्यालय
557/27 (के), ओमनगर, आलमबाग, लखनऊ - 226005
फोन नं. 0522-4103925, मो. 9415560729

•

	व्यक्तिगत	संस्थाओं के लिए
मूल्य	150/-	150/-
वार्षिक	400/-	500/-
पंचवार्षिक	2000/-	2500/-

•

भीतरी साज-सज्जा - विनय कुल*

•

समस्त छायाचित्र, आवरण पृष्ठ व पृष्ठ संयोजन
मनीष खत्री*

•

अक्षर संयोजन - स्नेहिल

•

स्वामी, प्रकाशक एवं मुद्रक नरेन्द्र नाथ मिश्र द्वारा
वी प्रिन्ट्स, वाराणसी से मुद्रित
* सभी अवैतनिक

अविमुक्तं परं शिवं

पद्मभूषण प्रो. देवी प्रसाद द्विवे[illegible]

परं गुह्यतमं क्षेत्रं मम वाराणसी पुरी।
सर्वेषामेव भूतानां संसारार्णवतारिणी।।

सभी प्राणियों को भवसागर के पार उतारने वाली वाराणसी पुरी मेरा परम गुह्यतम क्षेत्र है।

उत्तमं सर्वतीर्थानां स्थानानामुत्तमं च तत्।
ज्ञानानाममुत्तमं ज्ञानमविमुक्तं परं मम।।

मेरा यह परमप्रिय अविमुक्त (काशी क्षेत्र) सभी तीर्थों में सर्वोत्तम तथा सभी स्थानों से बढ़कर है। सभी प्रकार की ज्ञानभूमियों में यह सर्वोत्तम है।

स्थानान्तरं पवित्राणि तीर्थान्यायतनानि च।
श्मशानसंस्थितान्येव दिव्यभूमिगतानि च।।

स्थूल, सूक्ष्म और कारण तीनों शरीरों का नाश करने वाली महाश्मशान रूपी इस दिव्य भूमि में स्थान-स्थान पर तीर्थ एवं मंदिर प्रतिष्ठित हैं।

भूर्लोके नैव संलग्नमन्तरिक्षे ममालयम्।
अमुक्तास्तन्न पश्यन्ति मुक्ताः पश्यन्ति चेतसा।।

इसे पृथ्वी पर स्थित दूसरे स्थानों की तरह नहीं समझना चाहिए क्योंकि यह तो अन्तरिक्ष में स्थित मेरा आवास है। जो योगी नहीं हैं उन्हें इसके तात्विक स्वरूप का दर्शन नहीं हो सकता किंतु योगियों के लिए यह ध्यानगम्य है।

देवीदं सर्वगुह्यानां स्थानं प्रियतमं मम।
यद्भक्तास्तत्र गच्छन्ति मामेव प्रविशन्ति ते।।

देवि! सभी रहस्यमय स्थानों में यह स्थान मुझे सबसे अधिक प्रिय है जहाँ मेरे भक्त रहते तथा अंत में मुझमें ही मिल जाते हैं।

दानं जप्तं हुतं चेष्टं तपस्तप्तंकृतं च यत्।
ध्यानमध्ययनं ज्ञानं सर्वं तत्राक्षयं भवेत्।।

यहाँ जो दान, जप, हवन यज्ञ, तप, ध्यान, अध्ययन, ज्ञान और अन्यान्य क्रियाएँ की जाती हैं वे सभी अक्षय हो जाती हैं।

अविमुक्तं न सेवन्ते मूढ़ा ये तमसावृताः।
विण्मूत्ररेतसां मध्ये ते वसन्ति पुनः पुनः।।

अज्ञान में डूबे हुए जो प्राणी अवमिुक्त क्षेत्र का सेवन न करके अन्यत्र बसना चाहते हैं वे वस्तुतः मल-मूत्र और रजवीर्य के नारकीय क्षेत्र के ही निवासी हैं।

हन्यमानोऽपि यो विद्वान् वसेद् विघ्नशतैरपि।
स याति परमं स्थानं यत्र गत्वा न शोचति।।

लेकिन जो विद्वान् हैं वे सैकड़ों विघ्नबाधाओं द्वारा आक्रांत होने पर भी इसी पवित्र क्षेत्र में बसते और परम स्थान के अधिकारी होकर शोकरहित हो जाते हैं।

अविमुक्तं परं ज्ञानं अविमुक्तं परं पदम्।
अविमुक्तं परं तत्व अविमुक्तं परं शिवम्।।

अविमुक्त ही परम ज्ञान है और अविमुक्त ही परम पद। अविमुक्त परम तत्त्व है और अविमुक्त ही परम शिव।

कृत्वा वैनैष्ठिकीं दीक्षामविमुक्ते वसन्ति ये।
तेषां तत्परमं ज्ञानं ददाम्यन्ते परं पदम्।।

जो लोग नैष्ठिकी दीक्षा लेकर अविमुक्त क्षेत्र में बसते [illegible] परम ज्ञान और अन्त में परम पद प्रदान करता हूँ।

वाराणस्यां विशेषण गंगा त्रिपथगा[illegible]
प्रविष्टा नाशयेत्पापं जन्मान्तरशतैः [illegible]।।

वाराणसी में विशेषतः त्रिपथगामिनी [illegible] पाताल और भूलोक [illegible] तीनों पथों में प्रवाहित होने वाली गंगा) हैं जो [illegible] करने वाले [illegible] के सैकड़ों जन्मों के पापों का नाश कर देती है।

वाराणस्यां महादेवं येऽर्चयन्ति [illegible]
सर्वपापविनिर्मुक्तास्ते विज्ञेया गणे[illegible]

वाराणसी में जो महादेव की पूजा एवं स्तुति करते हैं समस्त पापों से मुक्त गणेश्वर तुल्य हैं।

अन्यत्र योगज्ञानाभ्यां संन्यासादथवान्यतः।
प्राप्यते तत् परं स्थानं सहस्रेणैव जन्मना।।

दूसरे स्थानों में योग, ज्ञान और सन्यासादि दूसरे साधनों द्वारा परम पद हजारों जन्मों में प्राप्त होता है।

ये भक्ता देवदेवेशे वाराणस्यां वसन्ति वै।
ते विन्दन्तिपरं मोक्षमेकेनैव तु जन्मना।।

(किन्तु) महादेव के जो भक्त वाराणसी में बसते हैं, उन्हें एक ही जन्म में मोक्ष का यह परम पद प्राप्त हो जाता है।

यत्र योगस्तथा ज्ञानं मुक्तिरेकेन जन्मना।
अविमुक्तं समासाद्य नान्यद् गच्छेत् तपोवनम्।।

जहाँ योग, ज्ञान और मुक्ति सब एक ही जन्म में सुलभ है ऐसे अविमुक्त क्षेत्र को प्राप्त करके किसी दूसरे तपोवन में जाने की इच्छा उचित नहीं है।

यतो मया न मुक्तं तदविमुक्तं ततः स्मृतम्।
तदेव गुह्यं गुह्यानामेतद् विज्ञाय मुच्यते।।

चूँकि मेरे द्वारा यह क्षेत्र कभी छोड़ा नहीं जाता, इसीलिए इसे अविमुक्त कहा जाता है। यही गोपनीय से गोपनीय ज्ञान है जिसे प्राप्त करके मनुष्य मुक्त हो जाता है।

यत्र साक्षान्महादेवो देहान्ते स्वयमीश्वरः।
व्याचष्टे तारकं ब्रह्म तत्रैव ह्यविमुक्तकम्।।

जहाँ साक्षात् महादेव शिव स्वयं देहान्त काल में तारक मंत्र का उपदेश करके प्राणियों को मुक्ति प्रदान करते हैं, वह क्षेत्र अविमुक्त है।

भ्रूमध्ये नाभिमध्ये च हृदये चैव मूर्धनि।
यथाविमुक्त आदित्ये वाराणस्यां व्यवस्थितं।।

जैसे विराट पुरुष के भौहों, नाभि, हृदय और मूर्धा के मध्य तथा आदित्य में अविमुक्त स्थित है वैसे ही वाराणसी में अविमुक्त क्षेत्र प्रतिष्ठित है।

● कर्मपुराण अध्याय-29

प्रस्तुतिकर्त्ता उ.प्र. लोकसेवा आयोग के सदस्य रहे हैं।

'सोच विचार' के लिए जुलाई नूतन वर्ष में प्रवेश का [illegible] के साथ हम अपनी यात्रा के चौदहवें वर्ष में प्रवेश कर रहे हैं। पहले वर्ष से ही जो परंपरा [illegible] एक विशेषांक होता है जो अनिवार्यतः काशी पर केंद्रित रहता है। इस क्रम में पत्रिका का काशी [illegible] अत्यंत प्रसन्न एवं संतुष्ट हैं।

वैसे जुलाई सामान्यतया हमारे लिए मनभावन सावन का महीना [illegible] ग्रीष्म के प्रचण्ड ताप से मुक्ति की संभावना से मन हर्षित हो जाता है। वर्षाऋतु में तपती हुई सूखी धरती पर [illegible] का संचार नहीं होता बल्कि लोगों के मन में भी एक नयी आशा, उमंग एवं क्रियाशीलता की लहरें उछाल लेने लगती हैं। [illegible] का महत्व असंदिग्ध है। इस महीने की [illegible] इस कारण भी है कि इसी में लोक के जीवन को सबसे अधिक [illegible] करने वाले तथा उसके सुख-दुख की हर [illegible] में सदा उसके समीप उपस्थित दिखलाई पड़ने वाले महाकवि तुलसीदास अवतरित हुए थे।

[illegible] के जन्मस्थान और उनकी जीवनयात्रा के अनेक संदर्भों को लेकर विद्वानों के बीच शास्त्रार्थ एवं मतभेद हो सकता है किंतु उनकी कर्मभूमि तथा [illegible] प्रधानतया काशी थी, यह बात सर्वमान्य है। वे उच्चकोटि के सन्त, महात्मा, साधक एवं महाकवि थे तथा अपनी दीर्घ जीवन यात्रा में उन्होनें निश्चय ही [illegible] सहित अनेक स्थानों पर डेरा जमाया होगा। इसलिए उनकी रचनाओं का कुछ हिस्सा उन-उन स्थानों पर रचा गया हो, यह पूरी तरह सम्भावित है किन्तु [illegible] निगमागम सम्मत एवं सर्वसमावेशी उनकी जीवनदृष्टि काशी में ही निर्मित एवं विकसित हुई थी, इसमें जरा भी संदेह नहीं।

[illegible]रितमानस एवं दूसरी कृतियों में स्थान-स्थान पर उन्होनें अत्यंत भावविगलित स्वर में काशी की महिमा का जो आख्यान किया है वह इस बात का सहज [illegible] है। सारे सन्दर्भों का उल्लेख तो यहाँ सम्भव नहीं है, लेकिन इस एक दोहे पर संक्षिप्त टिप्पणी की जा सकती है जिसमें उनके विचारों का सारांश दिखलाई पड़ता है

मुक्ति जन्म महि जानि ज्ञानखानि अघहानि कर।
जहँ बस सम्भु भवानि सो कासी सेइय कस न।।

इस दोहे में पहली बात यह कही गई कि काशी मुक्ति की जन्मभूमि है। यहाँ काशी की स्थापना की वह पौराणिक कथा संदर्भित है जिसके अनुसार कर्मबंधन में छटपटाते जीवों की मुक्ति के लिए भगवती पार्वती की प्रार्थना पर भगवान शिव ने पंचक्रोशात्मक काशीपुरी की स्थापना की थी। लेकिन मुक्ति तो ज्ञान के बिना संभव नहीं है। कहा ही गया है- ऋते ज्ञानान्नमुक्तिः। काशी मुक्ति की भूमि है क्योंकि यह ज्ञान की खान है। काशी क्षेत्र में प्रवेश करते ही अनायास उस सत्य का ज्ञान होने लग जाता है। संक्षेप में वह सत्य यही है कि राम का नाम सत्य है। इसके सिवाय जितना जागतिक प्रपंच है वह नाशमान है तथा उससे केवल उतना ही वास्ता रखना चाहिए जितना शरीर-धारण के लिए आवश्यक है। काशी की तीसरी विशेषता बतलाई गई-अघ हानिकर। जैसे-जैसे सत्य के अनुभव और ज्ञान की दिशा में प्रवृत्ति होती है अघ अर्थात् पाप कर्मों में प्रवृत्ति अपने आप घटने लगती है। सारांश के रूप में दोहे का चौथा अंश बतलाता है कि काशी वह है जहाँ शंभु और भवानी बसते हैं। शंभु और भवानी मूर्ति के रूप में भी हैं और उनका नित्य दर्शन-पूजन करिये लेकिन यह भी जानिये कि वे हैं कौन? मानस के प्रारंभ में ही स्पष्ट बतला दिया गया है–

'भवानी शंकरौ वन्दे श्रद्धाविश्वासरूपिणौ।'

जीवन के प्रति श्रद्धा ही भवानी तथा आत्मसत्ता के प्रति विश्वास ही शंकर के रूप में काशी में प्रतिष्ठित हैं। इतना बतलाकर दोहे के अंतिम हिस्से में बाबा कहते हैं– 'सो कासी सेइय कस न? यहाँ बल 'सो' पर है। ऐसी काशी का सेवन क्यों नहीं करते?

भारत के भौगोलिक मानचित्र में दूसरे नगरों और महानगरों की तरह काशी भी तीर्थ की महिमा से सम्पन्न एक नगर है जो देश के शीर्ष महानगरों के समतुल्य विकास की राह पर तीव्रगति से अग्रसर है। देश के ही नहीं सारे संसार के लोग विभिन्न प्रयोजनों से यहाँ बसते हैं तथा जो भी यहाँ का रहवासी है वह स्वयं को अधिकारपूर्वक काशीवासी कह सकता है। प्रश्न है कि काशी में दिन प्रतिदिन बढ़ती गई ऐसे रहवासियों की भारी संख्या के बीच तुलसीदास द्वारा परिभाषित उपर्युक्त काशी कहाँ है? क्या वह पूरी तरह लुप्त हो गई है? हमारी दृष्टि में ऐसा नहीं है। कारण, आज भी देश के कोने-कोने से तथा दूसरे देशों से भी भारी संख्या में जो यात्री काशी आते हैं वे उसी महिमामयी काशी के दर्शन की ललक लिये आते हैं और यह अपने आप में इस बात का प्रमाण है कि मुक्तिप्रदात्री काशी के भीतर अभी भी देश और दुनिया को बहुत कुछ देने की क्षमता शेष है। वैसे थोड़ी संख्या में ही सही काशी में पीढ़ी दर पीढ़ी निवास करने वाले जो लोग यत्र तत्र वर्तमान हैं उनके जीवन में काशी के जीवन- दर्शन का यत्किंचित् भाव एवं प्रभाव आज भी देखा जा सकता है।

काशी का यह जीवन दर्शन यही है कि मनुष्य जन्म अनमोल है तथा मानवधर्म के साधन में इसका अधिकतम उपयोग करना मनुष्य के रूप में हमारा प्राथमिक कर्त्तव्य है। एतदर्थ आवश्यक हैं कि जब तक जीवन है शारीरिक स्वास्थ्य एवं नीरोगता के लिए प्रयत्नशील रहना चाहिए क्योंकि 'शरीरमाद्यं खलु धर्म साधनं। धर्म साधन में शरीर का ही प्राथमिक महत्व है। स्कंदपुराण के काशीखंड के छानबेवें अध्याय में स्पष्ट निर्देश है कि काशीवासी को कभी मृत्यु के संबध में चिंतन करना ही नहीं चाहिए। उसे तो दीर्घकाल तक स्वास्थ्य-संरक्षण करते हुए धर्म की साधना करनी चाहिए। काशी के इस जीवन-दर्शन से अनुप्राणित होकर ही तुलसी दास ने काशी में हनुमान मंदिरों तथा उससे संलग्न अखाड़ों की स्थापना की थी।

काशीवासी मृत्यु से निर्भय रहता है क्योंकि जब भी मृत्यु हो, उसकी मुक्ति अवश्यंभावी है। वह तो हर तरह से सार्थक जीवन के रस के अनुभव में मस्त रहता है। वह मानस जैसे महान ग्रंथ की रचना भी स्वान्तः सुखाय करता है। ग्रंथ की फलश्रुति में भी वह यही घोषित करता है कि यह रचना अन्तस्तम की शांति (स्वान्तस्तमः शान्तये) के लिए है।

तीव्रगति से विकास की ओर अग्रसर काशी का चोला नित्य बदल रहा है। काशी नयी हो रही है तो पुराना बहुत कुछ उसके हाथ से फिसल भी रहा है। काशी के नव्यविकास की झलक देते हुए उसके परंपरागत मन मिजाज का परिचय भी मिलता रहे, इसी विचार से प्रेरित सोच विचार के काशी अंकों की श्रृंखला का यह त्रयोदश पुष्प पाठकों के समक्ष प्रस्तुत है।

नरेन्द्र नाथ मिश्र

'सोच विचार' मई 2022 में प्रकाश मनु ने देवेन्द्र सत्यार्थी पर सारगर्भित लेख लिखा है। पढ़ते समय कई पंक्तियों को मुझे पेंसिल से रेखांकित करना मेरी मजबूरी हो गयी। जैसे– "अब देश के बंटवारे को झुठलाना सहज नहीं, पर क्या जीवन का भी बंटवारा हो गया?" देवेन्द्र सत्यार्थी की बहुचर्चित कहानी 'इकन्नी' भी इसी अंक में पढ़ने को मिली। इसी माह के साहित्य अमृत में देवेन्द्र सत्यार्थी की ही कहानी 'फत्तू भूखा है' पढ़ने को मिली। मैं जो भी पत्रिकायें मंगाता हूँ उन्हें आद्यांत पढ़ता हूँ। सोच विचार में दीर्घ नारायण, अश्विनी कुमार दूबे की कहानियाँ पढ़ने के बाद अखिलेश पालरिया की कहानी 'कर्तव्यपथ' ने तो आंख में आंसू ला दिये। कहानीकार की यही तो सफलता है। "दादा जी, अपना आशीर्वाद दे दीजिए, आपका आभार कहाँ रखूँगा मैं?" मर्मस्पर्शी वाक्य है।
अंत में कवि अशोक कुमार पाठक को श्रद्धांजलि देते हुए उनके पक्ष–"आज लेखकों की कभी नहीं है, कमी तो पाठकों की है।" को आपने सबके सामने रखा है। वे पत्रिकाएँ अपने पास मंगाकर लोगों को बांटते थे। उनसे सदस्यता राशि वसूलते थे। डाकघर की लापरवाही और साधारण डाक न पहुँचने की विवशता के कारण मैं भी सोच विचार, समकालीन स्पंदन, कथा समवेत और गुफ्तगू आदि पत्रिकाएँ रजिस्टर्ड डाक से अपने पते पर मंगाकर उनके सदस्यों को बांटता हूँ।
मई 2022 के सोच विचार पत्रिका के पृष्ठ 39 पर महादेवी वर्मा पर मंजरी पांडेय ने 'महीयसी महादेवी वर्मा का रचना लोक' शीर्षक से लेख लिखा है। इसमें उन्होंने निम्नलिखित पंक्तियों को महादेवी वर्मा की रचना बताया है जो कि गलत है–

'नारी तेरी यही कहानी
अंचल में दूध और आंखों में पानी'
वस्तुतः यह राष्ट्रकवि मैथिलीशरण गुप्त की रचना है,और वह इस तरह है–
'नारी जीवन तेरी यही कहानी
आँचल में है दूध और आँखों में पानी।'
अबला जीवन तेरी यही कहानी
आँचल में दूध है और आँखों में पानी
मैथिली शरण गुप्त ने लिखा है———
अबला जीवन हाय तुम्हारी यही कहानी
आँचल में है दूध और आंखों में पानी ।

केदारनाथ सविता
लालडिग्गी, सिंह गढ़ की गली, नई कालोनी, मिर्जापुर–231001
मोबाइल : 9935685068

पिछले दो अंकों (फरवरी व मार्च 2022) को पढ़ते हुए पाती न लिख पायी। लिखना जरूरी है कि प्रकाश मनु पर केंद्रित अंक दुर्लभ है। इसे पढ़कर मैंने प्रकाश मनु जी से बात भी की । बचपन की पत्रिका शनंदनश के संपादक से बात कर बहुत अच्छा लगा। उनका नंबर मुझे 'सोच–विचार' पत्रिका द्वारा ही मिला। इसके लिए मैं पत्रिका की बहुत शुक्रगुजार हूँ। मार्च अंक में पत्रिका खोलते हैं जिस कहानी पर मेरी नजर पड़ी, रुला दिया। बेहिसाब अशुद्धियाँ। मेरे ही शहर बनारस खोजवां मोहल्ले के रचनाकार द्वारा रचित इस कहानी में भरमार है अशुद्धियों की। अचरज है कि सोच विचार ने इसे प्रकाशित किया! प्रूफ देखने की जरूरत ही नहीं समझी!! हिंदी भाषा साहित्य की ऐसी दुर्दशा देखना अत्यंत कष्टकर। अप्रैल अंक पर जिस रचना ने पत्र लिखने को उकसाया, वो है 'अंधेरे मोड़ पर'। कसी– सधी। कंटेंट बेचौन करने वाला। समय को आँख मिलाकर देखती इस कहानी में वर्तमान समय के बहुतेरे प्रश्न हैं, जिनका हल सामाजिकों को ढूँढना ही होंगे। इस कहानी के पाठकों का रेंज देखिए न! इसके केन्द्र में है युवा पीढ़ी और परिधि पर उस पीढ़ी के निर्माता। अंधेरे मोड़ पर देश का अभिशाप सहते। अपनी संतति के दुःख से जुदा कैसे रह सकते हैं माता– [illegible] और करें तो हमारे घर बाहर न जाने कितनी मेहा" कहानीकार रजनी [illegible] बहुत आभार। उन्होंने कहानी को 'भटकते आकाश [illegible] से बचा [illegible] काश राढ़ी जी की कहानी भाषा शैली का सुंदर रंग [illegible] भी अपने [illegible] भटक गई ह। सोनिया की तरह। पर यथार्थ का यह [illegible] तो हमारे [illegible] हिस्सा है ।
'बाँस–पुल' नाम बहुत ताजा। दिलीप दर्श ने [illegible] के शब्दों से इस कहानी को ताजादम रखा है आद्यंत। आभाषी– दुनिया की कथा 'अलविदा प्लेटफार्म' के लिए विकास राजौरा जी का प्रयास अच्छा। अशोक कुमार प्रजापति जी कहानी 'काठ की दुल्हन' लंबी होने के बावजूद कथा-रस से [illegible] है। लॉकडाउन ,मजदूर, मौत का तांडव... सारे दृश्य साक्षात हो गए। बहुत सुंदर। किस्सागोई के भीतर से कथानक तक पहुँचाया है 'हिसाब' कहानी में [illegible] ने। इसकी बुनावट कितनी प्यारी है! और इसमें तो घोघो रानी खेल भी है। [illegible] का वीभत्स खेल भी। सिद्धेश्वर जी की लघु कथा 'सिमटती दूरियां' ने टीवी देखे समाचार की बरबस याद दिला दी। महेश शर्मा जी की लघुकथा 'वेतन–वृद्धि' में हकीकत। दोनों ही लघुकथा पसंद।
विज्ञान–व्रत व अशोक 'अंजुम' जी की गजल के लिए कहना ही क्या!! हमेशा की तरह वाह! वाह!! वाह!!!

अंत में...
अशोक अंजुम जी की यह प्रिय पंक्तियाँ –
तेरे अंदर कितना सच
सोच तभी तो लिखना सच
सुनने की जिद मत करना सच
मुश्किल है सुनना सच।

मई अंक में 'इकन्नी' कहानी और उसकी फोटो ने मोह लिया। बचपन में इन्हें इकट्ठे करती। गुल्लक में। इससे जुड़े किस्से दादी सुनाती। पापा–चाचा के बचपन में इनसे कितने समान मिलते! चलन से बाहर इस पैसा का मूल्य कुछ नहीं था, पर इनके होने से मेरा बचपन बड़ा मूल्यवान था।
खनखनाती हुई यादें...
इस अंक का अंतिम पन्ना कितना स्नेहिल है! कंचन– महल नहाए बादल!!

डॉ प्रीति जायसवाल
महात्मा गांधी काशी विद्यापीठ, वाराणसी । मोबाइल : 8765052362

'सोच विचार' एक महान पत्रिका है क्यूँकि इसके प्रकाशन के प्रबन्धन का कार्य दो महान व्यक्ति करते है। पिछले दिनों के विशेषांकों ने बहुत ज्ञानवर्धन किया है मैं नया ज्ञानोदय, आधार शिला, वीणा तथा श्री मनोहर अभय द्वारा सम्पादित अग्रीमान का नियमित पाठक हूँ। मैं डा. शम्भुनाथ द्वारा सम्पादित वागर्थ भी पढ़ता हूँ, साहित्य अमृत भी किन्तु जो बात सोच विचार में है वह इन पत्रिकाओं में नहीं है। पत्रिका का कागज, प्रिन्टिंग बेमिसाल है। इसकी सामग्री ज्ञान का वर्धन करती है। पत्रिका के प्रबन्धक मिश्रा बन्धु पत्रिका ही नहीं छापते, साहित्य की उत्कृष्ट सेवा करते हैं। साहित्य के प्रति ऐसा पैशन कम ही देखने को मिलता है पत्रिका के लिए मेरी शुभकामनाएँ।

आर.सी. शुक्ल
एम.आई.जी. 33 रामगंगा विहार फेज–2, मुरादाबाद–244105
मोबाइल : 9411682777

श्री काशी विश्वनाथ धाम

युगान्तरकारी कायाकल्प

- काशी में हो तो शिव को जानो, शिव ही ब्रह्म हैं... • भज विश्वनाथम्... भज विश्वनाथम्... • श्री काशी विश्वनाथ धाम - युगान्तरकारी कायाकल्प
- श्री काशी विश्वनाथ धाम - नूतन रूपा... भव्य स्वरूपा... • महादेव के देव... • बम बम बोल रहा है काशी...
- आरती श्री काशी विश्वनाथ की... • श्री काशी विश्वनाथ धाम के चार मुख्य द्वार

आलेख

विश्वनाथ गोकर्ण

छायाचित्र व संयोजन

मनीष खत्री

काशी में हो तो शिव को जानो, शिव ही ब्रह्म हैं...

न सन्न चासच्छिव एव केवलः ...

यह वेद कहता है। अत्यंत सारगर्भित है यह शब्द पुंज। जैसे कोई सूत्र वाक्य उपदेशित किया जा रहा हो। जैसे इसके जरिये जीवन का मर्म समझाया जा रहा हो। जैसे अखिल ब्रह्माण्ड को जीवन दर्शन की मीमांसा का दिग्दर्शन कराया जा रहा हो। यह वेद वाक्य हमें बताता है कि सृष्टि के पूर्व न तो सत था और न असत। सत माने चेतन और असत माने जड़। उस काल में यदि इस धरा पर कुछ था तो वह केवल और केवल शिव का अस्तित्व था। सब जानते और मानते भी हैं कि सृष्टि के पूर्व की वस्तु या तथ्य ही इस जगत का कारक है और जो जगत का कारक है वही ब्रह्म है।

यह बात आज यहां इसलिए हो रही है कि काशी और शिव एक दूसरे के पर्याय हैं। इन दोनों का अस्तित्व एक दूसरे के बिना अधूरा है। काशी यानि शिव और शिव यानि अविनाशी काशी। काशी का मतलब ही शिव के आत्मलिंग का शीर्ष यानि श्री काशी विश्वनाथ है। सो काशी को बूझना है तो भज विश्वनाथम्... भज विश्वनाथम्...

वेद सिर्फ 'न सन्न चासच्छिव एव केवलः' कह कर चुप नहीं रह जाता। वो ब्रह्म का लक्षण भी बताता है। वो कहता है...

यतो वा इमानि भूतानि जायन्ते येन जातानि

जीवन्ति यत् प्रयन्त्यभिसंविशन्ति तद्विजिज्ञासस्व, तद् ब्रह्म...

यानि ये भूत जिससे पैदा होते हैं, जन्म पाकर जिसके कारण जीवित रहते हैं और नाश होने के बाद जिसमें प्रविष्ट हो जाते हैं, वही जिज्ञासा के योग्य है और यही ब्रह्म तत्व है। वेदान्त रचयिता महर्षि वेद व्यास ने भी 'अथातो ब्रह्मजिज्ञासा' सूत्र में ब्रह्म जिज्ञासा का कर्तव्य बताने के बाद ही 'जन्माद्यस्य यतः' कहा। इस सूत्र में वो ब्रह्म का लक्षण और जगत जन्मादि का कारण तत्व बताते हैं। इस सूत्र में वो कहते हैं कि इस जगत के जन्मादि यानि जन्म स्थिति, लय आदि यतः यानि वो जिससे है, वही ब्रह्म है। इस धरा के प्रत्येक जीव के जन्म का कारण ही ब्रह्म है इस पर कोई मतभेद नहीं है। तो जगत के जन्म का कारण तत्व जो ब्रह्म के लक्षण में निहित है, उसके लिए वेद में 'न सन्न चासत' कहा गया। इस श्रुति में ये सारे लक्षण शिव में बताये गये। कहा गया कि सृष्टि की उत्पत्ति से पहले जिसका अस्तित्व रहा हो वही इस धरा के जीव मात्र में प्राण वायु का कारण और कारक है। वेद श्रुति कहती है कि सृष्टि के निर्माण से पहले सत और असत दोनों ही नहीं थे। इस धरा पर केवल शिव ही थे । फिर कहूंगा, सत यानि चेतन और असत यानि जड़। इस संसार में दो ही तत्व हैं, चेतन और अचेतन। ये दोनों ही जब यहां नहीं थे तब एक शिव ही थे। इसका मतलब है कि सद और सद वस्तुओं की उत्पत्ति से पहले मात्र शिव ही यहां थे। तब इन सद और सद वस्तुओं की उत्पत्ति का कारण शिव ही तो हुए। चारों वेद, पुराण, उपनिषद और शास्त्र तो यही कहते हैं।

सत के भी गूढ़ अर्थ हैं। सत माने जो सदा एकरूप रहे। असत उसे कहते हैं जो परिणाम के कारण अलग अलग समय में अलग अलग रूप में दिखे। अपरिणामी होने के कारण चेतन हमेशा एकरूप में दिखता है। यही कारण है कि वह सत कहलाता है। जड़ वस्तु परिणामी होने के कारण नाना रूप में दृष्टिगोचर है। यही वजह है कि वो असत कहलाता है। जिस काल में मात्र ये दोनों अस्तित्व थे, वो सृष्टि के पूर्व का काल था। उस काल में केवल शिव की सत्ता बतायी गयी है। तो शिव ही जगत के कारण हैं। जब सारे वेद और शास्त्र ब्रह्म को जगत का कारण बता रहे हैं तब हमें यह मानना ही पड़ेगा कि ब्रह्म का नाम ही शिव है। वैसे भी शिव शुभ और श्रेयस्कर वस्तु का सूचक शब्द है। ब्रह्म सर्व शुभकारी और सर्व श्रेयस्कारी है। इस दृष्टि से भी शिव शब्द ब्रह्म वाचक है।

त्रिमूर्ति के अन्तर्गत देवता विशेष के नामों में भी शिव शब्द का पाठ अमर कोश सहित सभी कोशों में है लेकिन परब्रह्म के अर्थ में शिव शब्द का प्रयोग मुख्य और त्रिमूर्ति देव विशेष के संदर्भ में गौण माना गया है। यह ठीक उसी तरह से है जैसे इन्द्र शब्द का प्रयोग स्वर्गाधिपति के रूप में मुख्य और शचीपति के अर्थ में गौण है। इसी तरह शिव शब्द का भी परब्रह्म में मुख्य वृत्ति और त्रिमूर्ति के अन्तर्गत देवता विशेष में गौण वृत्ति स्वीकार किया जाता है। यह उपयुक्त भी है। सर्वोत्कृष्ट शुभावह ब्रह्म हो सकता है। त्रिमूर्ति के अन्तर्गत देवता विशेष में शिव संहार कर्ता मात्र माने जाते हैं। वहां सृष्टि कर्ता ब्रह्मा हैं। यदि उन्हीं शिव को उपर्युक्त वेद वाक्य के अन्तर्गत शिव शब्द का पर्याय मानें तो उनका जगत कर्तृत्व सिद्ध नहीं होगा। इसलिए इस श्रुति में प्रतिपादित शिव त्रिमूर्ति के अन्तर्गत शिव न होकर जगत के जन्म के कारक ब्रह्म ही हैं, ऐसा हमें मानना ही होगा। कुछ लोग ब्रह्मा विष्णु महेश में समानता मानते हैं। कुछ लोग इनमें से किसी एक को महत्व देते हैं। इन देवों को समान मानने वाले आस्तिक इन तीनों को एक ही ब्रह्म का अंश मानते हैं। लेकिन किसी एक देव को अपना इष्ट मानने वाले उस एक को तो साक्षात ईश्वर का अवतार समझते हैं। शेष दो को वो ईश्वरांश विशिष्ट जीव के रूप में देखते हैं।

'एष खलु वा अस्य राजसोंशो योयं ब्रह्मा, एष खलु वा अस्य सात्त्विकोंशो योयं विष्णुः, एष खलु वा अस्य तामसोशो योयं रुद्रः...'।

वेद की इस श्रुति के अनुसार तीनों ही ब्रह्मांश हैं। इसका मतलब है कि ब्रह्मांश भाव के कारण तीनों में समानता है। लेकिन इन तीनों देवों के कार्यों में भेद और इस भेद की वजह से गुणभेद तो हैं ही यह बात भी उक्त श्रुति से स्पष्ट हो जाती है। इन तीनों का जो मूल है वही ब्रह्म है। एक मूर्ति की प्रधानता मानने वालों के विचार पर अगर गौर करें तो तीनों में से एक साक्षात परमात्मा का अवतार रूप है। बाकी दो ईश्वराविष्ट जीवरूप हैं। इस पक्ष में भी त्रिमूर्तियों में मुख्य एक के अवतार रूप होने से उसका भी मूल परब्रह्म ही है। इसलिए त्रिमूर्ति के अन्तर्गत शिव मुख्य न होकर भी तन्मूलभूत ब्रह्म ही मुख्य शिव हैं। तब तो वह ब्रह्म ही हैं। कुछ लोग त्रिमूर्ति से परे हट कर तुरीय तत्व को शिव मानते हैं। इसका मतलब है कि ये लोग तीनों मूर्तियों के मूल को ही ब्रह्म और उसका नाम शिव मानते हैं। ऐसे में ब्रह्म ही शिव हैं यह सिद्धान्त अक्षुण्ण रहता है।

हर हर महादेव... हर हर महादेव...

भज विश्वनाथम्... भज विश्वनाथम्...

शैव और शाक्त साधना में वैविध्य है। शैव परम्परा में लिंग पूजन की अहमियत है तो शाक्त में श्रीचक्र की प्राधान्यता है। देवी पुराण कहता है कि श्रीचक्र के शीर्ष पर मां कामाख्या विराजमान हैं। श्रीचक्र का शिखर बिन्दु कोई और नहीं वो स्वयं मां कामाख्या हैं। ठीक इसी तरह द्वादश ज्योर्तिलिंगों का सिरमौर कोई और नहीं स्वयं श्री काशी विश्वनाथ हैं। शिव पुराण में इस बात का स्पष्ट उल्लेख है इस ब्रह्मांड के अधिपति अंगीरागुरू आशुतोष रूद्र यानि बाबा श्रीकाशी विश्वनाथ हैं। वो सनातन धर्म की आस्था के केन्द्र सबसे प्रमुख लिंग हैं। आनंद वन में रहने वाला अविमुक्तेश्वर। पुराण कहता है कि अक्षमाली अतीन्द्रिय महादेव माता पार्वती से विवाह के बाद कैलाश पर्वत पर ही रह रहे थे। लेकिन गौरा भवानी को पिता के घर में ही विवाहित जीवन बिताना अच्छा नहीं लगता था। एक दिन उन्होंने अचलेश्वर शिव से कहा कि हे महादेव, आप मुझे अपने घर काशी ले चलिए। यहां मायके में रहना मुझे अच्छा नहीं लगता। भगवान शिव ने उनकी यह बात स्वीकार कर ली। तब भगवान शिव माता पार्वती जी को साथ लेकर अपनी पवित्र नगरी काशी आ गये। यहां आकर वे विश्वनाथ ज्योतिर्लिंग के रूप में स्थापित हो गये। काशी की प्राचीनता के साथ ही भगवान शिव के ज्योतिर्लिंग स्वरूप श्रीकाशी विश्वनाथ मन्दिर की भी प्राचीनता सिद्ध होती है।

दरअसल, काशी को समझने के लिए श्रीकाशी विश्वनाथ मंदिर के इतिहास को बूझना बहुत जरूरी है। इसके निर्माण और विध्वंस की दारुण कथानक का श्रवण करना होगा। पुराण श्रीकाशी विश्वनाथ के लिंग रूप में स्थापित होने और उनके दर्शन पूजन से लाभ की कथा तो कहते हैं लेकिन श्रीकाशी विश्वनाथ मंदिर के बनने और आततायियों के हाथों उसके टूटने की एक अलग दुर्भाग्यपूर्ण कहानी है। इतिहासकारों के अनुसार श्रीकाशी विश्वनाथ मंदिर का जीर्णोद्धार 11वीं सदी में राजा हरिश्चन्द्र ने कराया था। अफसोस कि बनने के कुछ साल बाद ही सन् 1194 में मुहम्मद गोरी ने मंदिर पर हमला कर इसे तुड़वा दिया था। स्थानीय आस्तिकों ने जैसे तैसे कर मंदिर को थोड़ा बहुत बना दिया। लेकिन उसी दौरान कुछ ही दिनों बाद कुतुबुद्दीन ऐबक और शहाबुद्दीन गोरी ने सन् 1194 में काशी को फतह कर लिया। इस जीत के बाद काशी की हुकूमत उन्होंने अपने एक सूबेदार सैय्यद [illegible] के सुपुर्द कर दी। कम लोग जानते हैं कि सूबेदार सैय्यद [illegible] ने काशी से मूर्तिपूजा समाप्त करने के लिए कत्लेआम मचा डाला। उसने श्रीकाशी विश्वनाथ मंदिर का विध्वंस कर डाला। [illegible] में सनातन समाज ने इस मन्दिर को फिर से खड़ा कर दिया।

इसके बाद करीब ढ़ाई सौ साल तक [illegible] लेकिन [illegible] 1947 के आते आते फिर से उपद्रव शुरू हो [illegible] जौन[illegible] सुल्तान महमूद शाह ने श्रीकाशी विश्वनाथ [illegible] दिया। महमूद शाह शर्क (सन् 1436–1458) के समय में भी [illegible] मंदिरों [illegible] तोड़–फोड फिर से शुरू हो गयी थी। अकबर के [illegible] में उनके मंत्री राजा टोडरमल की मदद से नारायण भट्ट ने काशी विश्वनाथ मंदिर को फिर बनवाया। उस जमाने में टोडरमल के पुत्र गोवर्धन को यहां के धार्मिक कार्यों का श्रेय जाता है। उस काल में काशी में टोडरमल के नाम से जो मंदिर या बावलियां बनीं उन्हें गोवर्धन ने ही बनवाया [illegible] 1632 में शाहजहां ने आदेश पारित कर काशी के मंदिरों को [illegible] लिए सेना भेजी थी लेकिन हिन्दुओं के प्रबल प्रतिरोध के कारण श्री काशी विश्वनाथ मंदिर को उसकी सेना तोड़ नहीं सकी। लेकिन खिसियाई हुई मुगल सेना ने काशी के 63 अन्य मंदिर जरूर तोड़ दिये।

अब आता है औरंगजेब का आततायी काल। 18 अप्रैल, सन् 1669 को औरंगजेब ने एक फरमान जारी कर विश्वनाथ मंदिर को ध्वस्त करने का आदेश दिया। यह फरमान एशियाटिक लाइब्रेरी, कोलकाता में आज भी सुरक्षित है। उस कालखंड के लेखक साकी मुस्तइद खां की लिखित पुस्तक में इस विध्वंस की दर्दनाक दास्तां का वर्णन है। औरंगजेब ने अपनी सेना को ताकीद किया था कि श्रीकाशी विश्वनाथ मंदिर को सिर्फ तोड़ा ही न जाये बल्कि उस मंदिर को जमींदोज कर यह सुनिश्चित कर दिया जाये कि फिर वहां कभी मंदिर का निर्माण न हो सके। तो औरंगजेब के आदेश पर श्रीकाशी विश्वनाथ मंदिर को तोड़ा गया। मंदिर को नेस्तनाबूत करने में काफी वक्त लगा। दो सितंबर सन् 1669 की तारीख को औरंगजेब को मंदिर को तोड़ने का कार्य पूरा होने की सूचना दी गयी थी।

सन् 1752 से लेकर सन् 1780 के बीच मराठा सरदार दत्ताजी सिंधिया और मल्हारराव होलकर ने श्रीकाशी विश्वनाथ मंदिर की मुक्ति के कई प्रयास किये। सात अगस्त सन् 1770 में महादजी सिंधिया ने दिल्ली के बादशाह शाह आलम से मंदिर तोड़ने की क्षतिपूर्ति वसूल करने का आदेश जारी करा लिया था लेकिन तब तक काशी पर ईस्ट इंडिया कंपनी का राज हो गया। ऐसे में मंदिर का जीर्णोध्दार कार्य रुक गया। सन् 1777–80 के बीच इंदौर की महारानी अहिल्याबाई ने इस मंदिर का पुनः निर्माण कराया। बाद में पंजाब के महाराजा रणजीत सिंह ने स्वर्ण पत्रों से मंदिर के शिखरों को सुसज्जित कराया। ग्वालियर की महारानी बैजाबाई ने मंडप बनवाया और महाराजा नेपाल ने वहां विशाल नंदी की प्रतिमा स्थापित करायी।

वस्तुतः इतिहास में 11वीं से 17वीं सदी तक के कालखंड में काशी के मंदिरों का जिक्र और उनके विध्वंस की बातें सामने आती हैं। मोहम्मद तुगलक (1325) के समकालीन लेखक प्रभु सूरी ने अपने ग्रंथ 'विविध कल्प तीर्थ' में लिखा है कि श्रीकाशी विश्वनाथ मंदिर परिक्षेत्र को देव क्षेत्र कहा जाता था। उस जमाने के एक और इतिहासकार फ्यूरर ने भी लिखा है कि फिरोजशाह तुगलक के समय कुछ मंदिर मस्जिद में तब्दील हुए थे। सन् 1460 में वाचस्पति ने अपनी पुस्तक 'तीर्थ चिंतामणि' में वर्णन किया है कि अविमुक्तेश्वर और विश्वेश्वर एक ही लिंग हैं। इतिहास के अनुसार श्रीकाशी विश्वनाथ मंदिर के निर्माण और विध्वंस की घटनाएं 11वीं सदी से लेकर 17वीं सदी तक चलती रहीं। यद्यपि 30 दिसंबर सन् 1810 को बनारस के तत्कालीन जिला दंडाधिकारी मिस्टर वॉटसन ने ब्रिटिश प्रेसीडेंट इन काउंसिल को पत्र लिख कर ज्ञानवापी परिसर और श्रीकाशी विश्वनाथ मंदिर को हमेशा के लिए हिंदुओं को सौंपने को कहा था लेकिन यह कभी संभव ही नहीं हो पाया।

मिस्टर वॉटसन के आदेश में श्रीकाशी विश्वनाथ मंदिर और ज्ञानवापी परिक्षेत्र का विस्तृत वर्णन किया गया है। आदेश पत्र में लिखा हुआ है कि मंदिर में मुख्य देवता का लिंग विग्रह 60 सेंटीमीटर (24 इंच) लंबा और 90 सेंटीमीटर (35 इंच) परिधि में एक चांदी की वेदी में रखा हुआ है। मुख्य मंदिर चतुर्भुज है और अन्य देवताओं के मंदिरों से घिरा हुआ है। ज्ञानवापी परिसर में कालभैरव, कार्तिकेय, अविमुक्तेश्वर, विष्णु, गणेश, शनि, शिव और पार्वती के छोटे–छोटे मंदिर हैं। मंदिर में एक छोटा कुआं है, जिसे ज्ञानवापी कूप कहा जाता है। ज्ञानवापी कूप मुख्य मंदिर के उत्तर में स्थित है। यह वही कूप है जिसमें ज्योतिर्लिंग को आक्रमणकारियों से बचाने के लिए मंदिर के मुख्य पुजारी ने शिवलिंग के साथ छलांग लगा दी थी।

श्री काशी विश्वनाथ धाम
युगान्तरकारी कायाकल्प

अद्भुत... अकल्पनीय... अतुलनीय... किसी देवस्थान के कायाकल्प की ये वो कहानी है जो युगान्तरकारी है। श्री काशी विश्वनाथ मंदिर के इतिहास का जिक्र आते ही इसके विध्वंस की त्रासद कथा ही अब तक सनातन रूप से जनमानस सुनता रहा लेकिन अब ये सब शेष हो चुका है। अब अगर अवशेष है तो श्री काशी विश्वनाथ मंदिर के श्री काशी विश्वनाथ धाम बनने की दास्तां है... बाबा धाम के एक छोटे से सिमटे हुए परिसर से निकल कर उसके विशाल चौहद्दी में बदल जाने की विस्तृत कहानी है... मां गंगा का श्री काशी विश्वनाथ के चरण पखारने की स्वपनिल कथा को हकीकत में बदलते देखा जाना है... और तंग गलियों के बीच दमघोंटू माहौल में श्री काशी विश्वनाथ के दर्शन के बजाय अब मुक्तांगन में खुले आसमान के नीचे खड़े होकर रूद्र शिव महादेव के स्वर्ण शिखर को अपलक निहारना है... श्री काशी विश्वनाथ के स्वर्ण मंडित गर्भगृह से मिल रहे अध्यात्मिक स्पंदन को महसूस करना है...

इस युगातंरकारी कायाकल्प ने श्री काशी विश्वनाथ मंदिर पर मुगलों के किये तमाम हमलों और विध्वंस के इतिहास को बौना कर दिया है। वो एक ऐसी दर्दनाक दास्तां है जिसका मलाल हमेशा रहेगा पर आज यह देश उन सबको भूल कर अपने बाबा के धाम में गोस्वामी तुलसीदास रचित रूद्राष्टकम् गाते हुए डोल रहा है। इसका सांगोपांग वर्णन करते फिर रहा है। हर आस्तिक एक दूसरे को काशी आने और श्री काशी विश्वनाथ के दर्शन को प्रेरित कर रहा है। वो एक दूसरे को बता रहा है कि कुछ कर गुजरने की अगर शासन की मंशा हो जाए तो सब कुछ मुमकिन [illegible] आस्था के इस नये रूप को नत शीष नमन कर रहा है। इसके लिए सरकारी तंत्र के किये गये प्रयास को साष्टांग दंडवत कर रहा है। इसके [illegible] दिल्ली और लखनऊ में बैठी सल्तनत को उसका ताज [illegible] सौंपने का फैसला कर रहा है।

[illegible] ख्वाब वाकई हकीकत में बदल चुका है और आप पीछे [illegible] हैं तो एक अजीब सी अनुभूति होती है। सहसा यकीन [illegible] की वजह भी है। सनातन हमेशा से अपनी सहिष्णुता की [illegible] रहा। एकाध बार जोर मारने के बाद भी वो मुद्दतों से 'अभी [illegible] झांकी है... काशी मथुरा बाकी है...' के नारे सुनता रहा। दरअसल, उस समय इन मसलों को सुलझाने की तत्कालीन शासन और प्रशासन की कभी कोई मंशा दिखी ही नहीं। लखनऊ और दिल्ली की सरकारों की 'रामाय स्वस्ति... रावणाय स्वस्ति...' के जाप ने मामले को लटकाए रखने के महायज्ञ में हमेशा आहुति देने का काम किया। दशक पर दशक बीतते चले गये और श्री काशी विश्वनाथ के भक्त एक दर्द के साथ बाबा के प्रति अपना भक्तिभाव यथावत रखते हुए खून के घूंट पीते रहे। ऐसा नहीं है कि श्री काशी विश्वनाथ मंदिर के विस्तारीकरण के लिए इसके पहले कभी कोई प्रयास नहीं किये गये। प्रयास हुए। श्री काशी विश्वनाथ मंदिर के गर्भगृह के ठीक पीछे संकरी गैलरी और ज्ञानवापी कूप की ओर जाने वाली पतली गली के बीच खड़ी एक दीवार को आज से कई बरस पहले हटा कर बाबा के परिसर को तारकेश्वर मंदिर से जोड़ दिया गया। कह सकते हैं कि इस दीवार को हटाया जाना ही श्री काशी विश्वनाथ क्षेत्र के श्री काशी विश्वनाथ धाम के रूप में उदित होने का बीजारोपण था। यहीं से शुरू होती है एक ख्वाब के हकीकत में बदलने की कहानी। इस स्वप्न को धरातल पर उतारने के केंद्र बिन्दु बनते हैं भारत के यशस्वी प्रधानमंत्री श्री नरेंद्र दामोदर दास मोदी।
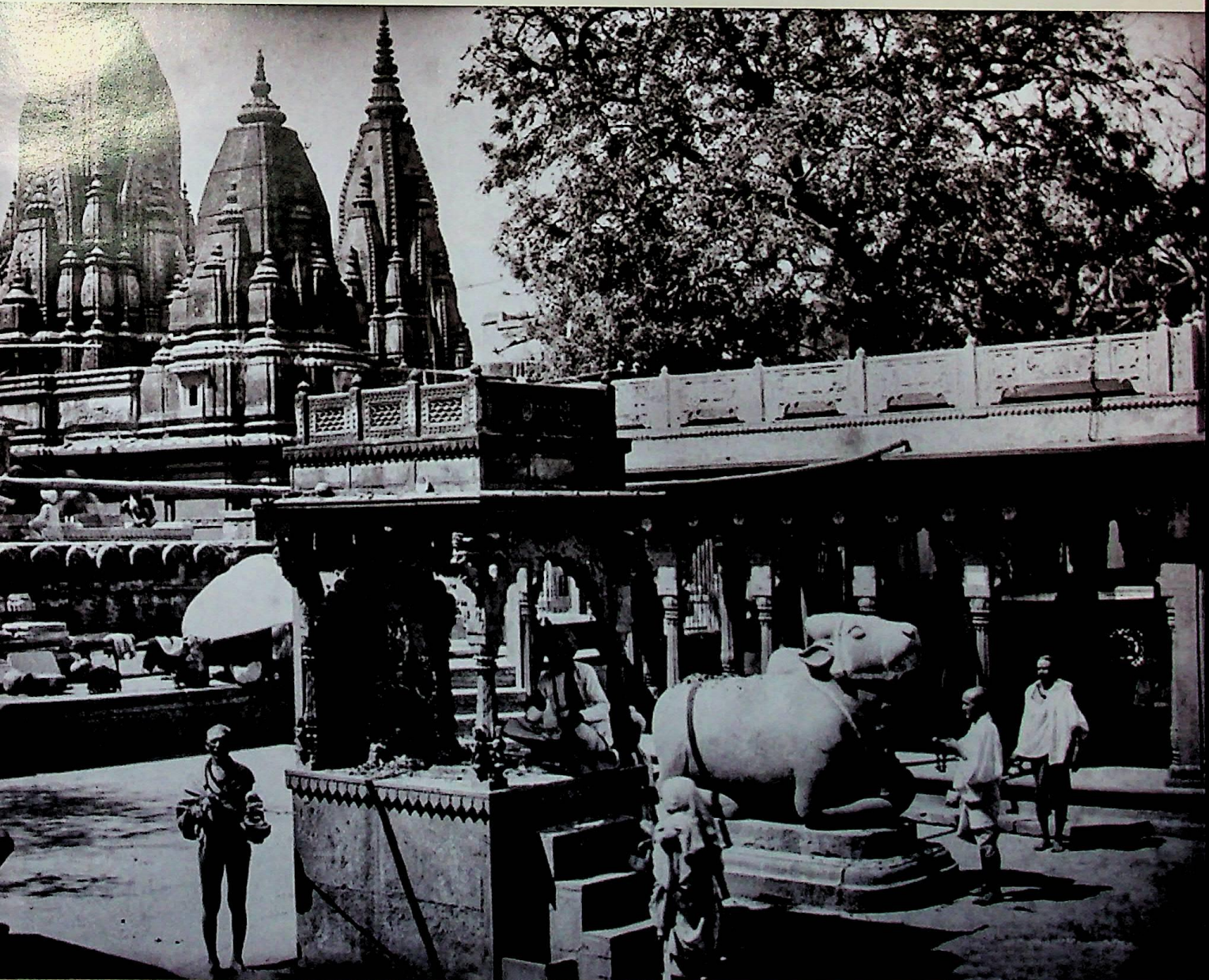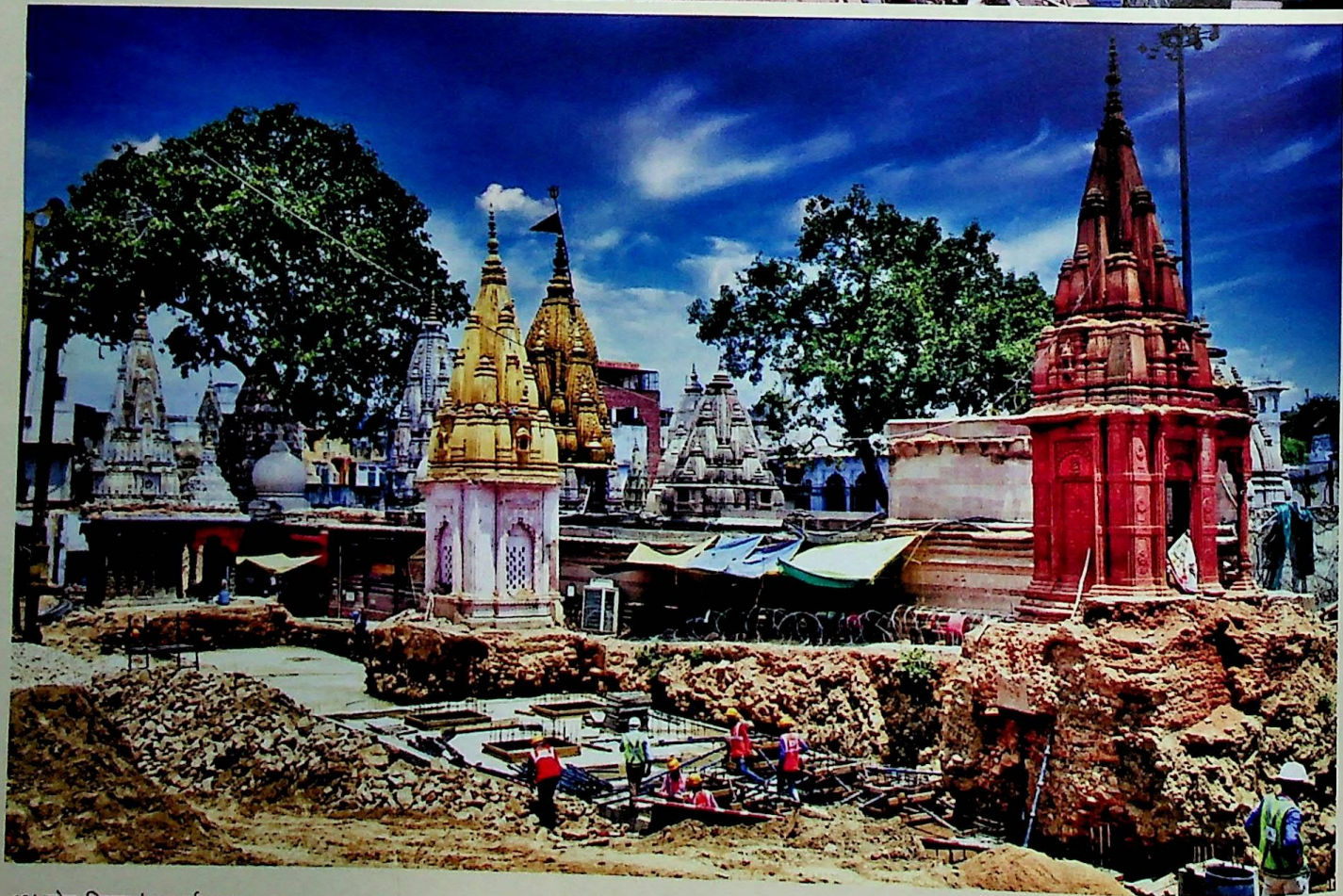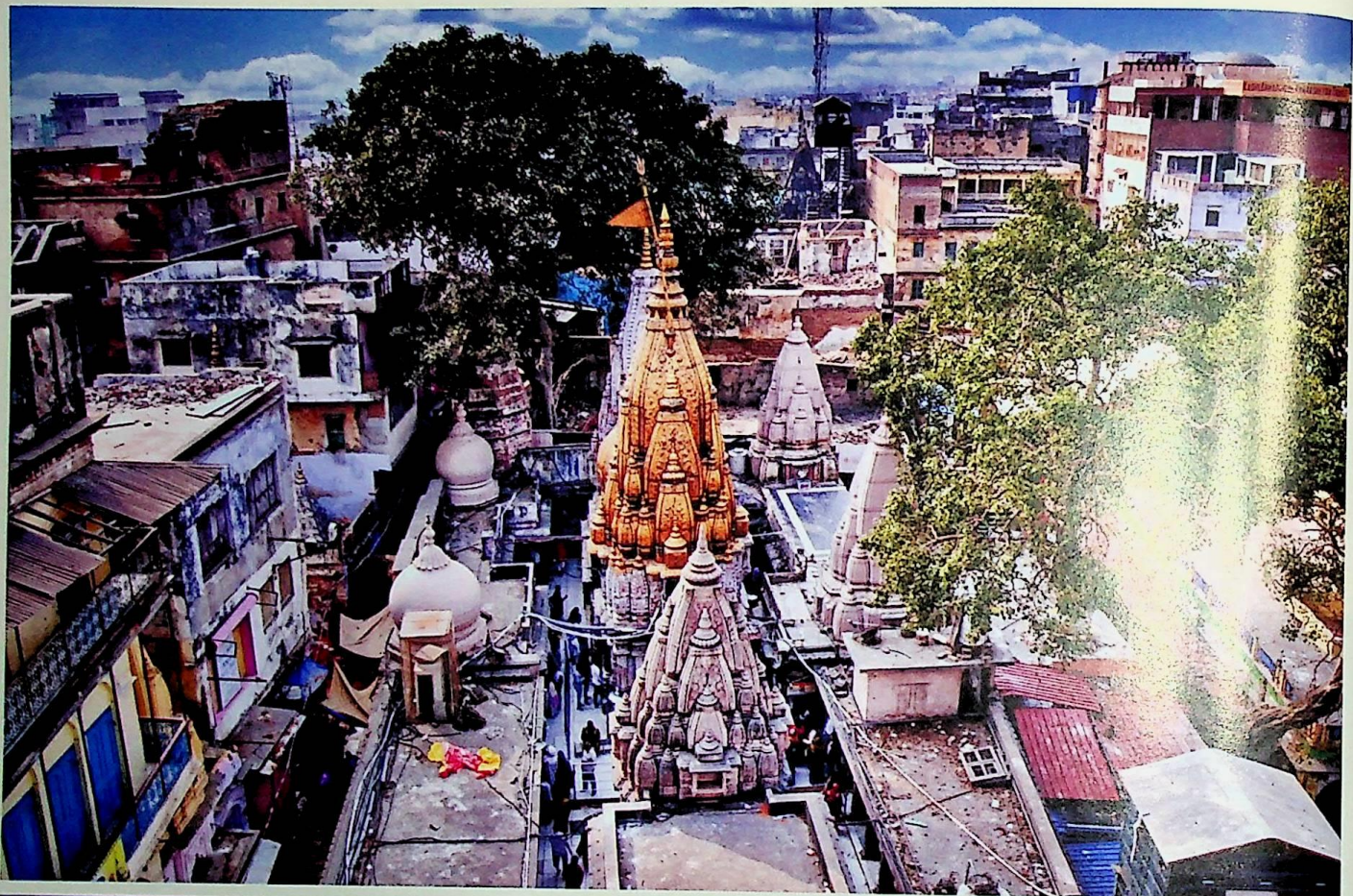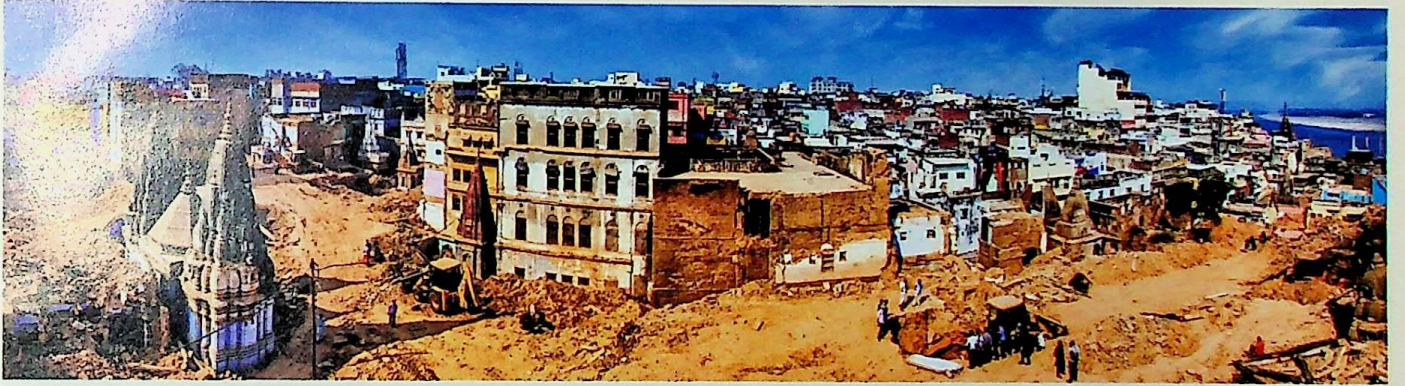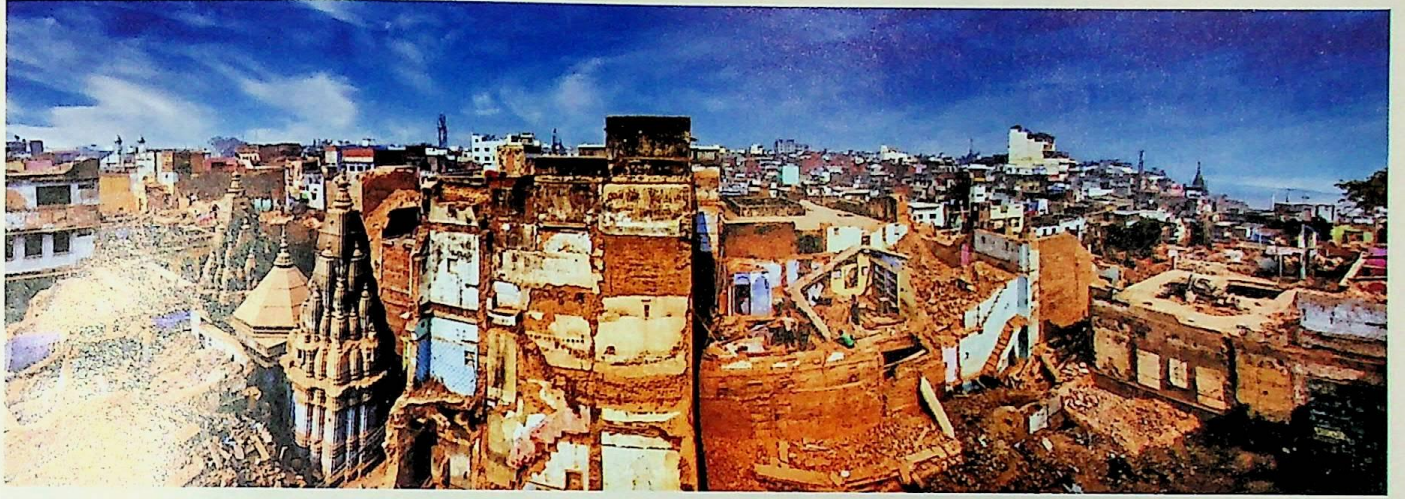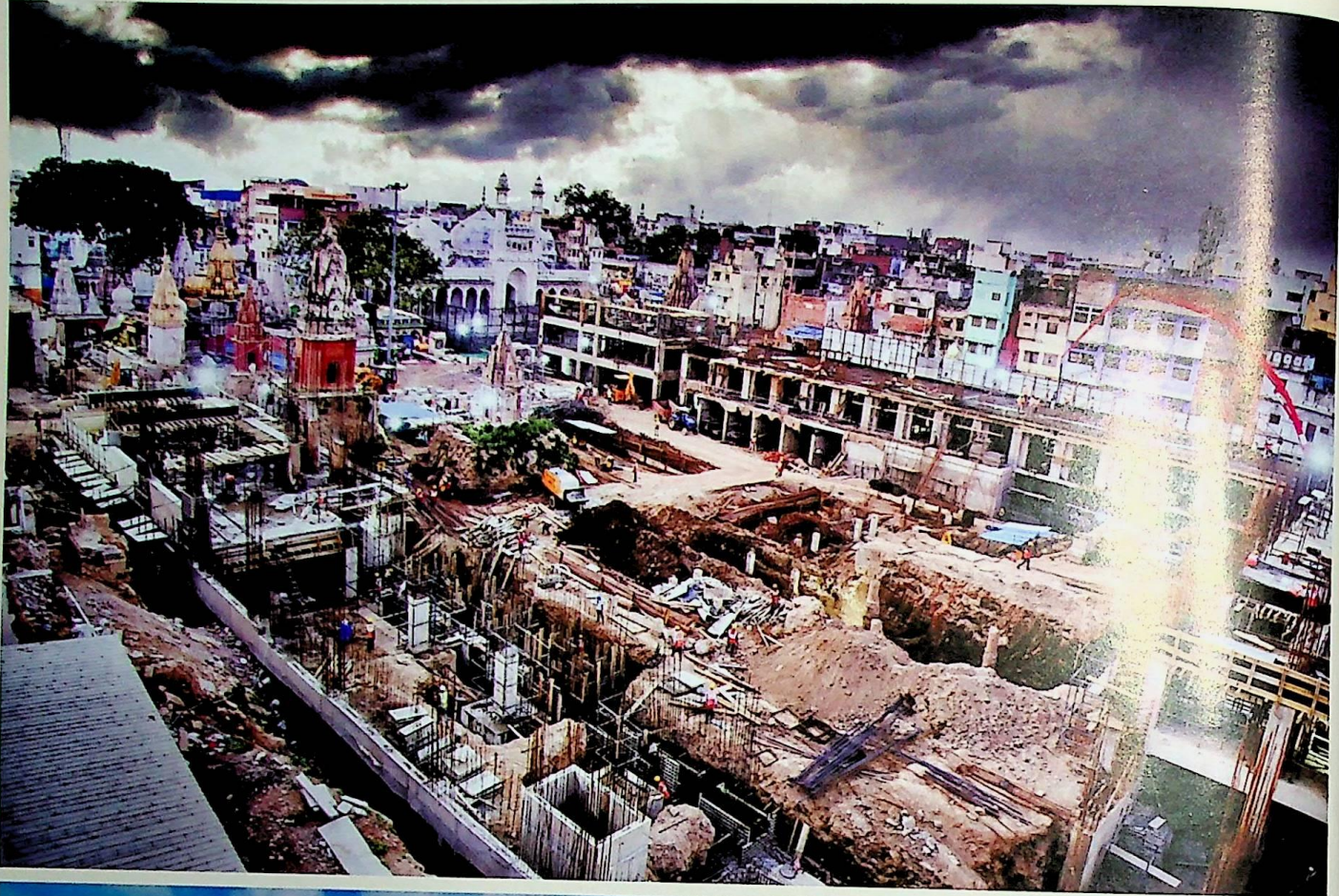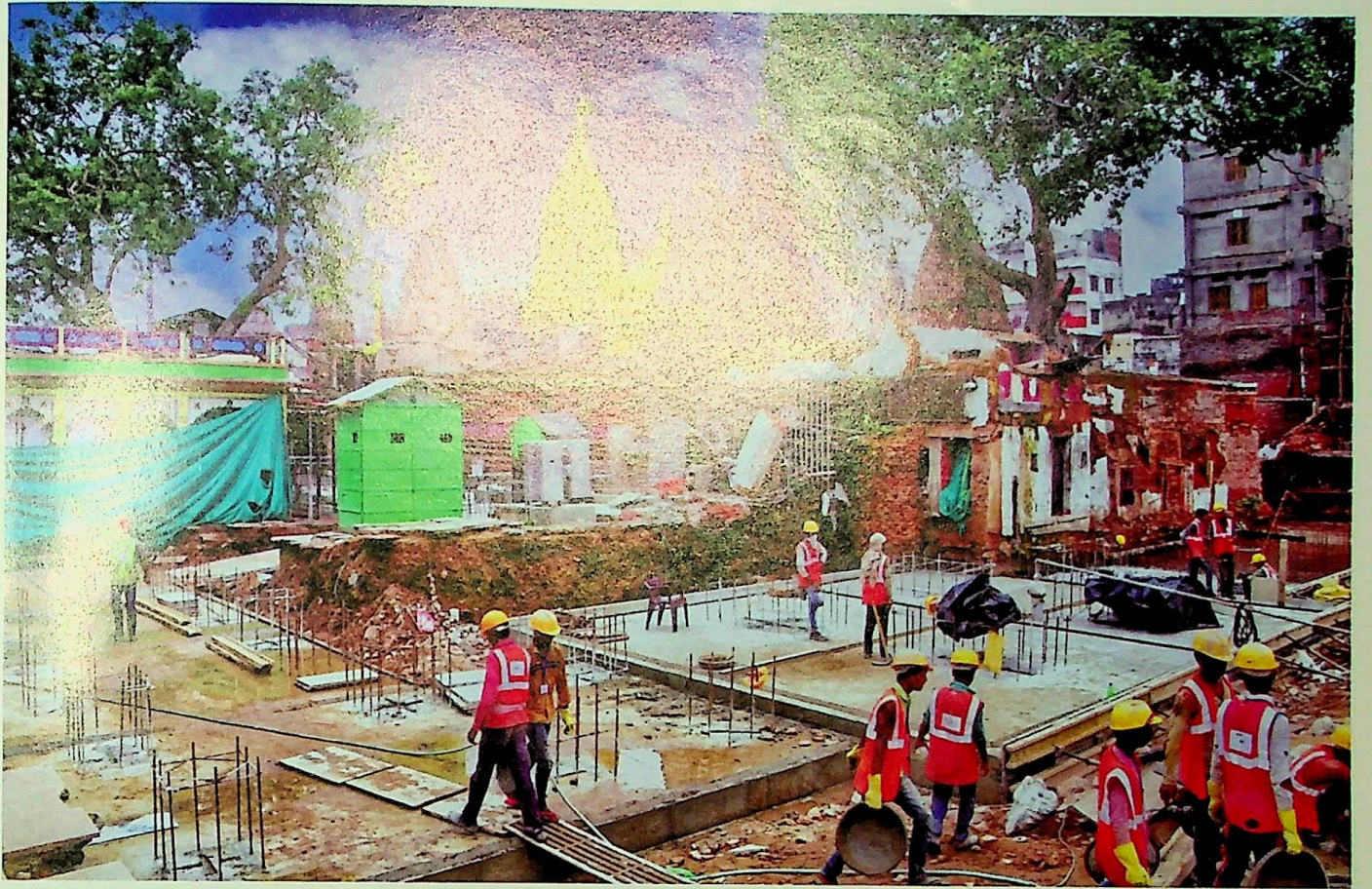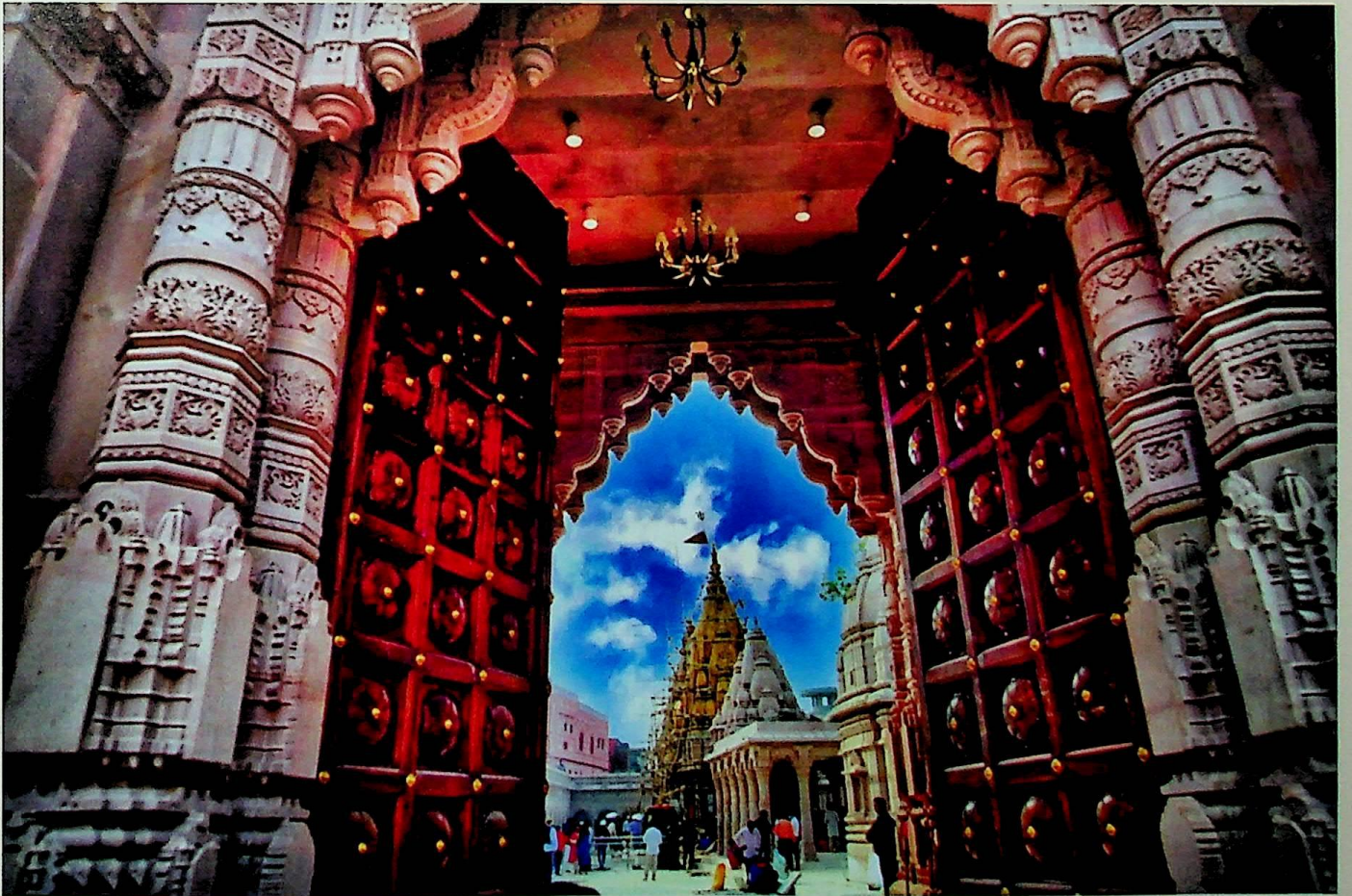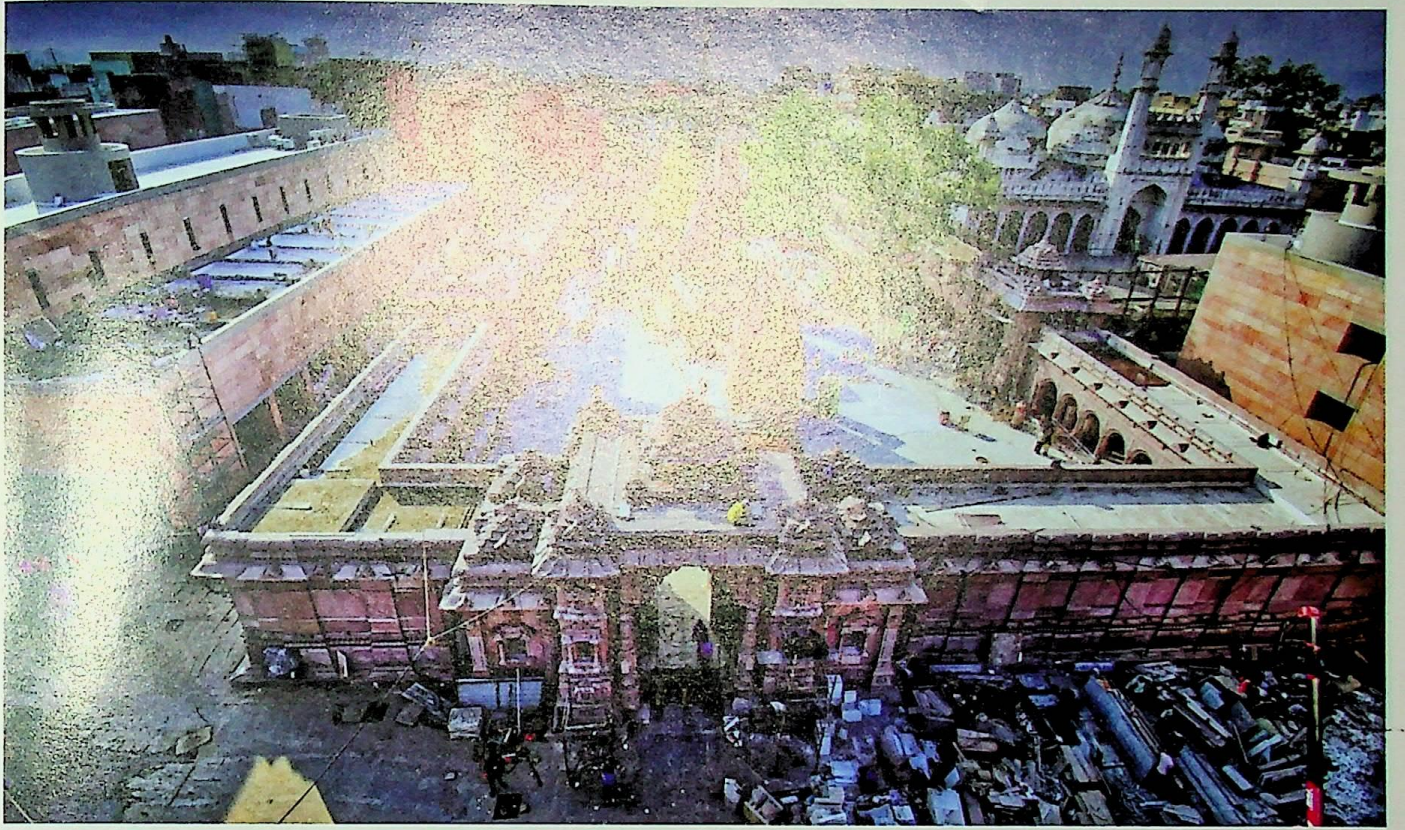
वो सन् 2014 का काल था। देश तमाम समस्याओं से जूझ रहा था। सरहद के इस पार भी और उस पार भी। देश का आम युवा उस साल होने वाले आम चुनाव में हालात में बदलाव के लिए कुछ कर गुजरने का निर्णय किये बैठा था। उधर परिवर्तन की लहर पर सवार भारतीय जनता पार्टी और उसके नायक श्री नरेंद्र मोदी भी सनातन के लिए सनातन रूप से कुछ कर गुजरने की सोच लिये चुनावी अखाड़े में थे। नरेंद्र मोदी के लिए काशी को चुनाव मैदान के रूप में चुना जाता है और भगवान भूतनाथ महेश की काशी नरेन्द्र मोदी जी को पहली बार सांसद बना कर लोकसभा में भेजने का काम करती है। उधर भारतीय जनता पार्टी भी अपने नव प्रवेशी सांसद नरेंद्र मोदी को देश का सारथी चुन कर देश की बागडोर सौंप देती है। वस्तुतः यह भाजपा नहीं बल्कि अखंड भारत के जन जन का विश्वास था जिसने श्री मोदी को विश्व के सबसे बड़े लोकतंत्र का प्रधानमंत्री बना दिया।

प्रधानमंत्री चुने जाने के तुरंत बाद पद की शपथ लेने से पहले श्री नरेंद्र मोदी काशी आते हैं और बिना किसी तामझाम के अत्यंत सहज भाव से गंगा आरती में शामिल होते हैं। वस्तुतः यह सहभागिता इस नैत्यिक आयोजन के कर्मकांड में शामिल होना नहीं था। यह तो प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी का प्राग ऐतिहासिक काशी और भारत वर्ष के प्रति कृतज्ञता ज्ञापन था। इस देश का नायक चुने जाने के प्रति शुक्राना अदा करना था। बृहस्पतिवार, 24 अप्रैल 2014 का दिन काशी को अत्यंत भावुक कर देने वाला था। उस दिन मोदी जी ने बिना किसी लाग लपेट के कह दिया कि 'न मुझे किसी ने भेजा है, न मैं यहां आया हूं... मुझे तो मां गंगा ने बुलाया है... पहले मैं सोच रहा था कि भारतीय जनता पार्टी ने मुझे यहां भेजा है... फिर लगता था कि शायद मैं स्वयं काशी जा रहा हूं... लेकिन आज मुझे इस बात की अनुभूति हुई है कि मुझे तो मां गंगा ने यहां बुलाया है... एक बालक जैसे अपनी मां की गोद में आता है, मुझे वैसी ही अनुभूति हो रही है...' काशी को उसी दिन यह समझ में आ गया कि अब काशी के दिन बहुरने वाले हैं। सदियों के उसके घाव भरने वाले हैं। उसके तमाम सारे अरमान पूरे होने वाले हैं।

संसद की सीढ़ी चढ़ने से पहले भी लोकतंत्र की चौखट को सजदा करते हुए मोदी जी ने यह शपथ ली कि वो भारत को उसकी चेतना, उसकी आत्मा और उसका गौरव लौटा कर रहेंगे। देश में विकास की गंगा बहा कर रहेंगे। प्रधानमंत्री पद की शपथ लेने के साथ ही उन्होंने 'अच्छे दिन' की बात कर मुद्दतों से सुषुप्त पड़े आवाम को जैसे चैतन्य कर दिया। दिन बीतते गये और काशी भी सम्पूर्ण भारत के साथ प्रधानमंत्री मोदी जी के विजन के अनुरूप विकास के रास्ते पर चल पड़ी। हजारों करोड़ रुपये के तमाम प्रोजेक्ट्स पर काम शुरु हो गया। इन प्रोजेक्ट्स पर मोदी जी ने स्वयं निगरानी रखी। उनकी चाहत थी कि उनकी काशी सर्वांगीण और भविष्योन्मुखी विकास की ओर तेजी से बढ़े जरूर पर वह अपनी मौलिक पहचान कभी न खोये।

काशी में ढांचागत सुविधाएं बढ़ गयीं। सड़क, रेल और हवाई कनेक्टिविटी में कल्पनातीत सुधार हो गये। जब जीवन आसान हुआ तो कारोबार पुष्पित पल्लवित होने लगा। बिजली के तारों के जंजाल, बेशुमार गंदगी और आवारा पशुओं के लिए कुख्यात काशी की नयी सूरत नजर आने लगी। पीने को साफ पानी मुहैया होने लगा। काशी की टूरिज्म इंडस्ट्री में उछाल से जिंदगी मुस्कराने लगी। शाही नाले के इस शहर में सीवर हमेशा से नासूर बना रहा पर अब वो सब बीते दिनों की बातें हो गयीं। फलों और फूलों से लेकर साड़ी और गुलाबी मीने तक का कारोबार सात समंदर पार जाकर दूसरे मुल्क के कारोबारियों को चैलेंज देने लगा। ज्ञान का केंद्र तो काशी अर्वाचीन काल से थी पर अब वो एजुकेशन की हब कहलाने लगी। बीच में एक दौर था जब यहां चिकित्सा के क्षेत्र में अकाल सा पड़ा पर अब काशी उन जान लेवा बीमारियों का भी इलाज करने लगी जिनकी चिकित्सा भारत के चुनिंदा शहरों में ही सुलभ है। कभी हमारी खुद की फैलायी गंदगी से अटे पड़े काशी के घाट, गंगा में बहता हमारा फेंका निर्माल्य, गंगा की धार में उतराये मनुष्यों और पशुओं के शवों की भीषण दुर्गंध अब इतिहास में दर्ज हो चुके हैं। अब अविरल बहती मां गंगा की धार काशी की अध्यात्मिक आत्मा का नवस्वरूप है। मां गंगा और उसके चौरासी घाटों की स्वच्छता, उनकी सजावट और बेहतरीन चित्रकारी से सजी काशी की गलियां चिर पुरातन काशी की नूतन अभिव्यक्ति है।
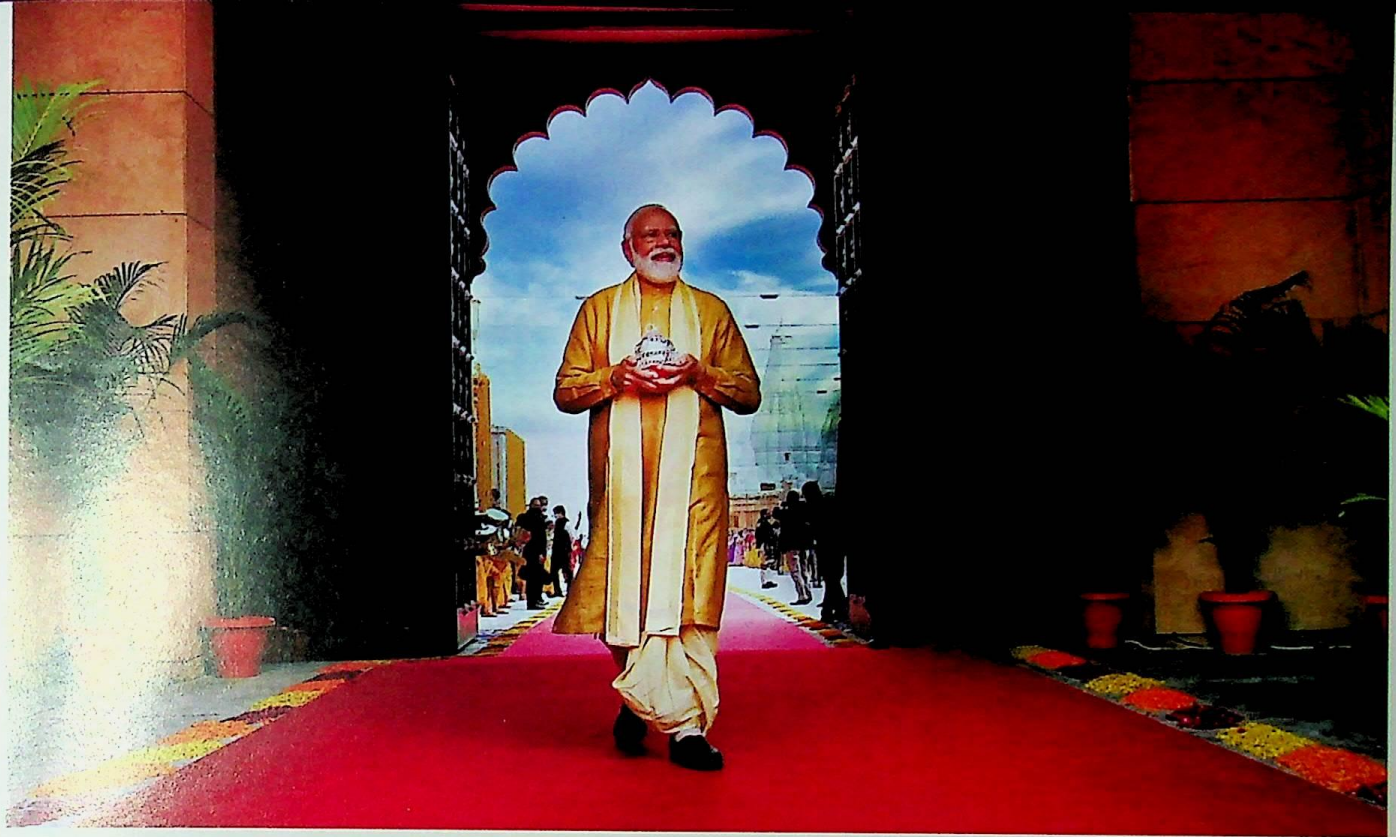
इतना सब कुछ होने के बावजूद मोदी जी के मन में एक कसक थी। उन्हें अक्सर ये लगता था कि वो एक बड़े कर्ज के बोझ तले कहीं दबे पड़े हैं। उन्हें ये महसूस होता था कि वस्तुतः काशी के लिए जो किया जाना था वो अब तक हुआ ही नहीं है। काशी को उसका सनातन स्वरूप दिये जाने का काम शेष रह गया है। मां गंगा और श्री काशी विश्वनाथ ने जिस उद्देश्य से उन्हें यहां बुलाया वो तो हुआ ही नहीं। बाबा का कर्ज तो बाकी ही रह गया। काशी खंडोक्त मंदिरों के जीर्णोध्दार का संकल्प तो अधूरा ही रह गया है। मोदी जी द्वारा हर रोज इन सबका किया जाने वाला स्मरण ही श्री काशी विश्वनाथ मंदिर परिसर को श्री काशी विश्वनाथ धाम के रूप में परिवर्तित किये जाने का जैसे संकल्प बन बैठा। इस बीच लखनऊ की सत्ता में तब्दीली होती है। मार्च 2017 में योगी आदित्यनाथ की ताजपोशी के साथ काशी में विकास की गति और तेज हो जाती है।

उधर देश की सांस्कृतिक धरोहरों और आस्था के प्रतीकों को भविष्य की पीढ़ी को सहेजने की शपथ लेने वाले मोदी जी एक खास दिन उत्तर प्रदेश के मुख्यमंत्री योगी आदित्यनाथ, काशी के तमाम जनप्रतिनिधियों, उत्तर प्रदेश सरकार के तमाम मंत्रियों और प्रशासनिक अफसरों को दिल्ली तलब कर श्री काशी विश्वनाथ धाम के नव निर्माण की घोषणा करते हैं। वो श्री काशी विश्वनाथ धाम की रूपरेखा उनके सामने खींचते हैं। तकरीबन पूरी रात चली इस गोपनीय बैठक में शामिल होने वाले लोग एक ख्वाब के हकीकत में बदले जाने की दास्तां का साक्षी बनते हैं। प्रधानमंत्री का यह कहना कि कोश की चिंता मत करो, उसे मुझ पर छोड़ो, बस आप अपनी जिम्मेदारी निभा दो, सबको उर्जा से लबरेज कर जाता है। सबके सब जैसे संकल्पित हो जाते हैं कि श्री काशी विश्वनाथ धाम हर हाल में बनाना ही है। बैठक में श्री काशी विश्वनाथ धाम कॉरीडोर में आने वाले 297 भवनों के क्रय की एक रूपरेखा तय होती है और शुरू हो जाती है एक स्वप्निल परियोजना।

कहते हैं कि देश और प्रदेश में किसी की भी सरकार हो पर काशी में बस एक की ही सरकार होती है। उस डमरू वाले की। यहां तो बस अजातारि शिव की ही चलती है। स्कंद पुराण के काशी खंड में स्वयं अमृतेश्वर शिव ने कहा भी है कि बिना मेरी इच्छा के काशी को कोई भोग नहीं सकता। यहां जो कुछ भी होता है वो सब महादेव की इच्छा से ही होता है। कहने का मतलब ये कि शायद श्री काशी विश्वनाथ धाम का निर्माण भी उमापति महादेव की चाहत थी। क्योंकि कोरोना महामारी के दौरान भी धाम के निर्माण की अनवरत यात्रा कभी रुकी नहीं। इस गतिशीलता ने काशी के मिजाज को भी साबित किया कि बाबा की ये नगरी कभी थमती नहीं... कभी थकती नहीं... कभी रुकती नहीं...। एक वक्त था जब काशी आने वाले आस्तिक गंगा से जल भर कर बाबा का अभिषेक करते थे। बाद के कालखण्ड में अनियंत्रित आबादी और बेतरतीब निर्माण ने बाबा के परिसर को तो संकुचित किया ही, ज्योतिर्लिंग के सिरमौर श्री काशी विश्वनाथ के पारम्परिक अभिषेक का तरीका ही बदल दिया। लोक आस्था की इस अमूल्य परम्परा और काशी के गौरव को पुनर्जीवित करने की इच्छा तो सबमें थी लेकिन यक्ष प्रश्न ये था कि बिल्ली के गले में घंटी कौन बांधेगा ? इसके लिए देश को जिस दृढ़ संकल्प और निर्णायक नेतृत्व की जरूरत थी वो तत्कालीन सरकारों में नहीं थी। समय के साथ सरकार बदली, नेतृत्व बदला और बदल गयी एक पूरी तस्वीर। नरेन्द्र मोदी जैसे अप्रतिम नायक के होने पर हर ख्वाब के मुमकिन होने का यकीन पैदा हो गया।

दरअसल, काशी ने युगों को जिया है। काशी ने इतिहास को बनते बिगड़ते देखा है। न जाने कितने कालखंड आये और चले गये। न जाने कितनी सल्तनतें आयीं और चली गयीं लेकिन काशी अपनी जगह शाश्वत बनी रही। यहां की मिट्टी की तासीर शेष धरा से कुछ अलग है। यहां आने वाला हर शख्स बनारसी हो जाता है। वो काशिका में बतियाता है। अपनी काशी को उन्नत बनाने के सपने देखता है। तो, अपने मोदी जी ने भी यह स्वप्न देखा कि बाबा के आशीर्वाद से कुछ ऐसा कर जाएं जो अप्रतिम, अलौकिक और अद्वितीय हो। काशी आने वाला श्रद्धालु जब बाबा के दर्शन को आये तो उसका मन प्रफुल्लित हो जाये। मोदी जी जानते हैं कि काशी में जागृति ही जीवन है। यहां मृत्यु ही मंगल है। सत्य ही संस्कार है। प्रेम ही परम्परा है। वो ये भी जानते हैं कि शास्त्रों ने काशी के लिए नेति नेति कहा है। यानि काशी का जो कुछ बखान किया गया उसे उतना ही न समझो। काशी शिवमयी है। काशी ज्ञानमयी है। काशी महादेव की देह है। ये वो नगरी है जहां आदिशंकराचार्य को डोमराजा की पवित्रता से प्रेरणा मिलती है। इसका न कोई आदि है और न अंत है। ये हमेशा अक्षुण्ण रहने वाली देवभूमि है।

तो मोदी जी श्री काशी विश्वनाथ धाम को बनाने के लिए हर कुर्बानी देने को तैयार हो गये। उनकी कर्मठता को देख सूबे की योगी सरकार और उनकी मशीनरी भी सक्रिय हो उठी। दिन रात काम होने लगा।

काम शुरू ही नहीं हुआ, वक्त पर पूरा भी हो गया। इसमें सबका अहम योगदान था लेकिन इस पूरी परियोजना में सबसे अप्रतिम योगदान था श्री काशी विश्वनाथ मंदिर परिक्षेत्र में रहने वाले लोगों का। इस परिक्षेत्र के रहिवासियों का। यकीनन उन्हें उनके भवन की उचित कीमत दी गयी लेकिन क्या कोई अपनी जन्म भूमि किसी भी कीमत पर छोड़ता है ? क्या कोई अपनी पैतृक विरासत को इस तरह से किसी मंदिर के लिए त्याग देता है ? क्या कोई शख्स सरकार की परियोजना के एवज में अपनी मिट्टी को भूल सकता है ? लेकिन वाह रे काशी वासी... बाबा के लिए अपने जीवन की तमाम स्मृतियों को, अपनी तमाम विरासत को और अपनी तमाम सुविधाओं को कुर्बान कर दिया। ये सब भी शायद उस इंदुभूषण महादेव की प्रेरणा से हुआ था। क्योंकि इस परियोजना के लिए करीब तीन सौ भवनों को अधिग्रहित किये जाने या इस क्षेत्र में रहने वालों के पुनर्स्थापन की कार्रवाई के दौरान एक भी कानूनी अड़चन नहीं आयी। कोई मुकदमेबाजी नहीं हुई। श्री काशी विश्वनाथ धाम बनाने की योजना से लेकर उसके शिल्प और वास्तु की बारीकियों तक में श्री नरेन्द्र मोदी जी ने लगातार अपने सुझाव रखे। अपने इनपुट्स दिये। उनके क्रियान्वयन की कड़ी निगरानी की। दिव्यांगजनों की सुविधा का खयाल रखा। काशी विश्वनाथ मंदिर से कभी चोरी हो गयी माता अन्नपूर्णा के विग्रह को सात समंदर पार से वापस हस्तान्तरित कराया। श्री काशी विश्वनाथ धाम में उसकी पुनः प्राण प्रतिष्ठा करायी। प्रधानमंत्री के निजी प्रयासों के कारण हुए इन सब कामों से सनातन आस्था तो गौरवान्वित हुई ही इसके अलावा काशी को उसकी खोई हुई विरासत भी मिली।

इन सबमें एक अच्छी बात ये थी कि प्रधानमंत्री ने इन सबका श्रेय कभी स्वयं नहीं लिया। उन्होंने हमेशा कहा कि काशी के विकास के लिए जो कुछ भी हो रहा है, वह सब महादेव के आशीर्वाद और बनारस की जनता के प्रयास से हो रहा है। श्री मोदी अक्सर कहते हैं कि काशी के लोग महादेव के गण है। वो सब भगवान शिव के प्रतिरूप हैं। उनका यह कहना काशी को भावुक कर जाता है कि काशी में विकास की धार का अविरल बहना साम्ब सदाशिव की चाहत है। इस चाहत का उत्कर्ष बिंदु श्री काशी विश्वनाथ धाम के निर्माण का निर्णय है। शुरू में जब धाम का प्रारूप बना तब इस इलाके में बसी घनी आबादी और इंच–दर–इंच की बसावट को देख इस योजना को जमीनी तौर पर क्रियान्वित कर पाना असम्भव लगता था। भला हो स्पष्ट वक्ता श्री मोदी जी का जिन्होंने इससे जुड़ी हर समस्या का समाधान खुद निकाला। यह पहली बार था जब किसी प्रधानमंत्री ने किसी मंदिर निर्माण परियोजना का थ्रीडी मॉडल अपने दिल्ली स्थित ऑफिस में अपनी आंखों के सामने रखा। उसे न सिर्फ हर रोज निहारा बल्कि हर रोज उसकी प्रगति का ऑनलाइन निरीक्षण किया। अपडेट्स लिये और निर्देश दिये। इसका नतीजा निकला कि सनातन आस्था, अध्यात्मिक चेतना, वैदिक मीमांसा और भारतीय वांङमय का प्रतिरूप श्री काशी विश्वनाथ धाम अत्यंत अल्प समय में बन कर तैयार हो गया। श्री मोदी के प्रयास के कारण ही अहिल्याबाई होल्कर से लेकर महात्मा गांधी तक के सपने को धरातल पर उतारा जा सका।

इस परियोजना के निर्माण के दौरान कई दिलचस्प बातें हुईं। उसमें सबसे अहम था इस दौरान चालीस से ज्यादा प्राचीन ऐतिहासिक मंदिरों का मिलना। वस्तुतः सबकी सब पुरातात्विक महत्व की अमूल्य धरोहर हैं। इन मंदिरों का मिलना और उसे संजोया जाना इस बात की जमानत है कि नव निर्माण के दौरान भी पुरातात्विक चीजों को अक्षुण्ण रखा गया। उसकी अध्यात्मिक आत्मा को वैसे ही बरकरार रखा गया। मंदिर में सुविधा और व्यवस्था का आधुनिकीकरण जरूर किया गया पर श्री काशी विश्वनाथ धाम की सारी प्राचीन परम्पराओं को वैसे ही बनाये रखा गया है। सच कहें तो श्री काशी विश्वनाथ धाम को त्रिपथगा मां गंगा से फिर से जोड़ने वाला यह कार्य पूरे विश्व में काशी को एक नयी पहचान दिलाने वाला है। आने वाले दिनों में श्री काशी विश्वनाथ का यह धाम सिर्फ काशी ही नहीं बल्कि सम्पूर्ण भारत की नवचेतना, सामाजिक समरसता और अध्यात्मिक चेतना का केंद्र बनने वाला है।

श्री काशी विश्वनाथ मंदिर का पुराना परिसर महज तीन हजार वर्ग फीट में था और आज श्री काशी विश्वनाथ धाम पांच लाख वर्ग फीट में विस्तार पाकर पूरी दुनिया को हैरत में डाले हुए है। कहते हैं कि श्री काशी विश्वनाथ मंदिर के शिखर और मंदिर के मंडप के गुम्बद को स्वर्ण मंडित करने के लिए पंजाब के तत्कालीन महाराजा रणजीत सिंह ने चौंसठ मन सोना बाबा को समर्पित किया था। उस जमाने के तौल में क्विंटल नहीं मन और किलोग्राम नहीं सेर हुआ करता था। एक मन में चालीस सेर का वजन हुआ करता था। तब का सेर 933 ग्राम का हुआ करता था और आज का किलोग्राम एक हजार ग्राम का हुआ करता है। यानि तब 2389 किलोग्राम सोना महाराजा रणजीत सिंह ने बाबा को अर्पित किया था। आज बाबा के किसी दक्षिण भारतीय भक्त ने इससे भी कहीं बहुत ज्यादा सोना बाबा को गुप्तदान कर श्री काशी विश्वनाथ के गर्भगृह के अंदर और बाहर की दीवारों को स्वर्ण मंडित करा दिया है। आज पूरी दुनिया इन सबको देख कर चमत्कृत है... समूचा सनातन आल्हादित है... इतराती सी काशी का मन गदगद है... युगान्तरकारी कायाकल्प पाकर स्वयं कामेश्वर शंकर भाव विहल हैं... वो तारकेश्वर मणिकर्णिका घाट से लेकर ज्ञानवापी कूप और अपने ही गर्भगृह के बीच डोल रहा है... वो साम्ब सदाशिव अपने ही डमरू के डिमडिम निनाद में मस्त होकर नृत्य कर रहा है... काशी आने वाले हर आगत का स्वागत कर रहा है... श्री काशी विश्वनाथ धाम आने वाले हर आस्तिक को मोक्ष प्रदान करने का वचन दे रहा है...

नमः पार्वतीपतेः हर हर महादेव... हर हर महादेव... हर हर महादेव...।
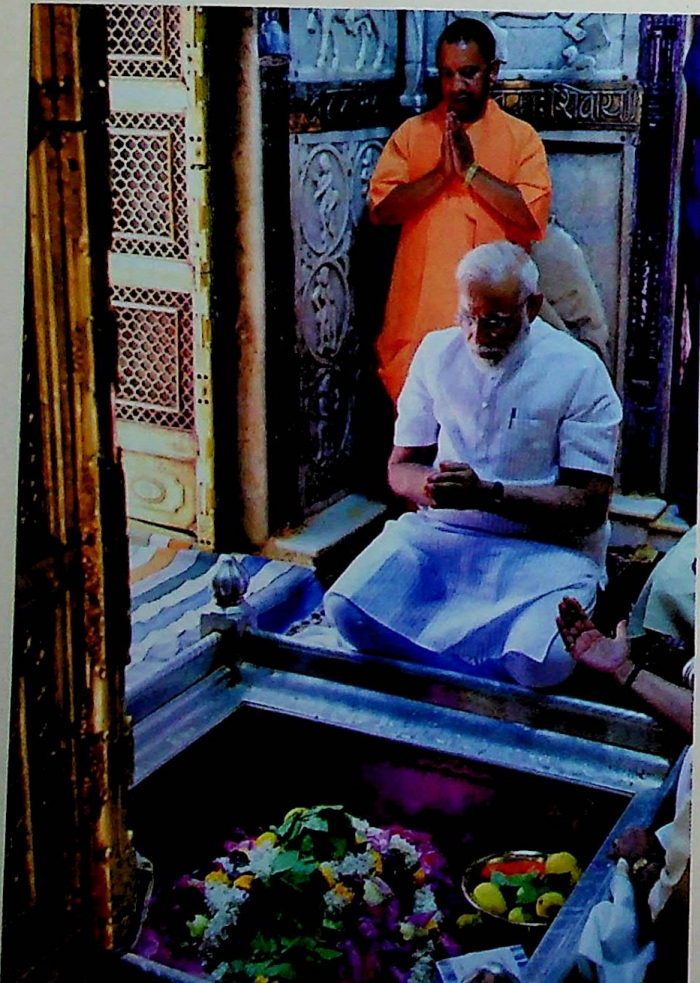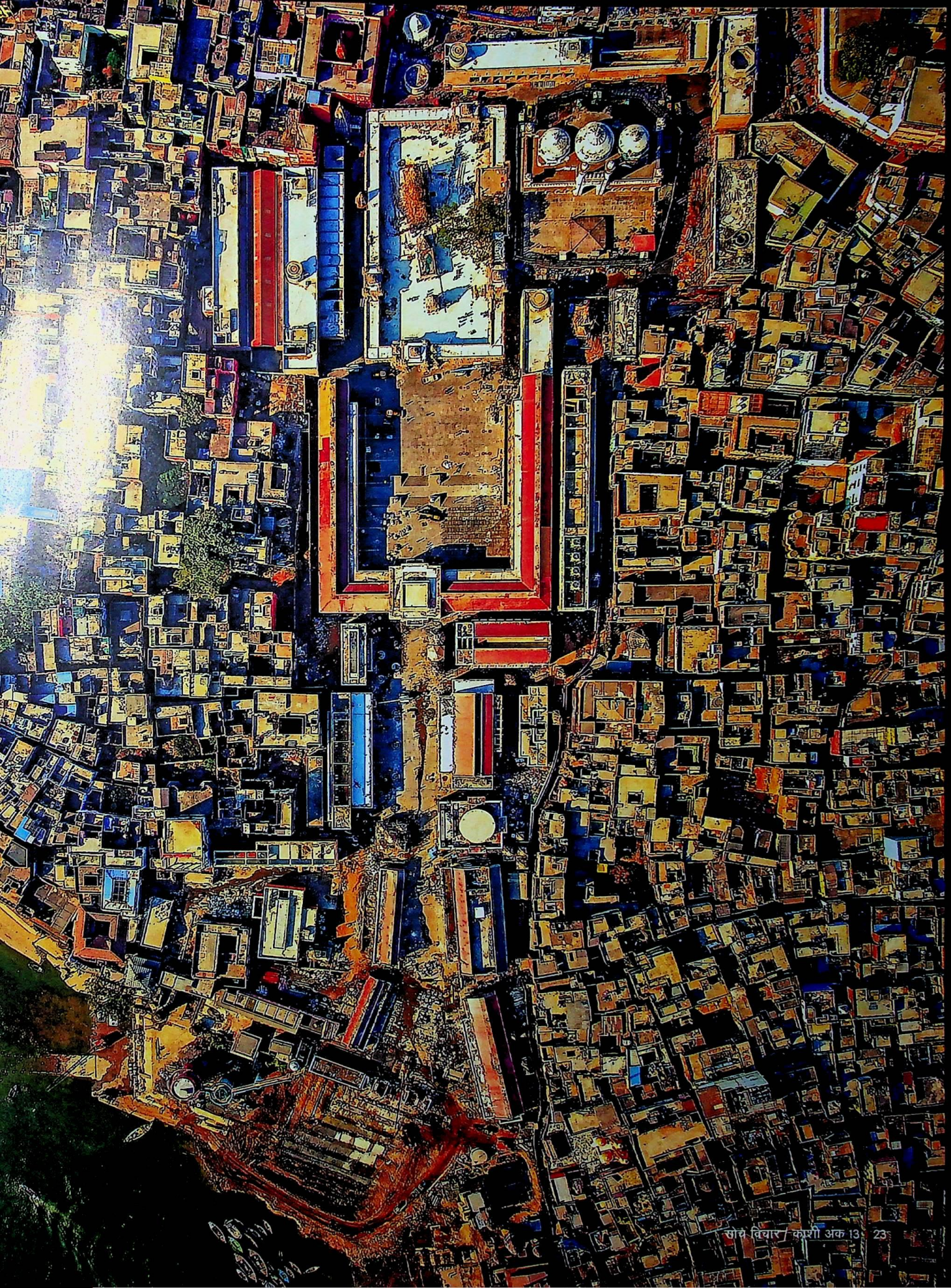
श्री काशी विश्वनाथ धाम नूतन रूपा... भव्य स्वरूपा...

श्री काशी विश्वनाथ धाम के इस नूतन रूप और भव्य स्वरूप की शायद किसी ने कभी कल्पना भी नहीं की होगी। तंग गलियों से होकर श्री काशी विश्वनाथ के संकुचित परिसर में दर्शन पूजन का एक कड़वा अनुभव था। प्रति सोमवार, मास शिवरात्रि, महाशिवरात्रि, श्रावण मास के प्रत्येक दिन और सोमवार, सोमवती अमावस्या, प्रत्येक एकादशी, रंगभरी एकादशी और प्रदोष पर्व पर होने वाली धक्का मुक्की के बीच बाबा की एक झलक पा जाना भी अलौकिक जरूर होता था पर हर सनातनी के मन में इस बात की टीस भी होती थी कि काश ! बाबा का यह मुक्तांगन थोड़े से विस्तार के साथ होता तो शायद ऐसी स्थिति न होती। देखिये कि उस समय भी सनातनी आस्था सिर्फ 'थोड़ा' सा ही विस्तार चाह रही थी। सब जानते हैं कि सनातन आस्था हमेशा से 'थोड़ा है, बस थोड़े की जरूरत है' के यकीन के साथ जीती रही। उसे बहुत कुछ या सब कुछ नहीं चाहिए होता। वसुधैव कुटुम्बकम् का सूत्र पकड़े आस्तिक लोग 'साईं इतना दीजिए जामे कुटुम्ब समाय' की अवधारणा लिये जीते रहे। पर बाबा जब भक्तों पर मेहरबान हुए तो इतना दिये कि उन्होंने श्री काशी विश्वनाथ धाम को अपरूप सौन्दर्य के साथ इतना विस्तारित [illegible] दिया [illegible] के सदाशिव महादेव का इतना बड़ा मंदिर दुनिया में और कोई [illegible] है [illegible] नहीं। श्री काशी विश्वनाथ धाम का मुख्य आकर्षण मंदिर [illegible] में [illegible] र्मित भवन तथा आध्यात्मिक और धार्मिक महत्त्व की संरचन[illegible] [illegible] आज हम भ्रमण करते हैं पुरातन भव्यता के साथ बने श्री [illegible] थ धाम के दिव्य परिसर का...

धाम का मुख्य परिसर

श्री काशी विश्वनाथ धाम के नूतन स्वरूप का मुख्य आकर्षण केंद्र मंदिर का विशाल परिसर है। इसके प्रदक्षिणा पथ पर चार खूबसूरत विशाल द्वारों का निर्माण किया गया है। श्री काशी विश्वनाथ धाम के निर्माण में चुनार के लाल बलुआ पत्थर और मकराना संगमरमर का उपयोग किया गया है। मंदिर परिसर के निर्माण में देवभूमि के वास्तु को दृष्टिगत रखते हुए काशी के अध्यात्मिक भाव को समाहित किया गया है। बाबा धाम में निर्मित सभी भवनों को मेहराब, बेलबूटे, स्तम्भों के अलावा प्रस्तर की नक्काशीदार जालियों से सुसज्जित किया गया है। प्रदक्षिणा मार्ग की सज्जा कुछ इस तरह से की गयी है कि धाम के परिसर में प्रवेश के साथ ही आस्ति[illegible] [illegible] दिव्यता की अनुभूति हो।

[illegible]शी सुवि[illegible] केन्द्र

[illegible] काशी [illegible]थ धाम में भारत के विभिन्न प्रान्तों से लोग दर्शन पूजन [illegible] इन यात्रियों के सामने भाषा से लेकर सुरक्षा तक की [illegible] समस्याएं होती हैं। यात्री सुविधा केन्द्र श्री काशी विश्वनाथ [illegible] हर व्यक्ति की हर तरह की समस्याओं का समाधान करेगा। उन्हें उनकी ही भाषा में हर तरह की जानकारी मुहैया करायेगा। उन्हें हर तरह की सुविधा सुलभ करायेगा। यात्री सुविधा केन्द्र में श्रद्धालुओं के लिए सिक्योरिटी चेकिंग से लेकर लॉकर तक की सुविधा उपलब्ध है।

शॉपिंग कॉम्प्लेक्स

श्री काशी विश्वनाथ मंदिर परिसर के आसपास श्रध्दालुओं को पहले पूजन सामग्री से लेकर अन्यान्य तरह के सामानों की खरीद में कई तरह की दिक्कत होती थी। इन दिक्कतों में रेट से लेकर सामान की क्वालिटी तक की समस्याएं शामिल थीं। अब धाम परिसर में ही शॉपिंग कॉम्प्लेक्स बन जाने से श्रद्धालुओं को रूद्राक्ष और स्फटिक की माला, शंख, ताम्बे और पीतल के कलश, पूजा के थाल, जयघंट, घंटी, नर्मदा, बाण लिंग, उसके लिए पीतल का अर्घा, देवी देवताओं के विभिन्न धातुओं में बने विग्रह, आवश्यक पूजन सामग्री, दान की वस्तुएं तथा अन्य उपयोगी सामान एक ही जगह में मिल जाएंगे। इससे काशी के कारोबार और रोजगार में अभिवृद्धि होगी।

बाबा नाम केवलम्...

489-05

करोड़ रूपए मन्दिर परिसर का विस्तार करने के लिए भवन क्रय में खर्च किये गये।

386-70

करोड़ रूपए श्री काशी विश्वनाथ धाम परिसर में विभिन्न भवनों के निर्माण पर खर्च किये गये।

40

मन्दिर कॉरिडोर निर्माण के दौरान आस–पास के घरों से विग्रह सहित मिले। इन मन्दिरों का जीर्णोद्धार किया गया।

3000

वर्ग फुट में पहले हुआ करता था श्री काशी विश्वनाथ मंदिर का परिसर।

500000

वर्ग फुट से भी ज्यादा क्षेत्रफल में अब विस्तारित है श्री काशी विश्वनाथ धाम।

काशी गैलरी

श्री काशी विश्वनाथ धाम में 375 वर्गमीटर में बनी है काशी गैलरी। यह गैलरी मल्टीपरपज हॉल और सिटी म्यूजियम के बीच करुणेश्वर महादेव मंदिर के पास बना है। गैलरी की अंदरूनी दीवारों पर चित्रों के माध्यम से सनातन धर्म के अध्यात्मिक और धार्मिक आख्यानों का उल्लेख किया गया है।

काशी संग्रहालय

दरअसल, यह सनातन परम्परा से जुड़ा एक दिव्य संग्रहालय है। 1143 वर्गमीटर में विस्तारित यह संग्रहालय काशी गैलरी और मुमुक्षु भवन के बीच में स्थित है। इस दो मंजिले भवन में एक रिसेप्शन भी है, जो यहां आने वाले श्रध्दालुओं के स्वागत के अलावा उन्हें हर तरह की जानकारी उपलब्ध कराता हैं। इस भवन में कई बड़े कमरे और छोटे कमरे हैं। यह भवन यात्रियों को सनातन से जुड़ी प्राचीन वस्तुओं के बारे में जानकारी देने की दृष्टि से बनाया गया है।

मुमुक्षु भवन

काश्यां मरणान् मुक्ति की सूक्ति काफी प्राचीन है। मोक्ष प्राप्ति के लिए काशी आने वाले लोगों की तादाद भी काफी है। मुमुक्षु भवन वस्तुतः श्री काशी विश्वनाथ धाम आने वाले सभी वृद्ध यात्रियों और अस्वस्थ लोगों की देखभाल के लिए निर्मित किया गया है। यह तीन मंजिला भवन 1161 वर्गमीटर में बनाया गया है। मंदिर चौक के भव्य द्वार के ठीक पास में स्थित है मुमुक्षु भवन। भवन में बेड के अलावा अन्य सुविधाओं की भी व्यवस्था की गयी है। इस भवन में सीढ़ी के अतिरिक्त वृद्ध और मरीजों की सुविधा के लिए लिफ्ट, रिसेप्शन, शौचालय की भी व्यवस्था की गयी है।

अतिथिशाला

यह दो मंजिला गेस्ट हाउस 1962 वर्गमीटर में बना हुआ है। इस अतिथिशाला का निर्माण सिर्फ श्री काशी विश्वनाथ धाम आने वाले यात्रियों और दर्शनार्थियों के ठहरने के लिए किया गया है।

वैदिक केन्द्र

इस दो मंजिले भवन का निर्माण सनातन वैदिक परम्परा, भारतीय वांङमय और मीमांसा के संरक्षण के लिए किया गया है। 986 वर्गमीटर में निर्मित वैदिक केंद्र भवन यात्री सुविधा केन्द्र–3 के सामने स्थित है। भवन का उपयोग आध्यात्मिक प्रदर्शनी, सभा और समारोह आयोजित करने के लिए भी किया गया है।

बहुउद्देशीय हॉल

यह दो मंजिला भवन 976 वर्गमीटर में निर्मित है। यह भवन मणिकर्णिका चौराहे के पास स्थित है। बहुउद्देशीय हॉल का निर्माण जनता के सेवा कार्यों के संचालन के लिए किया गया है। इस भवन में करीब तीन सौ लोगों के एक साथ बैठने की व्यवस्था है। इस भवन में एस्केलेटर का भी इंतजाम किया गया है।

पर्यटन सुविधा केंद्र

यह दो मंजिला केंद्र 1061 वर्गमीटर में बना हुआ है। इस केंद्र के निर्माण का उद्देश्य मणिकर्णिका घाट पर एक हॉल [illegible] कर [illegible]कड़ियों को व्यवस्थित करना तथा ऊपरी मंजिल पर यात्रि[illegible] सुविधा केन्द्र बनाकर विभिन्न प्रकार की जानकारियों को उप[illegible] है। यह केंद्र घाट परिक्षेत्र में आने वाले यात्रियों के लिए न [illegible] केन्द्र होगा, बल्कि घाटों के निकट होने के कारण व्यावसा[illegible] महत्वपूर्ण होगा।

शौचालय की सुविधा

यात्रियों की सुविधा के के लिए धाम में पुरूष [illegible] ओं के लिए अलग अलग शौचालयों का निर्माण किया गया है।

जलपान गृह

यह भवन भी दो मंजिला है। 1119 वर्गमीटर में यात्रियों की सुविधा के लिए निर्मित इस फूड कोर्ट में बैठ कर भोजन करने की सुविधा है।

अध्यात्मिक बुक स्टोर

यह बुक स्टोर दो मंजिल का है। 311 वर्गमीटर में बना यह बुक स्टोर काशी संग्रहालय और काशी गैलरी के साथ एक प्लाजा में बनाया गया है। इसमें सिर्फ अध्यात्मिक पुस्तकें ही मिलेंगी।

गंगा व्यू कैफे

यात्रियों, श्रद्धालुओं और पर्यटकों को काशी और मां गंगा का विहंगम दृश्य अवलोकित कराने के साथ–साथ अल्प जलपान के दृष्टिगत इस कैफे का निर्माण कराया गया है।

काशी गैलरी
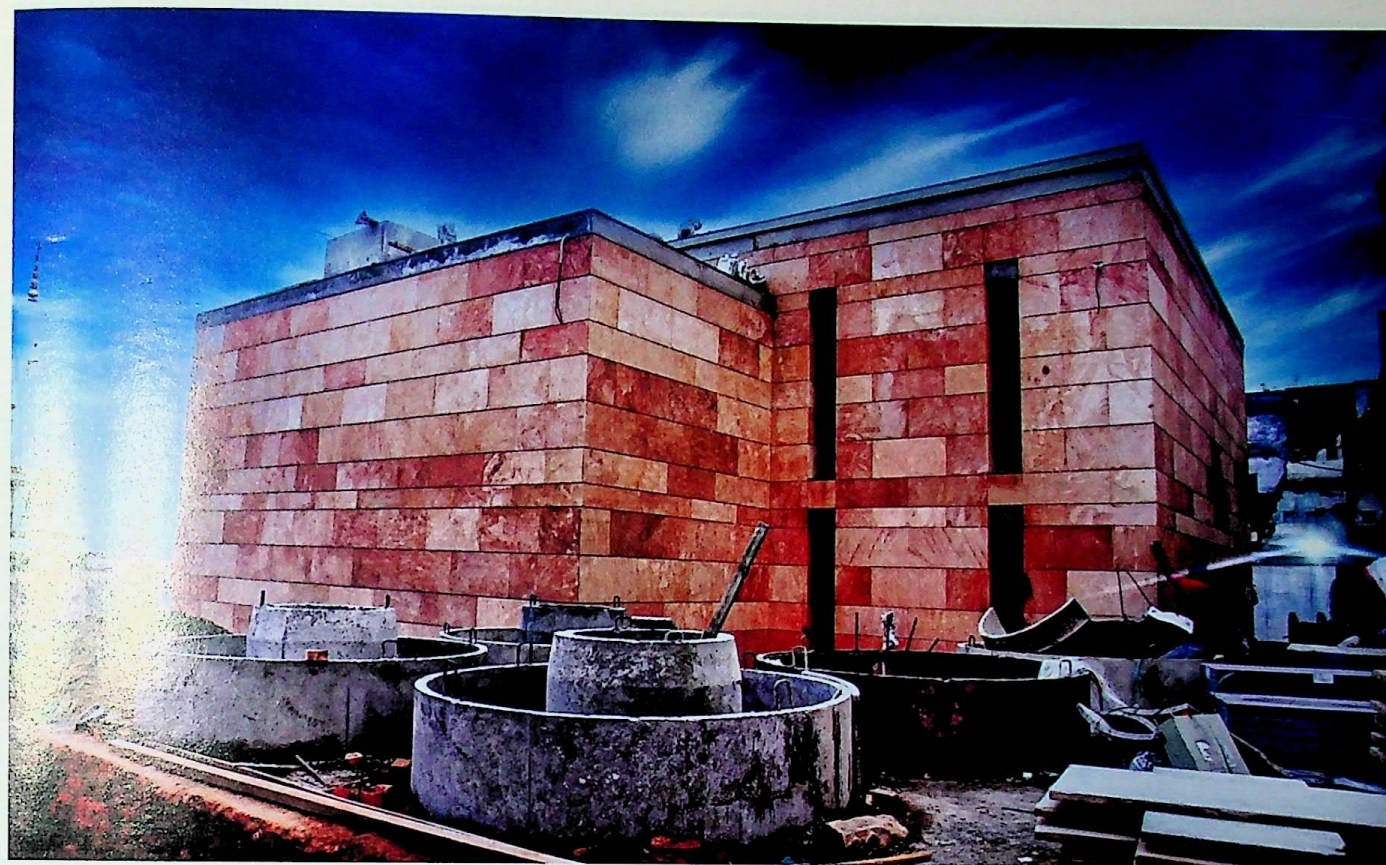
वैदिक केन्द्र

काशी गैलरी

अध्यात्मिक बुक स्टोर

बहुउद्देशीय हॉल

गंगा व्यू कैफे

मुमुक्षु भवन

महादेव के देव...

ऊपर की इबारत को महज शीर्शक के नजरिये से मत देखिये। ये एक हकीकत है। आबपाशी नगरी काशी के श्री विश्वनाथ दरबार में गरलधर, गिरिजापति, गिरीश, गोनर्द, चंद्रेश्वर, चंद्रमौलि, चीरवासा, जगदीश, जटाधर, जटाशंकर, जमदग्नि महादेव के खास खास देव विराजते हैं। वैसे तो श्री काशी विश्वनाथ धाम के नव्य परिसर में अब वो चालीस मंदिर भी सन्निहित हैं जो कॉरिडोर के निर्माण के दौरान मिले, पर उन विग्रहों की महत्ता कुछ ज्यादा खास है जो बाबा के तीन हजार वर्ग फुट वाले प्राचीन परिसर में विराजते रहे हैं। इन देव विग्रहों की अपनी दिशाएं और सबके अपने खास कोण हैं। कहते हैं कि सारे देव विग्रहों की बाबा पर और बाबा की इन सब पर दृष्टि बनी रहे, इस लिहाज से इनकी दिशाओं और इनके कोण की अहमियत है। ये सारे देव यहां आज भी विराजमान हैं। अपने स्थान, अपने कोण और अपनी अहमियत के साथ।

महज तीन हजार वर्ग फुट से बढ़ कर पांच लाख से भी ज्यादा वर्ग फुट क्षेत्रफल में विस्तार पाने के बाद आज हर जिज्ञासु यह जानना चाहता है कि श्री काशी विश्वनाथ दरबार में पहले क्या था और अब धाम में क्या कुछ है। तो चलिए अब हम श्रवण करते हैं बाबा के आसपास की पुरानी चीजों और रूद्र शिव के खास देव विग्रहों की कथा का...

वैकुण्ठेश्वर महादेव

बाबा श्री काशी विश्वनाथ के मुख्य द्वार के ठीक सामने वैकुण्ठेश्वर महादेव विराजते हैं। यह स्वयंभू लिंग है। कहते हैं कि बाबा श्री काशी विश्वनाथ के आग्रह पर जगत पालक भगवान विश्णु यहां लिंग रूप में स्वयं स्थापित हुए हैं। वैकुण्ठेश्वर महादेव के बाएं दंडपाणिश्वर और दाएं स्वयं श्री काशी विश्वनाथ का लिंग विग्रह है। यह विग्रह शिव और विष्णु के मैत्री का प्रतीक है।

श्री विरूपाक्ष

पुराने परिसर में प्रवेश द्वार के बाएं भगवान जटाशंकर शिव श्री विरूपाक्ष के रूप में स्थापित हैं। इस लिंग की स्थापना कब और कैसे हुई इसकी कोई प्रमाणित कथा नहीं है। श्री विरूपाक्ष देवाधिदेव महादेव के अनेक रूपों में से एक हैं। विरूपाक्ष का शाब्दिक अर्थ विपरीत अक्ष वाले से है। यह अकंप शिव का प्रसन्न रूप है। श्री विरूपाक्ष के ठीक बगल में श्री धरणीधर विश्णु का विग्रह है। कहते हैं कि श्री विरूपाक्ष महादेव के दर्शन के बिना काशी यात्रा और श्री काशी विश्वनाथ का दर्शन पूर्ण नहीं माना जाता। इन देवों के बाएं तरफ परिक्रमा में नीलकंठेश्वर तथा दाएं ओर शनिश्वर महादेव हैं। यहां गौरी तथा अविमुक्त विनायक के विग्रह भी हैं।

अविमुक्तेश्वर महादेव

अविमुक्तेश्वर महादेव

श्री काशी विश्वनाथ मंदिर के मुख्यद्वार के ठीक दाईं ओर श्री अविमुक्तेश्वर महादेव विराजमान हैं। कहते हैं कि कैलाश के बाद भगवान शिव का अगर कहीं वास है तो वह काशी ही है। इसीलिए काशी को कैलाश का प्रतिरूप माना जाता है। काशी के बारे में पुराणों में बहुत सारी कथाएं हैं। काशी के बारे में कहा जाता है कि यह स्थान शिव के त्रिशूल पर विराजमान है। काशी की धरा पर शरीर त्यागने वालों को यमलोक नहीं जाना पड़ता, क्योंकि यह अविमुक्त क्षेत्र है। अविमुक्त क्षेत्र होने के कारण ही यहां सदाशिव आशुतोष का एक दिव्य लिंग भी स्थापित है जो अविमुक्तेश्वर के नाम से जाना जाता है। नारद पुराण में अविमुक्तेश्वर लिंग की रहस्यमय कथा है। कहते हैं कि एक बार असुर भगवान शिव का लिंग लेकर भागने लगे। राक्षसों का यह दल जब काशी पहुंचा तो उमापति शिव ने विचार किया कि अब वह काशी को छोड़ कर नही जाएंगे। तभी वो विचारमग्न हो गये कि क्या करें कि काशी उनका निवास स्थान बन जाए।

भोले भण्डारी शिव की लीला से ठीक उसी समय मुर्गा बांग देने लगा। मुर्गे की बांग सुन कर राक्षस डर गए। उन्हें लगा कि सुबह हो गयी और वो देवताओं के हाथ पकड़े जाएंगे। पकड़े जाने और वध किये जाने की आशंका में वो भगवान के लिंग को वहीं छोड़ कर भाग गये। बाद में देवताओं ने इस लिंग की स्थापना कर उसका पूजन अर्चन किया और उसे अविमुक्तेश्वर के नाम से पुकारा। यह अविमुक्तेश्वर का ही प्रताप है कि काशी में देह त्यागने वाले को मोक्ष की प्राप्ति हो जाती है। बताते हैं कि इस लिंग के अभिषेक किये गये जल का आचमन करने मात्र से मनुष्य को जन्म मरण के चक्र से मुक्ति मिल जाती है।

अन्य देव

श्री काशी विश्वनाथ के गर्भ गृह के पश्चिमी द्वार के मध्य भाग में हनुमानजी विराजमान हैं। वाव्यव (उत्तर–पश्चिम कोण) में अहिल्याबाई की मूर्ति स्थापित है। इनके निकट ही विघ्नेश्वर गणेश, निकुम्भेश्वर, कपिलेश्वर महादेव विराजमान हैं। उत्तरी शाला में वैदिक विद्वान रूद्रपाठ करते हैं। इसके पूर्व स्थान पर कुबेरेश्वर महादेव हैं। ईशानकोण में श्रृंगार गौरी और माता अन्नपूर्णा स्थापित हैं।

नौबतखाना

श्री काशी विश्वनाथ मन्दिर के पुराने मुख्य द्वार के उत्तर में नौबतखाना हुआ करता था। अब शायद न जानने वाले ये पूछें कि आखिर ये नौबतखाना क्या होता है? दरअसल, नौबतखाना मंदिर के मुख्यद्वार या फाटक के ठीक ऊपर या फाटक के सामने बनी वो जगह होती है जहां हर रोज ब्रह्म मुहूर्त में मंगल ध्वनि बजायी जाती है। मंगल ध्वनि से आशय शहनाई वादन या नगाड़ा वादन से है। श्री काशी विश्वनाथ मंदिर में प्राचीन काल से शहनाई वादन की परम्परा रही है। बाद के समय में इस नौबतखाने में पुलिस चौकी भी थी।

श्री धनकुबेर महादेव

श्री तारकेश्वर महादेव
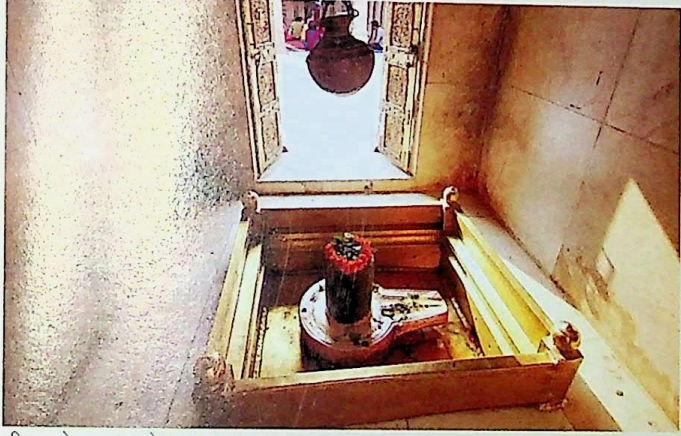
श्री भुवनेश्वर महादेव

श्री हरिहर महादेव

श्रीमाता लक्ष्मी

श्री शनिश्चर महादेव

श्री हनुमान एवं श्री भैरव

श्री बद्रीनारायण
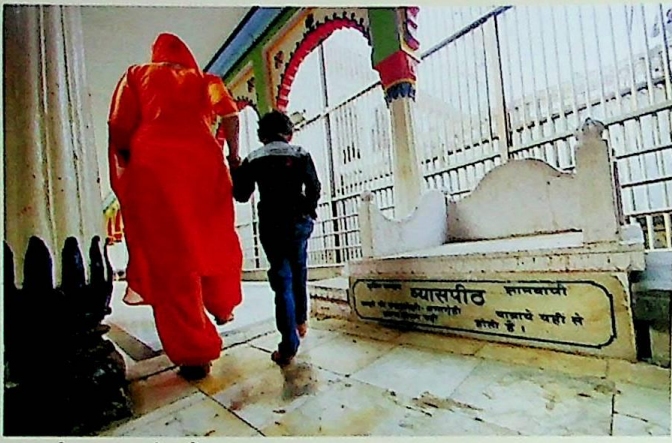
व्यास पीठ, ज्ञानवापी मुक्ति मण्डप

श्रीमाता अन्नपूर्णा

श्री विश्वेश्वर महादेव
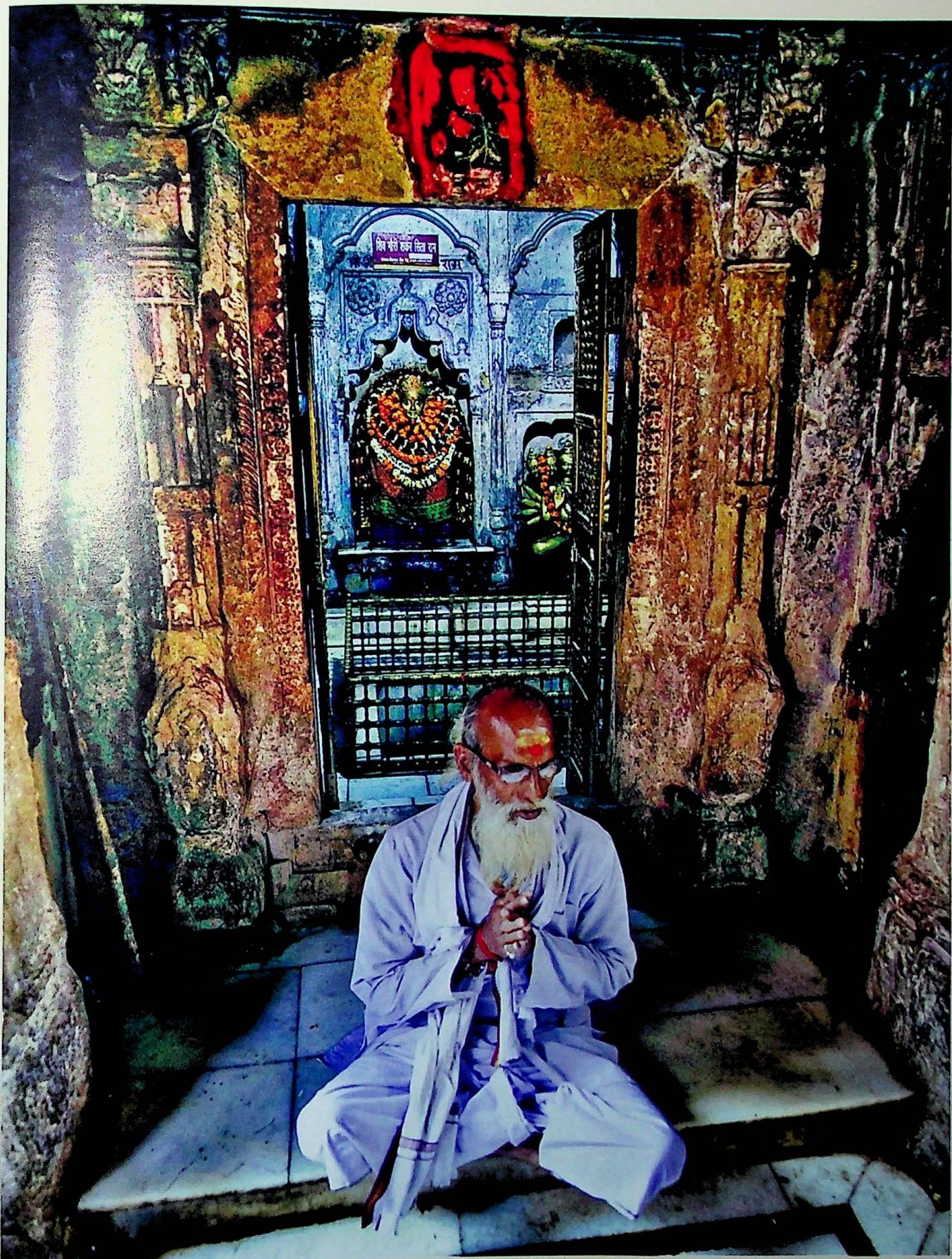
श्री दण्डपाणी
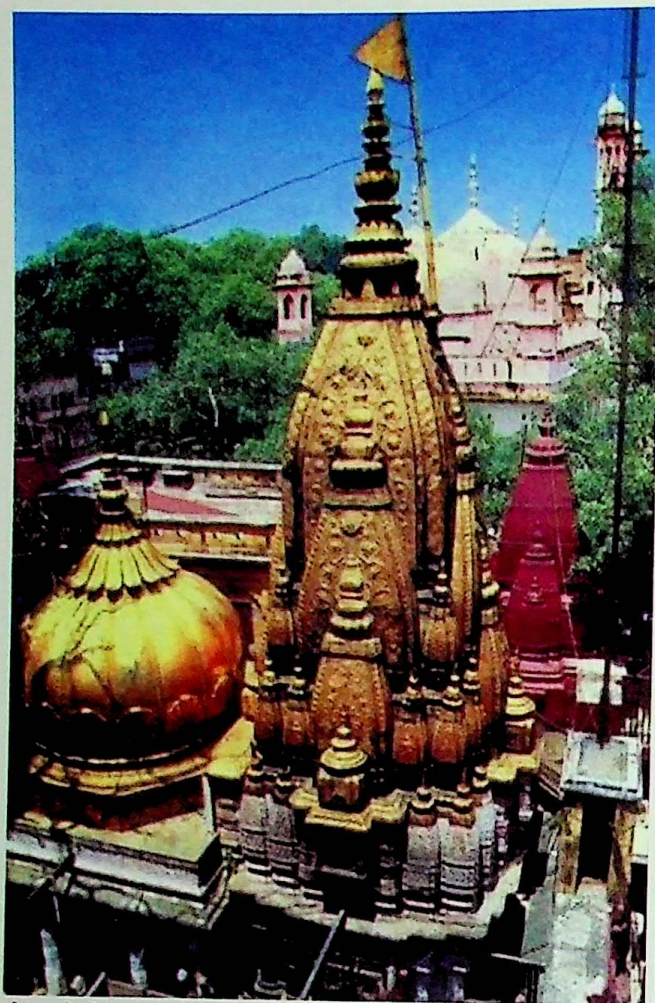
श्री काशी विश्वनाथ मंदिर का प्राचीन स्वरुप
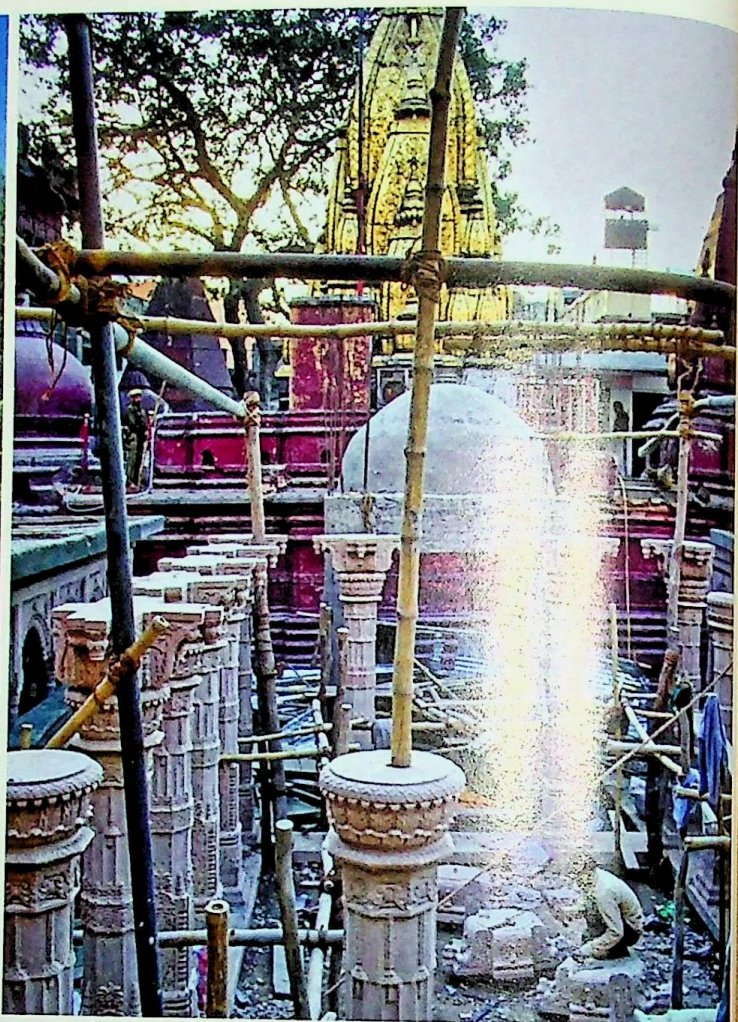
मण्डप निर्माण
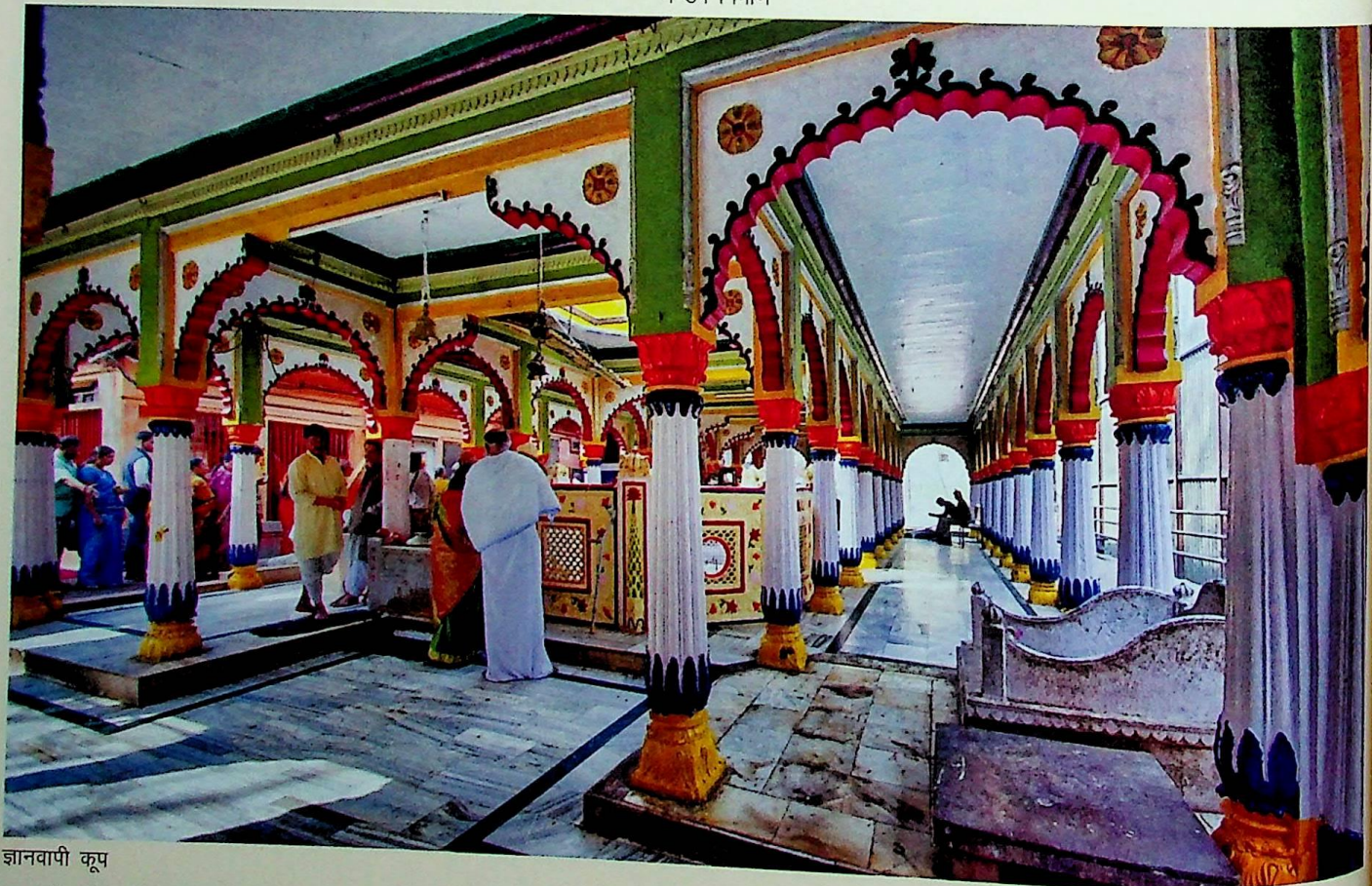
ज्ञानवापी कूप

बम बम बोल रहा है काशी...

काशी अविनाशी है। वो हर लमहा बम बम बोलती है। बम बम का नाद अनहद बन कर ब्रह्म मुहूर्त की बेला से ही दिगदिगांत को गुंजायमान कर देती है। इसकी भी वजह है। जब परात्पर शिव कैलाश छोड़ कर माता पार्वती के साथ काशी पहुंचे थे तब अनाशी काशी उनके स्वागत के लिए अपनी दहलीज तक दौड़ी आयी थी। उस लमहे में अनिरुद्ध शिव भी उनसे गले लग कर रोये थे। ये मिलन के अश्रु थे। ये खुशी से सराबोर आंसू थे। तब काशी ने अपने आराध्य से सिर्फ इतना ही कहा था, हे अस्थिमाली आत्रेय शिव मैं इस काशी क्षेत्र के रहिवासियों के कल्याण की कामना करती हूं... अमृतेश्वर, अरिदम महादेव ने तत्काल 'तथास्तु' कह कर काशी को वो सब दे दिया जिसे पाना हर एक की अभिलाषा होती है। वो परमानंद जिसे पाना दुर्लभ नहीं बल्कि असंभव है।

यही कुछ वजहें हैं कि काशी हर वक्त एक ठसक में रहती है। उसमें एक ऐंठ है। वो जमाने को अपने ठोकर पर रखती है। वो किसी को अपना बगलगीर होने नहीं देती। काशी के साथ ये सारी चीजें आखिर क्यों न हो ? आप ही सोचिए ना, जिसे अष्टमूर्ति, अस्थिमाली, आत्रेय शिव गले लगाये हुए हों वो भला किसी को क्यों तवज्जो देगी। तो अपनी काशी के सात वार में नौ त्यौहार पड़ने की वजह भी यही है। यहां हर दिन मंगलकारी है। यहां का हर लमहा कल्याणकारी है। यहां कंकर कंकर में शंकर विराजते हैं। यहां कोई राजा है ना रंक। यहां अगर किसी का वजूद है तो वह सिर्फ भवानी शंकर का है। वैसे तो यहां रोज ही पर्व है... हर्ष है... उल्लास है... लेकिन कुछ दिन ऐसे भी हैं जब आप हर घटी पल में इंदुभूषण, इंदुशेखर, इकंग, ईशान, ईश्वर, उन्मत्तवेष, उमाकांत, उमानाथ, उमेश, उमापति, उरगभूषण महादेव को अपने आसपास महसूस करते हैं। तो चलिए जानते हैं कि आखिर वो कौन से शुभ दिन हैं जब आप भवानी पति शंकर के अपने पास होने की अनुभूति करते हैं...

महाशिवरात्रि

वैसे तो प्रत्येक मास के कृष्ण पक्ष की 13 / 14वीं तिथि को शिवरात्रि पड़ती है। इसे मास शिवरात्रि कहते हैं। यह तब होता है जब रात्रि में चन्द्रमा का प्रकाश न्यूनतम स्तर पर रहता है। लेकिन फाल्गुन मास में पड़ने वाली शिवरात्रि को महाशिवरात्रि कहा जाता है। इस तिथि को पूरी रात उत्सव के रूप में मनाया जाता है। पूरे दिन व्रत रखते हुए पूरी रात जागरण किया जाता है। अत्यन्त उल्लास के साथ भजन कीर्तन किया जाता है। महाशिवरात्रि पर श्री काशी विश्वनाथ दरबार [illegible] आरती के बाद प्रातः चार बजे से दर्शन के लिए खुल जाता है। [illegible] पर मध्याह्न भोग आरती के समय को छोड़ दर्शन का क्रम लग[illegible] रहता है। जागरण होने के कारण उस रात शयन आरती नहीं [illegible] याम अथवा चार प्रहर की आरती रात्रि 10 बजे, 12 बजे, दो [illegible] बजे की जाती हैं। उस समय गर्भगृह के बाहर से ही श्री काशी [illegible] का दर्शन किया जा सकता है।

अनादिकाल से प्रचलित महाशिवरात्रि पर्व का स्कन्द पुराण, लिंग पुराण और पद्म पुराण आदि में उल्लेख है। इक्वीनोक्स (दिन तथा रात के समय बराबर का होना) के पास होने वाले महाशिवरात्रि के संबंध में मान्यतायें है कि सृष्टि की ऊर्जा इस सत्र में जागृत रहती है, जिस कारण रात्रि पर्यन्त जाग कर भक्ति भावना से पूजन कर इस दैवीय ऊर्जा को प्राप्त किया जाता है।
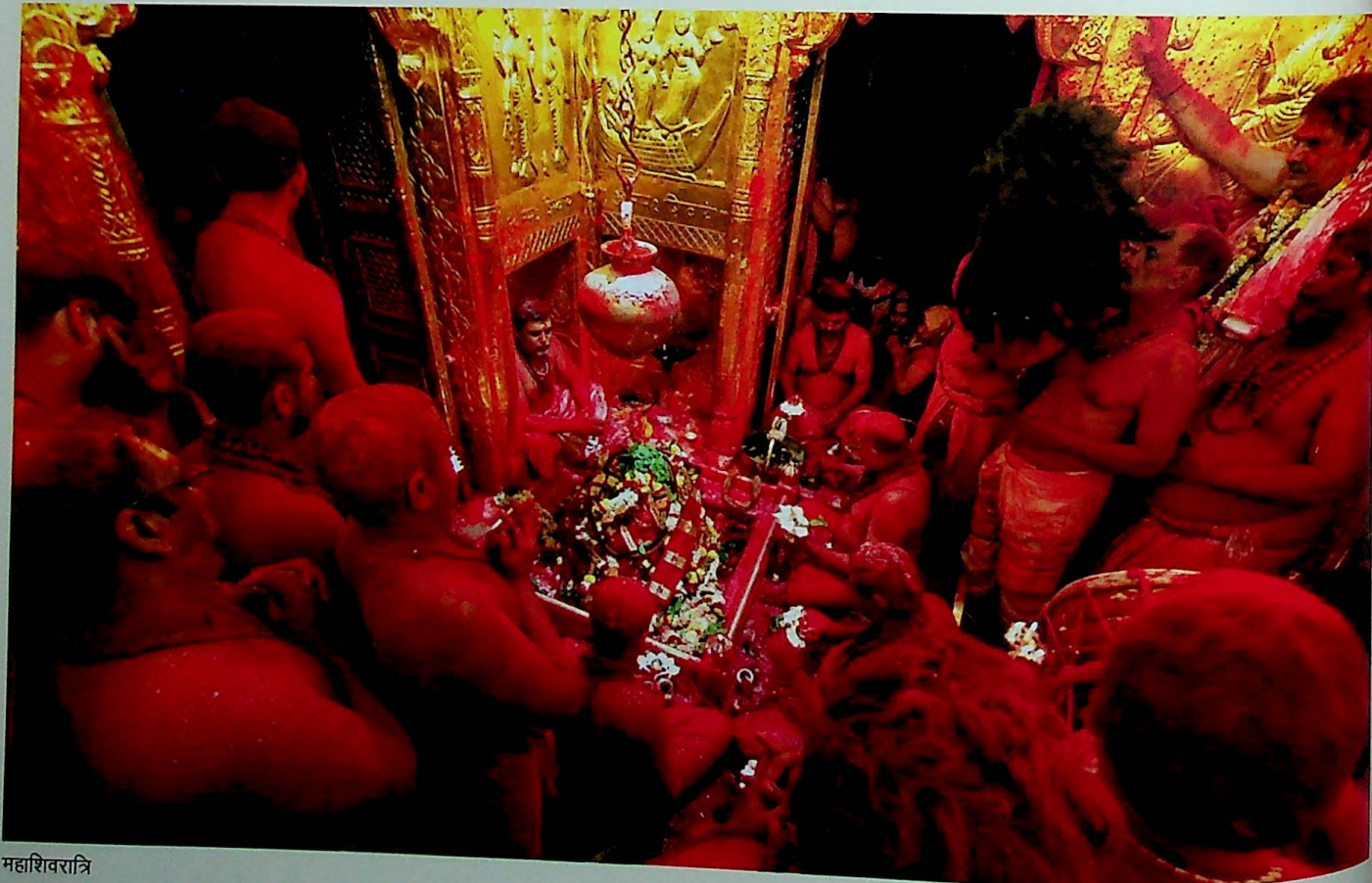
महाशिवरात्रि

रंगभरी एकादशी

फाल्गुन माह की एकादशी को रंगभरी एकादशी के रूप में मनाया जाता है। इस पर्व की अहमियत को कुछ इस तरह से समझा जाए कि श्री काशी विश्वेश्वर की सायंकालीन सप्तऋषि आरती और रात्रिकालीन श्रृंगार आरती को उस दिन एक ही साथ अपराह्न में तीन बजे कर दिया जाता है। रंगभरी एकादशी पर भगवान शिव और पार्वती की चल प्रतिमाओं का श्रृंगार कर उनकी शोभायात्रा निकाली जाती है। रास्ते भर उनके साथ अबीर, गुलाल से होली खेली जाती है। माता पार्वती के गौना के प्रतीक रूप में रंगभरी एकादशी को मनाया जाता है।

श्रावण मास के सोमवार

सनातन पंचांग के पांचवें मास, श्रावण के हर दिन को पर्व के रूप में मनाया जाता है। दरअसल, श्रावण का सम्पूर्ण माह भगवान शंकर की आराधना के लिए सर्वोत्तम माना जाता है। श्रावण मास के सोमवार पर काशी के हर मंदिर में विशेष श्रृंगार होता है। श्रावण मास में काशी में भगवान श्रीकृष्ण का भी भगवान शंकर के रूप में श्रृंगार किया जाता है। श्रावण कृष्ण अष्टमी को भगवान शंकर और मां पार्वती की चल प्रतिमाओं का विशेष श्रृंगार किया जाता है। श्रावण शुक्ल प्रतिपदा को श्री काशी विश्वनाथ का अर्धनारीश्वर के रूप में श्रृंगार किया जाता है। श्रावण के अंतिम सोमवार और शुक्ल अष्टमी को रूद्राक्ष से श्रृंगार किया जाता है। श्रावण पूर्णिमा के दिन भगवान शंकर के पूर्ण परिवार की चल प्रतिमाओं का झूला श्रृंगार किया जाता है। अक्षय तृतीया पर (वैशाख शुक्ल तृतीया), जो ग्रीष्म ऋतु के आरम्भ का दिन है, भगवान के लिए गंगाजल का फौव्वारा गर्भगृह में लगाया जाता है जो कि पूरे श्रावण मास में अनवरत चलता रहता है।

श्रावण मास के सोमवार को श्री काशी विश्वनाथ दर्शन हेतु कतारबद्ध कांवरिये

देव दीपावली (कार्तिक पूर्णिमा) को विशेष सप्तऋषि आरती करते अर्चकगण

अन्नकूट

दीपावली के अगले दिन श्री काशी विश्वनाथ दरबार में अन्नकूट का पर्व मनाया जाता है। सब जानते हैं कि उमापति, उरगभूषण महादेव उदारमना और महादानी हैं। इसीलिए उन्हें भोलेनाथ भी कहा जाता है। अन्नकूट के अवसर पर बड़ी मात्रा में नाना प्रकार के मिष्ठान, छप्पन भोग वगैरह बना कर लगभग सम्पूर्ण मन्दिर परिसर में भोग लगाया जाता है। भगवान शंकर और उनके परिवार की चल मूर्तियों का भव्य श्रृंगार दोपहर की भोग आरती के समय किया जाता है। समस्त भोग का वितरण भक्तजनों को प्रसाद के रूप में किया जाता है।

देव दीपावली (कार्तिक पूर्णिमा)

काशी में कार्तिक मास में सूर्योदय से पूर्व गंगा स्नान का विशेष महत्व है। उसमें भी कार्तिक पूर्णिमा पर गंगा स्नान और श्री काशी विश्वेश्वर के दर्शन पूजन की अपनी खास परम्परा है। काशी में पंचगंगा घाट पर स्नान को विशेष महत्व दिया गया है। पंचगंगा घाट में स्नान के बाद विष्णु जी के बिन्दुमाधव रूप का दर्शन किया जाता है। सूर्यास्त के समय परम्परानुसार पंचगंगा घाट स्थित हजारा दीपस्तम्भों को प्रज्वलित करने के बाद सभी घाटों पर असंख्य दीपों को प्रज्वलित किया जाता है। इस शाम को देवताओं की दीवाली के रूप में मनाया जाता है। श्री काशी विश्वनाथ मंदिर में भी इस अवसर पर विशेष सजावट और दीप दान का आयोजन किया जाता है। उस रात बाबा दरबार में बिजली की सारी लाइटों को बंद कर जलते हुए दीयों के बीच श्री काशी विश्वनाथ की अलौकिक आरती की जाती है।

आरती श्री काशी विश्वनाथ की...
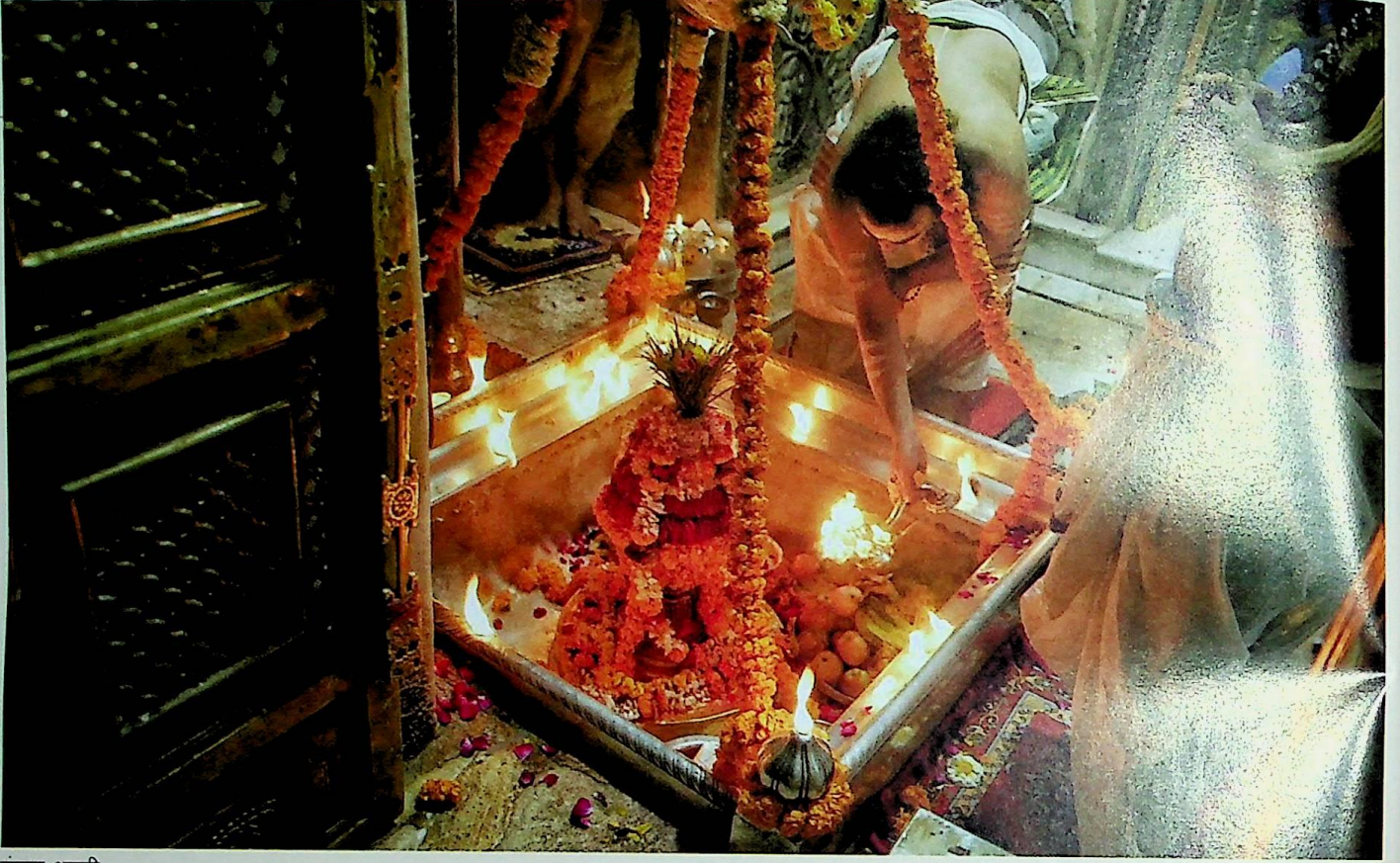
मंगला आरती

सनातन आस्था के दर्शन पूजन क्रम में आरती का विशेष महत्व है और फिर जब हम बात श्री काशी विश्वनाथ की कर रहे हों तो हर शख्स इन आरतियों के क्रम और उसके महात्म्य के बारे में जानना चाहेगा। श्री काशी विश्वनाथ दरबार में प्रत्येक दिन पांच आरतियों का क्रम है। हर आरती का अपना अलग महत्व है। बाबा की होने वाली विविध आरती अनुष्ठानों का क्रम कुछ इस तरह से है...

मंगला आरती

यह आरती प्रतिदिन ब्रह्म मुहूर्त में 3.00 बजे से 4.00 बजे के बीच होती है। यह बाबा की हर रोज होने वाली प्रथम आरती है। भोर में बाबा का पट खुलते ही मंदिर के चार अर्चक बाबा की आरती करते हैं। मंगला का मतलब ही ब्रह्म काल होता है। इस पूजन अर्चन में षोडशोपचार पूजा और श्रृंगार के बाद आरती की जाती है। बाबा श्री काशी विश्वनाथ की स्तुति कर सम्पूर्ण विश्व की मंगल कामना के लिए प्रार्थना की जाती है। मंगला आरती के बाद प्रातः चार बजे मंदिर दर्शनार्थियों के लिए खोल दिया जाता है। मंगला आरती के अलावा अन्य आरतियों के दौरान मंदिर में प्रवेश के लिए ऑनलाइन टिकट की सुविधा प्रशासन की तरफ से दी गई है। मंगला आरती के लिए माला, फूल, श्रृंगार सामग्री तथा भोग की व्यवस्था श्री नाटकोटक्षेत्रम की तरफ से की जाती है।

मध्याह्न भोग आरती

प्रतिदिन मध्याह्न 11.15 बजे से 12.20 बजे तक बाबा की मध्याह्न भोग आरती की जाती है। बाबा श्री काशी विश्वनाथ के षोडशोपचार पूजा तथा रूद्राभिषेक और श्रृंगार के उपरान्त विधिवत आरती स्तुति की जाती है। आरती के उपरांत विश्व कल्याण के लिए प्रार्थना की जाती है। मध्याह्न भोग में तिथि के अनुसार निर्धारित फलाहार और खाद्य सामग्री के भोग की परम्परा है। सोमवार को पूरी सब्जी और खीर का भोग लगाया जाता है। अन्य दिनों में दाल, चावल, रोटी, सब्जी और सूजी के हलुवे का भोग लगता है। एकादशी पर मखाने का खीर या कूट्टू के आटे की पुरी और आलू की सब्जी का भोग लगता है। आरती के पश्चात वहां उपस्थित सभी श्रद्धालुओं को हलुवे का प्रसाद वितरित किया जाता है। मध्याह्न भोग का प्रसाद भोजन प्रतिदिन दंडी स्वामियों को कराया जाता है। भोजन के साथ सभी संन्यासियों को 101 रुपए की दक्षिणा भी दी जाती है।

सायंकालीन सप्तऋषि आरती

परमात्मा के अवतार रूपी सप्तऋषियों कश्यप, अत्रि, वशिष्ठ, विश्वामित्र, गौतम, जमदग्नि और भारद्वाज ऋषि के नाम से प्रतिदिन होने वाली यह आरती सामवेद पद्धति पर आधारित है। यह आरती वैसे तो प्रतिदिन सायं 7.00 बजे से 8.15 बजे के बीच की जाती है लेकिन हर पूर्णिमा को इसका वक्त बदल जाता है। प्रत्येक पूर्णिमा को सप्तर्षि आरती सायं 6.00 बजे से 7.15 बजे के बीच की जाती है। इस आरती में मंदिर के चार अर्चक और सात व्यक्तिगत पुजारी शामिल होते हैं। इस दौरान बाबा की स्तुति, प्रार्थना और आरती की जाती है। इस आरती की परम्परा अत्यंत प्राचीन है। इस आरती की खासियत ये है कि इसे निश्चित स्थान पर बैठ कर, निश्चित परिवार द्वारा उनकी पाली के अनुसार ही किया जाता है। किसी जमाने में राजाओं और शासकों के खजाने से इन पुजारियों को आरती के संचालन में व्यय की आंशिक प्रतिपूर्ति की जाती थी। आरती का समय सायंकाल होने के कारण पूरा गर्भगृह प्रकाशमान हो जाता है। सामवेद के सस्वर पाठ के कारण मंदिर परिसर गुंजायमान हो उठता है।

मध्याह्न भोग आरती
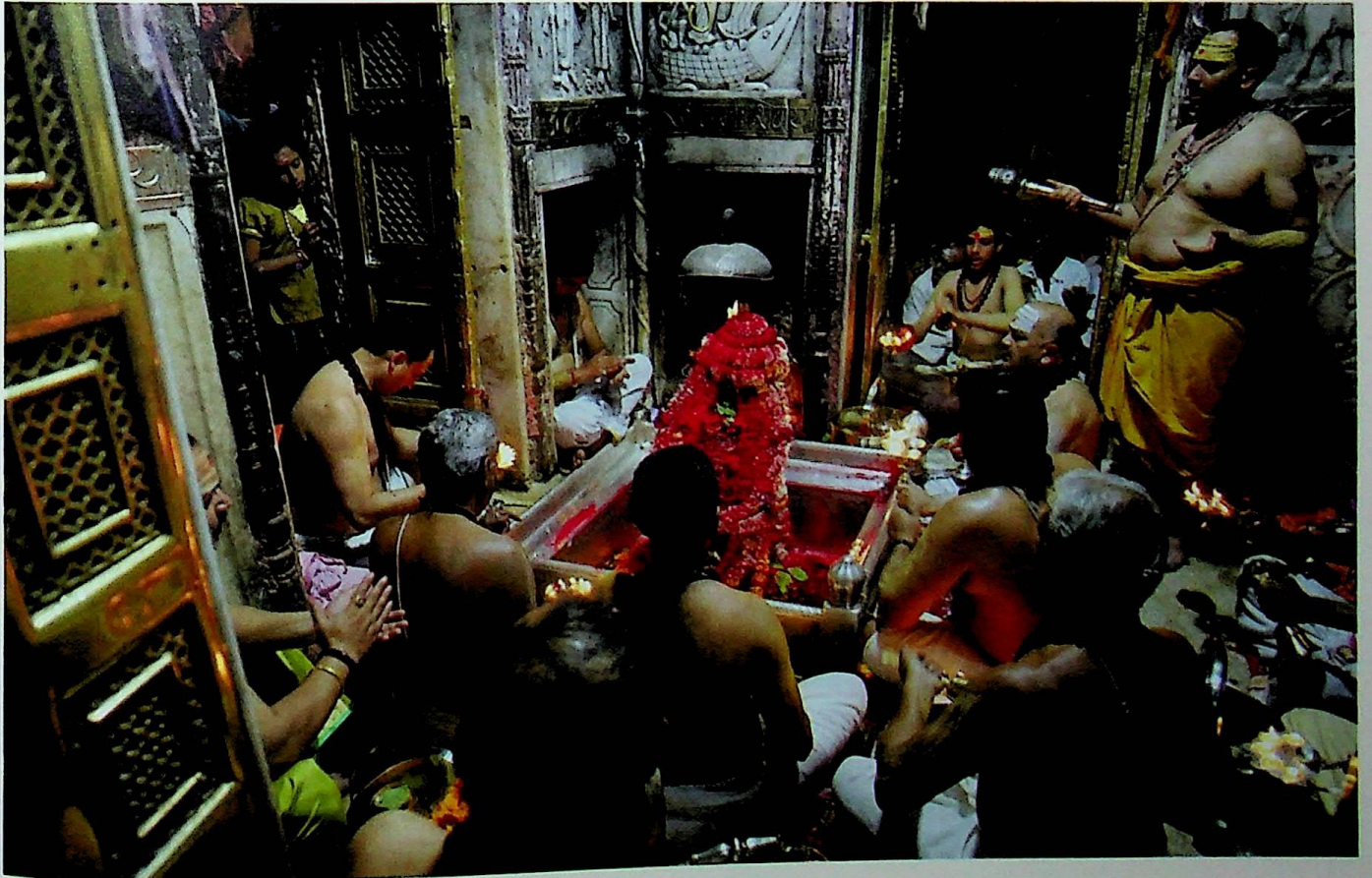
सायंकालीन सप्तऋषि आरती

रात्रि श्रृंगार और भोग आरती

श्रृंगार आरती सबसे विशिष्ट आरती है। इसमें बाबा का श्रृंगार श्री काशीपुराधीश्वर के रूप में किया जाता है। यह पूर्ण रूप से वैदिक आरती है। इसमें विधि विधान से षोडशोपचार पूजा, रूद्राभिषेक तथा श्रृंगार के उपरान्त आरती स्तुति की जाती है। इस दौरान विधिवत प्रार्थना की जाती है। श्रृंगार भोग आरती हर रोज रात्रि में नौ बजे से सवा दस बजे के बीच की जाती है। यह आरती मंदिर के चार अर्चकों द्वारा की जाती है।

शयन आरती

शयन आरती हर रोज की जाने वाली आरती के क्रम की अंतिम आरती होती है। यह आरती हर रोज रात्रि में 10.30 बजे से 11 बजे के बीच की जाती है। विशेष पर्वों के अवसर पर जब मन्दिर रात भर खुला रहता है, तब यह आरती नहीं की जाती है। इस आरती में बाबा के शयन के लिए वहां उपस्थित समस्त भक्त लोरी गाते हैं। इस आरती को भजन के रूप में किया जाता है और इसे सम्पन्न करने के लिए किसी आचार्य की आवश्यकता नहीं होती है। मन्दिर के पांच अर्चको और इस दौरान उपस्थित सारे भक्तजनों के गाये भजन से यह आरती अलौकिक हो जाती है। इस आरती की भी बहुत प्राचीन परम्परा है। विशेष पर्व में शयन आरती में 30 मिनट तक का विलम्ब भी किया जा सकता है। शयन आरती के उपरान्त रात में 11 बजे मन्दिर का पट बंद कर दिया जाता है। मंदिर का पट अगले दिन मंगला आरती के वक्त प्रातः कालीन बेला में खोला जाता है।

सप्तर्षि आरती के अलावा श्री काशी विश्वनाथ की किसी भी आरती का समय कभी नहीं बदलता। प्रत्येक पूर्णिमा को सप्तर्षि आरती हर रोज के तयशुदा समय से एक घंटे पहले यानि सायंकाल छह बजे से सवा सात बजे तक की जाती है। इन सारी आरतियों से जुड़े अनुष्ठान के लिए माला, फूल, श्रृंगार और भोग सामग्री की [illegible] तमिलनाडु के नाटूकोट्टई नागरथ्थार छत्रम् की तरफ से की [illegible] छत्रम् की काशी शाखा गोदौलिया में गणेश महाल जाने वाली [illegible] छत्रम् से जुड़े सात लोग हर आरती के वक्त पूजन सामग्री [illegible] और गंगा जल से भरा कलश लेकर वाद्यम बजाते हुए [illegible] हैं। इस डलिया में माला फूल के अलावा श्री काशी विश्वनाथ [illegible] के बाद लिंग को पोछने के लिए वस्त्र, धूप, दीप, नैवेद्य, [illegible] और माला फूल रहता है। इन सारी सामग्रियों को लेकर [illegible] 'ओम देवा सेवा शम्भू... शम्भू शंकर महादेवा' का जाप करते हुए [illegible] छत्रम् को इस सेवा के निमित्त हर रोज चार लोगों को सप्तर्षि आरती [illegible] का पास ट्रस्ट की तरफ से निःशुल्क दिया जाता है। छत्रम् में ठहरने वाले लोग इन पासेज का उपयोग करते हैं।

शयन आरती

श्री काशी विश्वनाथ धाम के चार मुख्य द्वार

श्री काशी विश्वनाथ धाम गंगाद्वार

युगातंरकारी परिवर्तन के बाद श्री काशी विश्वनाथ धाम का कायाकल्प हो गया। मंदिर की चौहद्दी बदली तो दरो दीवार बदल गये। जब दरो दीवार बदले तो दहलीज बदल गयी। द्वार बदल गये। और निखर कर सामने आया एक नव्य भव्य रूप। आज जब हम बदलाव की बात करते हैं तो उसके पुरातन स्वरूप का जिक्र अवश्यंभावी हो जाता है। श्री काशी विश्वनाथ मंदिर जब महज तीन हजार वर्ग फीट के दायरे में सिमटा हुआ था तो मंदिर तक पहुंचने के तो कई रास्ते थे लेकिन मंदिर में प्रवेश का रास्ता सिर्फ एक ही था। गर्भगृह तक पहुंचने की देहरी सिर्फ एक थी। नेपाली साखू की लकड़ी वाले उस देहरी पर चांदी का मोटा पत्तर मढ़ा हुआ था। पूरा चौखट चांदी के पत्तर से जगमग था। नेपाली साखू के बने दो पल्ले वाले भारी दरवाजे थे। उन दरवाजों पर भी चांदी का चमकता हुआ पत्तर लगा हुआ था। चौखट की ऊंचाई अपेक्षाकृत कम थी। इसकी वजह थी कि बाबा के दरबार में जो भी दाखिल हो वो श्रध्दा और भक्ति के साथ झुक कर आए। इस इकलौते प्रवेश द्वार के सामने नौबतखाना था। नौबतखाने में हर रोज ब्रह्ममुहूर्त में शहनाई की मंगलध्वनि की जाती थी। नौबतखाने के दरवाजे पर कालभैरव का विग्रह था।

बहरहाल अब विशाल श्री काशी विश्वनाथ धाम में प्रवेश के लिए चार मुख्य द्वार लगाये गए हैं। इन फाटकों के नाम उनके नम्बर से है। यहां आने वाले श्रध्दालुओं की सुविधा के दृष्टिकोण से बने इन द्वारों की अपनी अहमियत है। तो चलिए जानते हैं इन द्वारों को और इस क्षेत्र के पुरातन रूवरूप को...

गेट नम्बर एक

इसे गंगा द्वार कहा जाना उचित होगा। ललिता घाट पर बना यह विशाल दरवाजा किसी को भी अपना मुरीद बना लेगा। ललिता घाट के ठीक ऊपर यहां कभी लाहौरी टोला की रिहायशी बस्ती थी। छोटे बड़े मकानात थे। इन घरों में कई मंदिर थे। संकरी गलियां थीं। इस द्वार के निर्माण का मुख्य उद्देश्य श्री काशी विश्वनाथ धाम आने वाली बेशुमार भीड़ को नियंत्रित करना है। अति विशिष्ट लोगों को सुगमता के साथ बाबा के गर्भगृह तक पहुंचाना है। बुलानाला से गौदौलिया तक के मेन रोड पर अक्सर लगने वाले जाम को कंट्रोल करना है। गंगा के रास्ते आने वाले लोग अब तमाम घाटों से नावों और स्टीमर के जरिए ललिता घाट तक आते हैं। यहां बनी जेट्टी पर उतरते हैं। यहां गंगा स्नान करते हैं और कलश में गंगा जल भर कर श्री काशी विश्वनाथ का अभिषेक करते हैं।

गेट नम्बर दो

इसे सरस्वती फाटक द्वार कहा जाता है। यहां कभी सरस्वती फाटक मोहल्ले की बसावट थी। प्राचीन काल में यह मोहल्ला ज्योतिष का गढ़ हुआ करता था। काशी का प्रसिद्ध भृगुसंहिता केंद्र यहीं हुआ करता था। मां सरस्वती का मंदिर होने के कारण इस मोहल्ले को सरस्वती फाटक कहा जाता था। दरअसल सरस्वती फाटक कचौड़ी गली से लेकर त्रिपुराभैरवी तक के इलाके को जोड़ने का काम करता था। अब यहां गेट नम्बर दो बना दिया गया है। संकरी गली में होने कारण इस गेट पर अपेक्षाकृत कम भीड़ होती है। त्रिपुराभैरवी से सीधे या साक्षी विनायक से शुक्रेश्वर महादेव, कालिका गली और अन्नपूर्णा क्षेत्रम् होते हुए यहां पहुंचा जा सकता है। यह गेट मानस नवाह्न पाठ के दौरान काफी उपयोगी साबित होता है।

गेट नम्बर तीन

कभी ये रास्ता मुख्य द्वार हुआ करता था। जिस नौबतखाने और चांदी के पत्तर लगे चौखट और दरवाजों की बात हमनें ऊपर की वो इससे बिल्कुल सटा हुआ था। कभी यहां ढुंढिराज गणपति और अन्नपूर्णा मंदिर होते हुए आया जाता था। जहां आज गेट नम्बर तीन है वहां कभी श्री काशी विश्वनाथ मंदिर के एक महंत परिवार का आवास था। यहीं पास में शनि भगवान का मंदिर भी था। इस द्वार का उपयोग श्री काशी विश्वनाथ मंदिर का दर्शन करने के उपरांत माता अन्नपूर्णा मंदिर जाने के लिए किया जाता है।

गेट नम्बर चार

ज्ञानवापी मोहल्ले में बने होने के कारण इसे ज्ञानवापी गेट भी कहते हैं। चौक से बांसफाटक के बीच होने के कारण पहले भी यह श्री काशी विश्वनाथ मंदिर जाने का अहम रास्ता था। पहले रजिया बीबी की मस्जिद के ठीक सामने की पटरी पर टॉर्च और बैटरी की दुकानों से होते हुए नौ डंडा सीढ़ी उतरने के बाद बाईं तरफ ज्ञानवापी मस्जिद होते हुए एक रास्ता था जो व्यास जी के घर और हनुमान जी के बीच से होते हुए हमें ज्ञानवापी कूप तक पहुंचाता था। ज्ञानवापी कूप और विशाल नंदी के दर्शन और नंदी के कान में अपनी व्यथा कहने के उपरांत तमाम श्रध्दालु तारकेश्वर महादेव और श्री काशी विश्वनाथ मंदिर के बीच की गली से होते हुए मुख्य द्वार तक पहुंचते थे। उस गली में पत्थर की जाली वाले झरोखे से भी लोग बाबा का दर्शन करते थे। अब वो सब इतिहास में है। ज्ञानवापी की सीढ़ी उतरने के बाद दाईं तरफ से भी एक रास्ता था जो ढुंढिराज गणपति और माता अन्नपूर्णा मंदिर होते हुए बाबा की दहलीज तक हमें पहुंचाता था। यहां चूड़ी से लेकर तमाम कॉस्मेटिक चीजों और कौरैया लकड़ी के खिलौनों की दुकानें थीं। यह रास्ता मंदिर आने वाली महिलाओं और बच्चों को बहुत प्रिय था। अब गेट नम्बर चार काशी की भव्यता का प्रतीक है। यहां आने के साथ ही विशाल गेट आपका स्वागत करता है। अंदर तक की भव्यता स्पष्ट रूप से दिखायी देती है। इस गेट को काफी दूर तक फैला दिया गया है। इससे यहां आने वाले श्रध्दालुओं को धाम तक जाने और आने में सहूलियत होती है।

इन चारों गेट के साथ ये अच्छी बात है कि कड़ी धूप में तपते हुए पत्थरों से श्रध्दालुओं को बचाने के लिए रेड कारपेट बिछाया गया है। धाम परिसर में पेय जल की उचित व्यवस्था की गयी है। अन्नपूर्णा मंदिर वाले गेट नम्बर तीन पर वॉटर कूलर लगाये गये हैं।

श्री काशी विश्वनाथ धाम और उसमें स्थित मंदिर

श्री काशी विश्वनाथ धाम परिसर में जो पुरातन मंदिर हैं वो कोई साधारण मंदिर नहीं हैं। इन सभी मंदिरों का स्कंदपुराण के काशी खंड में वर्णन है। इन सारे मंदिरों का जीर्णोध्दार कर उन्हें नया स्वरूप दिया गया है। इन मंदिरों को नव स्वरूप देकर उनमें विग्रहों की स्थापना की गयी है...

- श्री चन्द्रगुप्त महादेव
- श्री मांदातेश्वर महादेव
- श्री द्वादाश लिंग महादेव
- श्री ब्रह्मेश्वर महादेव
- श्री गंगेश्वर महादेव
- श्री ब्रह्मगुप्तेश्वर महादेव
- श्री भुवनेश्वर महादेव
- श्री शनि भगवान
- श्री तारकेश्वर महादेव
- श्री चिंतामणि महादेव
- श्री समुद्र देव मंदिर
- श्री समुद्र मंथन मंदिर
- श्री गोयनका छात्रालय देवालय
- श्री पुतलीबाई मंदिर
- श्री पंचमुखी मंदिर
- श्री भस्मगतेश्वर महादेव
- श्री ज्ञानवापी मंडप

इनके अलावा धाम में ही आदि शंकराचार्य, अहिल्याबाई, भगवान श्री कार्तिकेय और भारत माता की नयी मूर्तियों की स्थापना की गयी है।

जन सुविधा केंद्र : श्री काशी विश्वनाथ मंदिर ट्रस्ट की तरफ से
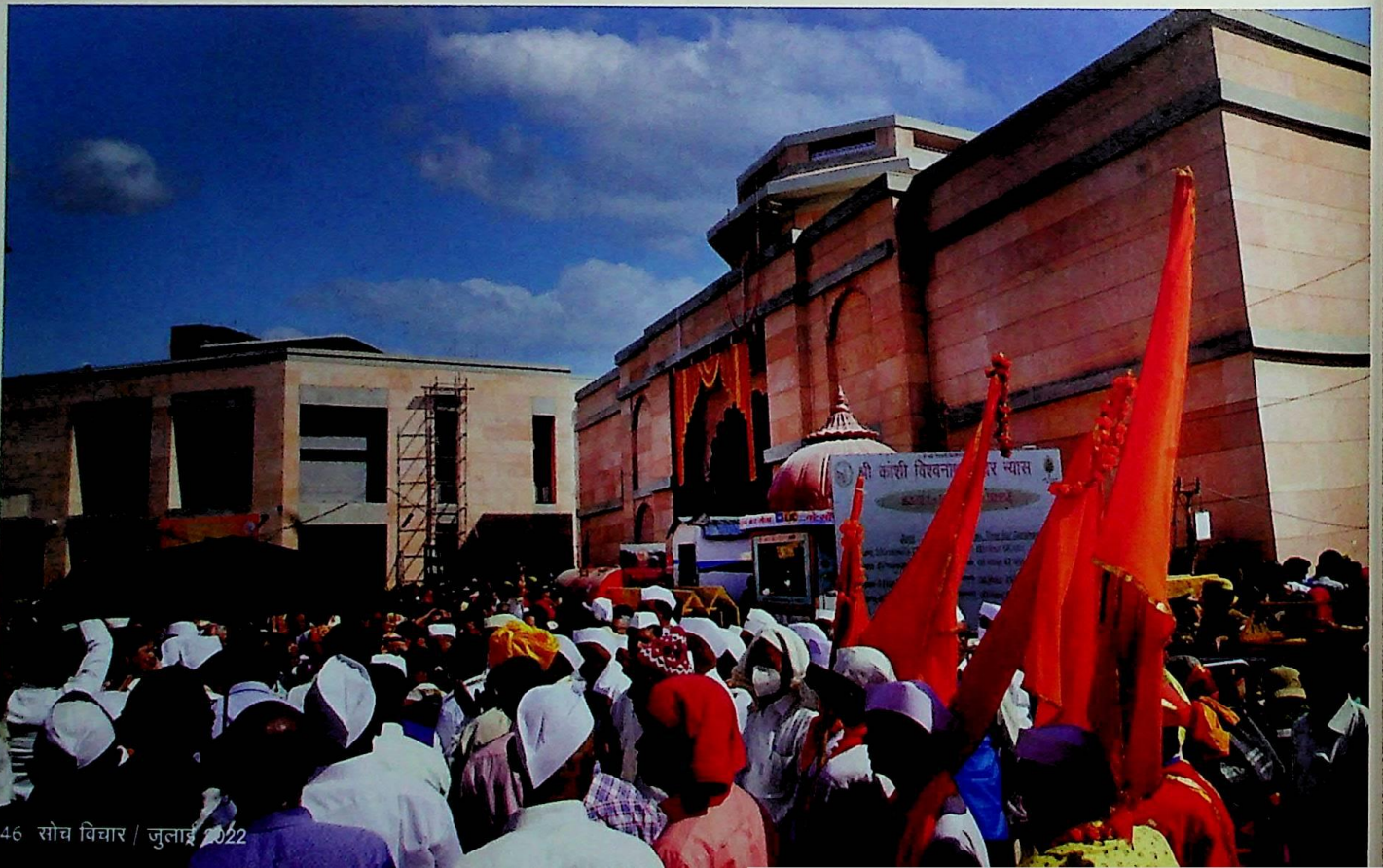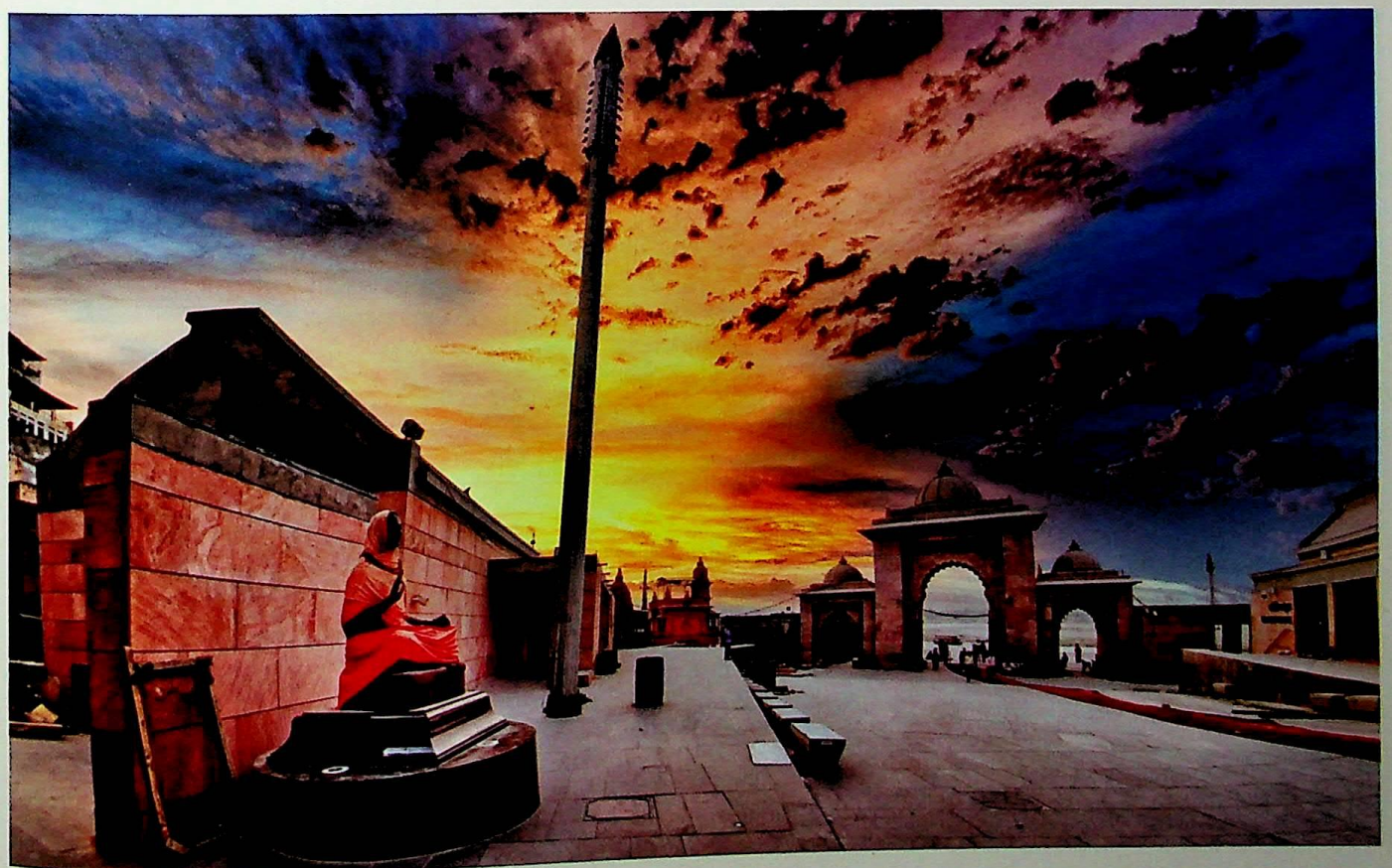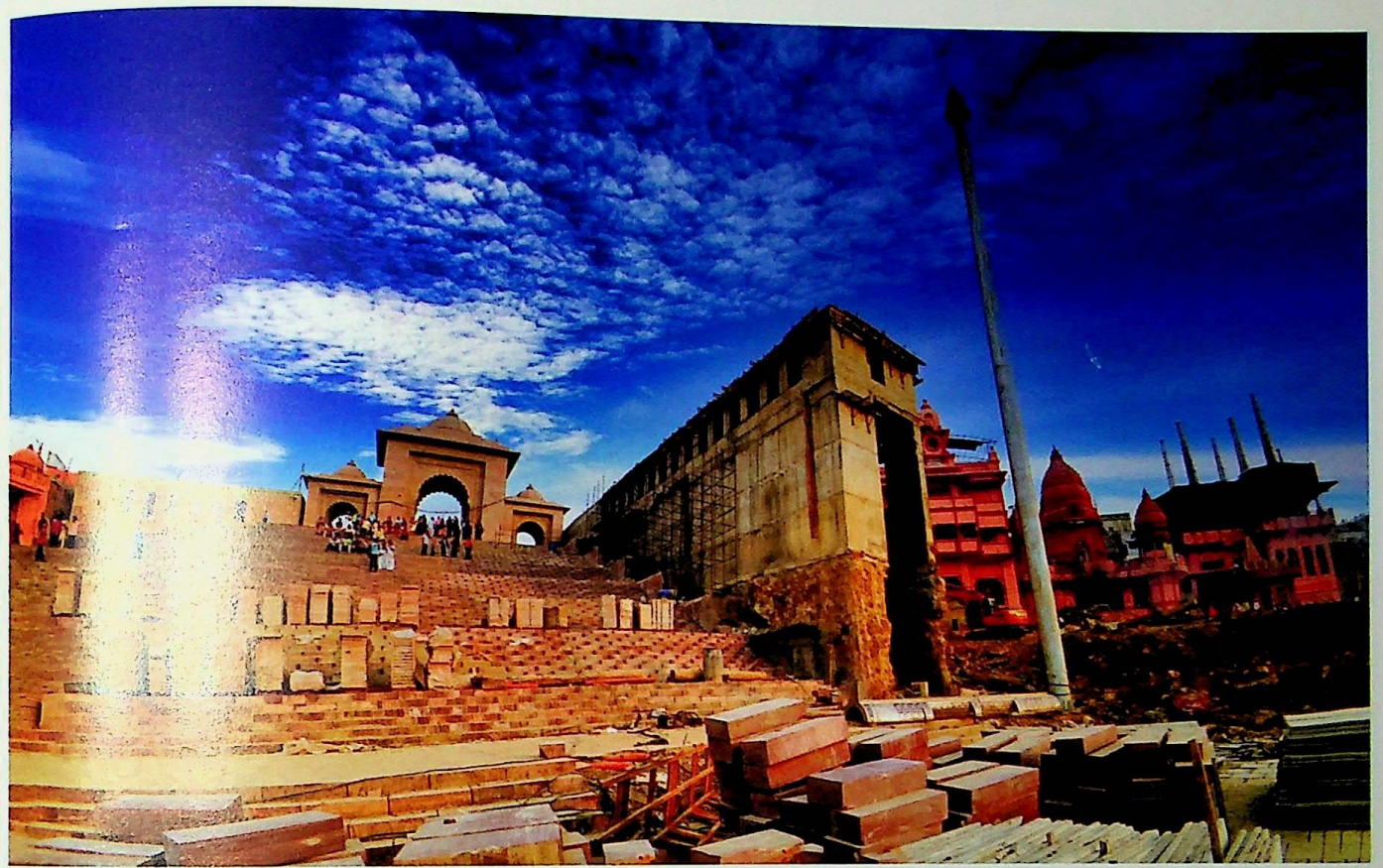
श्री काशी विश्वनाथ धाम गंगाद्वार
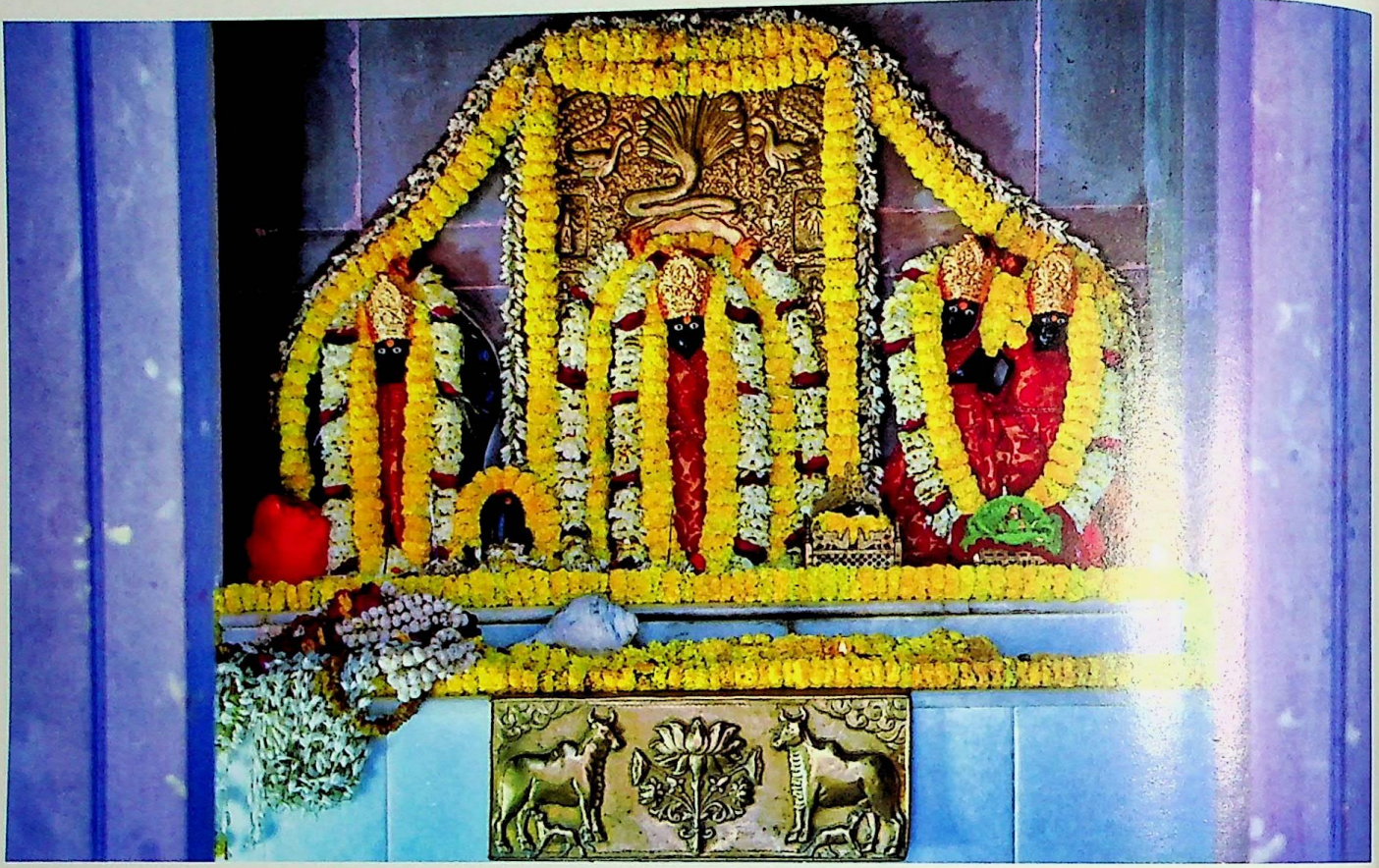
श्री बद्रीनारायण

श्रीमाता पार्वती एवं श्री विनायक

श्री अक्षयवट हनुमान

श्रीमाता अन्नपूर्णा एवं श्रीमाता लक्ष्मी

श्री विनायक

महारानी अहिल्याबाई होल्कर

जन सुविधा केंद्र

श्री काशी विश्वनाथ मंदिर ट्रस्ट की तरफ से बांसफाटक पर जन सुविधा केंद्र स्थापित किया गया है। इस केंद्र के जरिए अब आप सिर्फ तीन सौ रूपए प्रति व्यक्ति का टिकट कटा कर न सिर्फ सुगम दर्शन कर सकते हैं बल्कि इस सुविधा का लाभ उठा कर अपने दर्शन पूजन के लिए निःशुल्क शास्त्री और निःशुल्क लॉकर की सुविधा का भी लाभ ले सकते हैं। साथ में लड्डू का प्रसाद भी मिलेगा। यदि आपने थोड़ी सी राशि और खर्च कर दी तो मंगला आरती, भोग आरती, श्रृंगार आरती, सप्तर्षि आरती और शयन आरती का भी दर्शन कर सकते हैं। मंगला आरती का टिकट 350 रूपए का है जबकि बाकी की तीन अन्य आरतियां 180 रूपए में देखी जा सकती हैं। इसी तरह 780 रूपए का टिकट लेकर आप रूद्राभिषेक भी करा सकते हैं। इस राशि का 480 रूपया मंदिर को जाता है जबकि 150 रूपए पूजा कराने वाले शास्त्री और 150 रूपए पूजन सामग्री का लिया जाता है। मंदिर में दर्शन पूजन का सारा इंतजाम अब ऑन लाइन कर दिया गया है। अब आप चाहें तो हर रोज या प्रति सोमवार को यहां होने वाले संन्यासी भोजन में अंशदान कर सकते हैं।

इतना ही नहीं अब आप महाशिवरात्रि से लेकर श्रावण के सोमवार, दैनिक कालीन श्रृंगार, लक्ष बिल्वार्चन, पूर्णिमा श्रृंगार और मंदिर में जलने वाले अखंड दीप में भी अपना योगदान कर सकते हैं। श्री काशी विश्वनाथ मंदिर ट्रस्ट के जरिए अब आप सत्यनारायण कथा से लेकर एक दिवसीय और पांच दिवसीय महामृत्युंजय जप पूजा भी करा सकते हैं। पांच लीटर से लेकर पांच सौ लीटर तक का दुग्धाभिषेक भी करा सकते हैं। इन सब की फीस है जो सौ दो सौ से लेकर एक लाख रूपए तक है। आप चाहें तो बांसफाटक ऑफिस से बुकिंग कराएं या ऑन लाइन, इस केंद्र से आपको सुविधा भरपूर मिलेगी।

काशी में बाबा के पूजन अर्चन का स्क्रीन पर सीधा प्रसारण

श्री काशी विश्वनाथ धाम में होने वाले पूजन अर्चन का वैसे तो ऑन लाइन सीधा प्रसारण किया जा रहा है लेकिन काशी के दो प्रमुख स्थानों पर भी इसका ऑन स्क्रीन जीवंत प्रसारण किया जा रहा है। गोदौलिया चौराहे पर और वाराणसी कैंट रेलवे स्टेशन पर लगी बड़ी स्क्रीन पर श्री काशी विश्वनाथ मंदिर में चल रहे पूजा पाठ और नैत्यिक आरती का प्रतिदिन सीधा प्रसारण किया जाता है।

नौग्रह महादेव

श्री नंदी देव

दमक रहा है श्री विश्वनाथ दरबार

श्री काशी विश्वनाथ धाम में बाबा का दरबार अब भीतर से बाहर तक स्वर्णिम आभा से दमक रहा है। पहले अंदर और अब बाहरी दीवारों पर भी सोना मढ़ने का कार्य पूरा कर लिया गया है। गर्भगृह की भीतरी दीवारें महाशिवरात्रि पर ही स्वर्ण मंडित कर दी गई थीं। दक्षिण भारत के एक व्यवसायी ने गर्भगृह को स्वर्ण मंडित कराने का संकल्प लिया था। इसके लिए उसने मंदिर प्रशासन को 60 किलोग्राम सोना दान में दिया था। गर्भगृह की भीतरी दीवारों को स्वर्ण मंडित करने का काम जनवरी में शुरू किया गया था। इसके लिए पहले प्लास्टिक, फिर तांबे के सांचे बनाए गए। इसके आधार पर नीचे से ऊपर तक सोना मढ़ा गया। इसकी पहली झलक महाशिवरात्रि से पहले प्रधानमंत्री श्री नरेंद्र मोदी के काशी आगमन पर सबके सामने आयी थी। अब गर्भगृह की बाहरी दीवारों पर भी सोना मढ़ने का काम पूरा हो गया। स्वर्ण मंडित करने के काम को पूरा करने में दिल्ली के एक स्वर्ण व्यवसायी ने अपने बारह कारीगरों के साथ काफी मेहनत की। श्री काशी विश्वनाथ मंदिर ट्रस्ट के अनुसार गर्भगृह की भीतरी दीवारों को स्वर्ण मंडित करने में 37 किलो सोना लगा जबकि चारों द्वार समेत बाहरी दीवारों पर 23 किलोग्राम सोना मढ़ा गया। गर्भगृह और बाहरी दीवारों पर लगे स्वर्ण पत्तरों की सुरक्षा के साथ स्वच्छता की दृष्टि से एक्रेलिक की पारदर्शी शीट लगाई जा रही है।
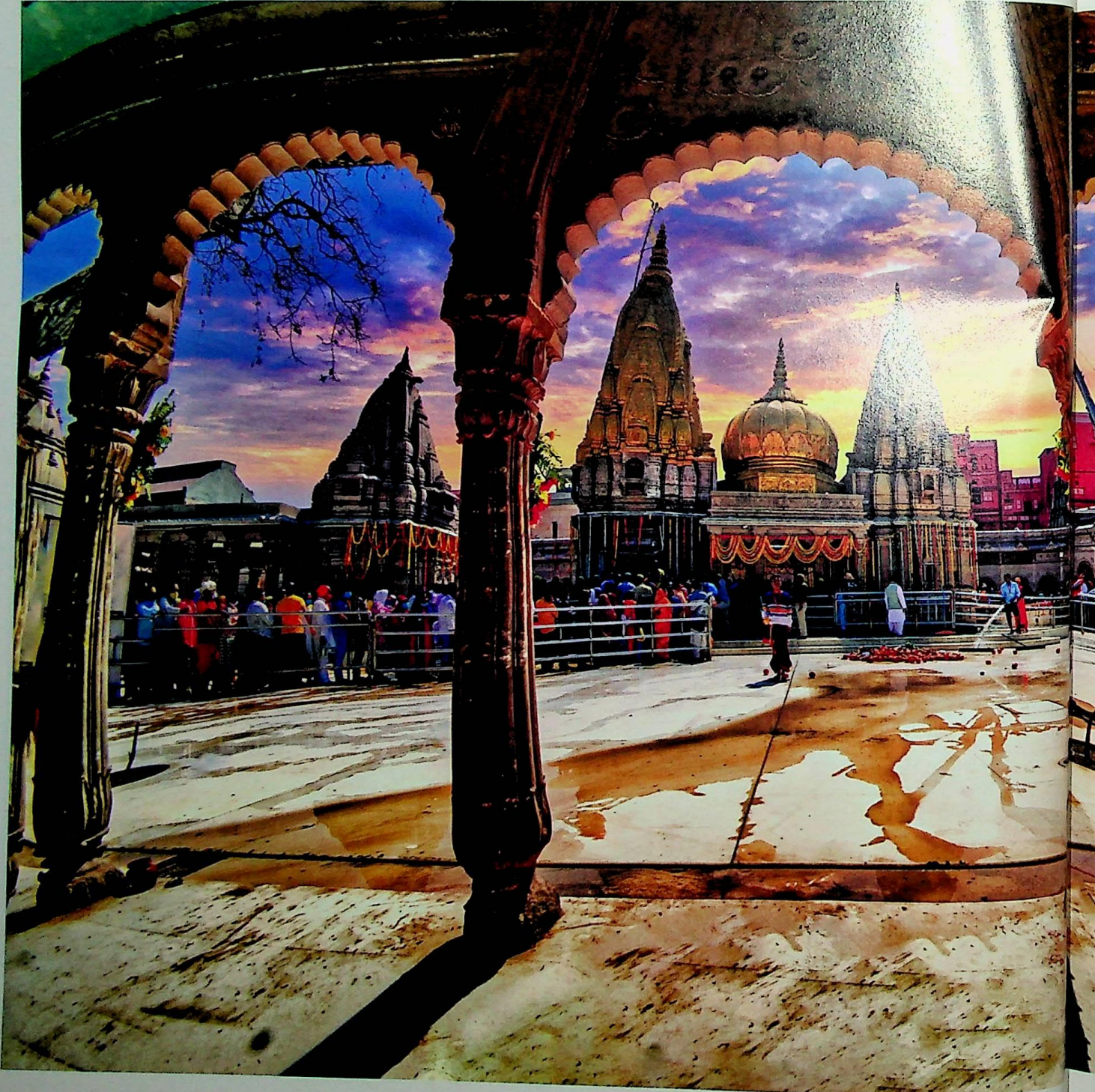
भविष्य की योजनाएं

श्री काशी विश्वनाथ धाम ट्रस्ट भविष्य में दर्शनार्थियों को और अधिक सुविधाएं देना चाहता है। इसके लिए कई योजनाएं सरकार के पास विचाराधीन हैं और कुछ पर कार्य चल रहा है। श्री काशी विश्वनाथ मंदिर आने वाले यात्रियों के सामने सबसे बड़ी समस्या आवागमन की है। ट्रैफिक की है। मंदिर के आसपास मिलने वाले पूजन और प्रसाद सामग्री के क्वालिटी की है। मंदिर के आसपास ठहरने की है। ट्रस्ट इन सबका निराकरण करने में लगा हुआ है। शासन और प्रशासन का उसे भरपूर सहयोग मिल रहा है। मंदिर आने वाले वीआईपी की भीड़ से श्रद्धालुओं को कोई परेशानी न हो इसका प्रयास किया जा रहा है। अतिविशिष्ट लोगों को लालबहादुर शास्त्री हवाई अड्डे से हेलिकाप्टर के जरिए सीधे खिड़किया घाट तक लाने के लिए वहां दो हेलिपैड बनाये जा रहे हैं। खिड़किया घाट से स्टीमर से उन्हें ललिता घाट तक लाये जाने की योजना पर काम चल रहा है। उधर गंगा उस पार पड़ाव से ललिता घाट तक रोप वे बनाये जाने की योजना भी विचाराधीन है। इससे चौक, ज्ञानवापी और गोदौलिया तक लगने वाले जाम से निजात मिल जाएगी। पूजन और भोग सामग्री को ट्रस्ट अपने माध्यम से ही विक्रय करने के प्रयास में है। इससे इन सामग्रियों की गुणवत्ता और कीमतों पर नियंत्रण रहेगा। धाम परिसर और उसके आसपास अतिथि गृह बनाये जाने का भी प्रस्ताव है। इससे महंगे होटलों और गेस्ट हाउसेज से यात्रियों को मुक्ति मिलेगी। इन सारी चीजों की व्यवस्था ऑन लाइन ही किया जाएगा।
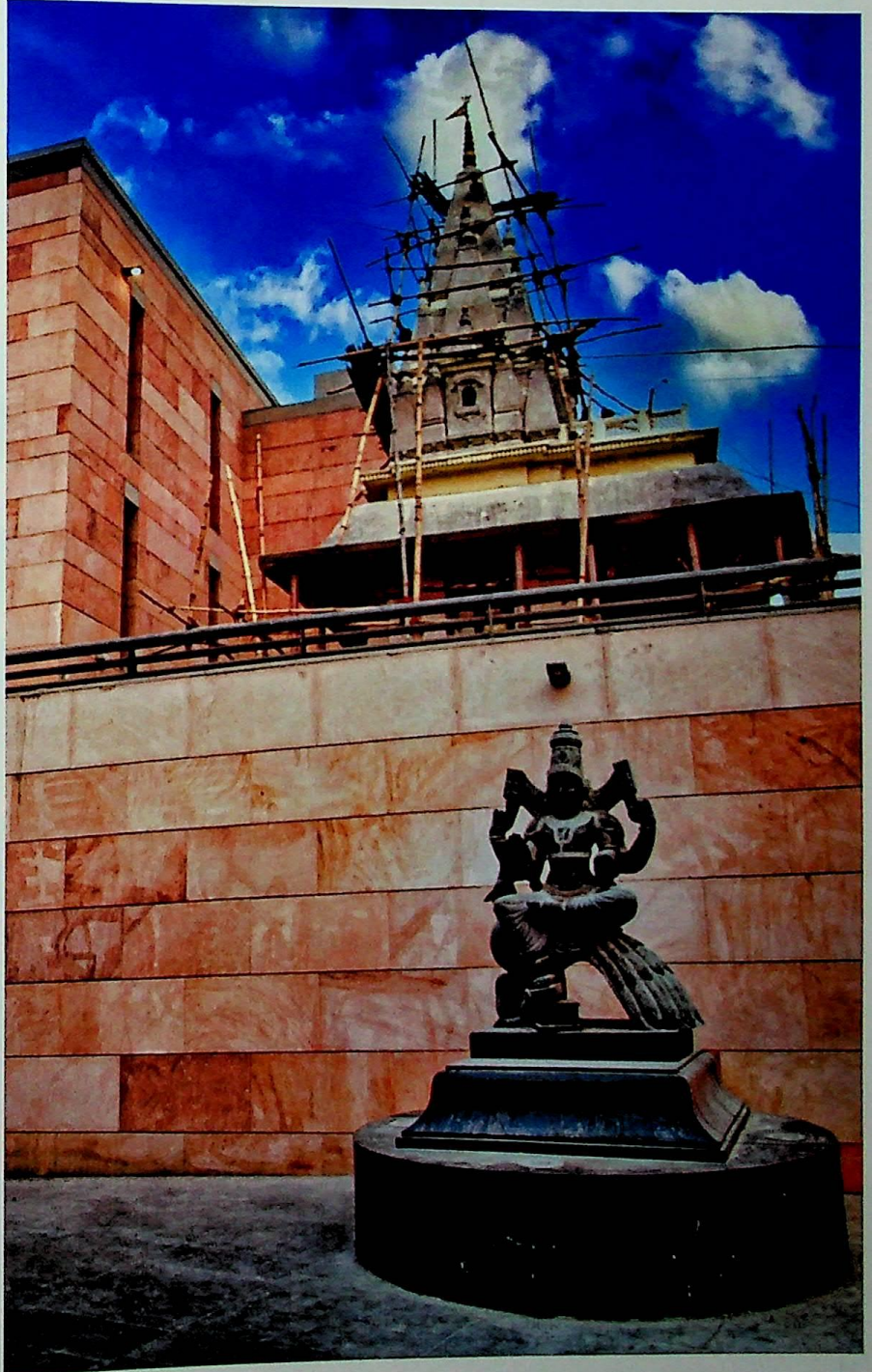
श्री कार्तिकेय

भारत माता
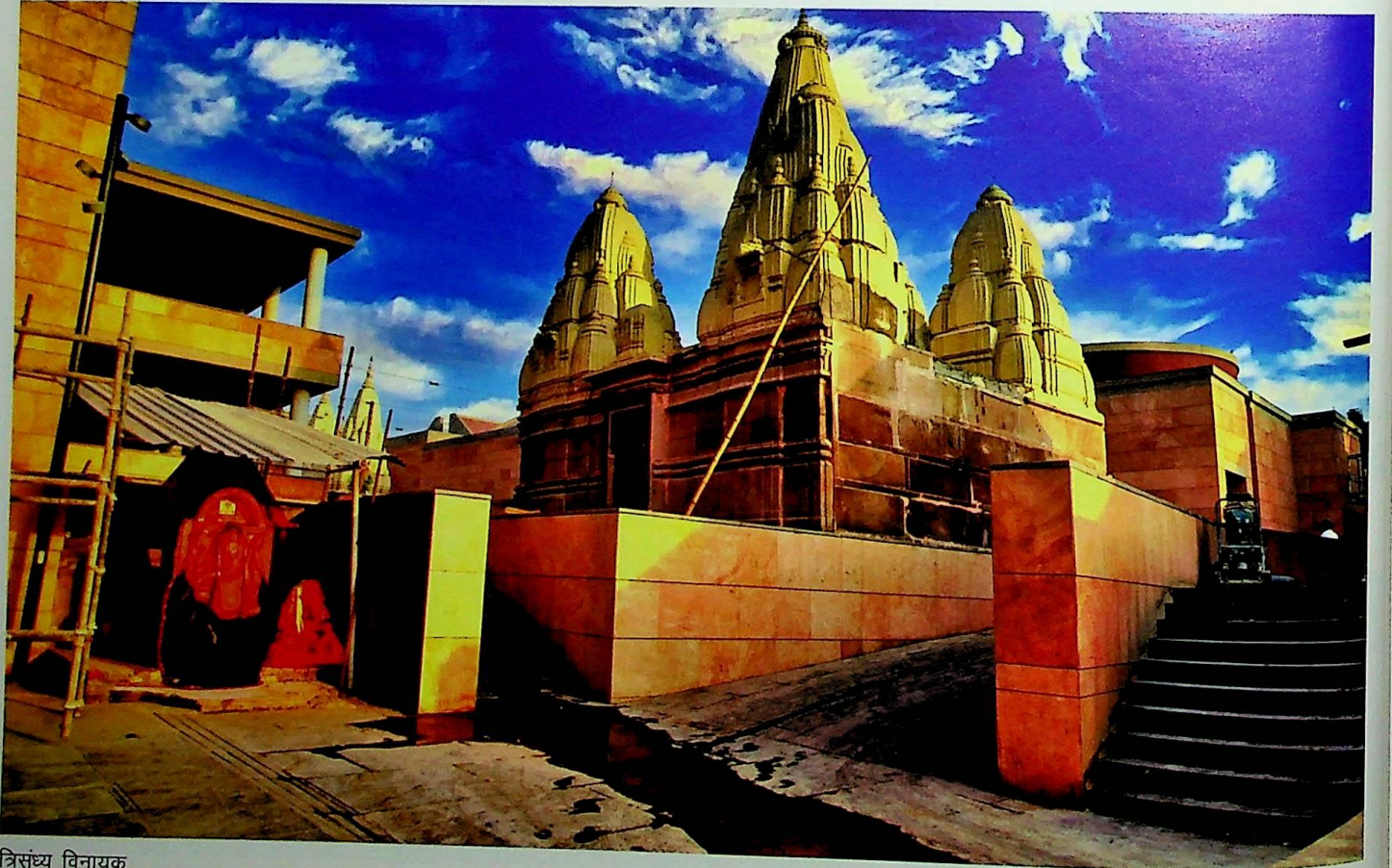
त्रिसंध्य विनायक

श्री विश्वनाथ धाम में अब नहीं होगा प्रदूषण...

श्री काशी विश्वनाथ धाम के भव्य परिसर को संरक्षित करने के साथ ही यहां आने वाले श्रद्धालुओं के स्वास्थ्य को लेकर मंदिर प्रशासन फिक्रमंद है। सब जानते हैं कि मोक्ष तीर्थ मणिकर्णिका घाट श्री काशी विश्वनाथ धाम के बिल्कुल करीब है। मणिकर्णिका घाट पर प्रतिदिन दो सौ से अधिक शवों का अंतिम संस्कार होता है। शवदाह के दौरान राख के छोटे छोटे कण उड़ते हैं। इससे धाम क्षेत्र का वायु प्रदूषित हो रहा था। प्रदूषण के प्रभाव को कम करने के लिए गंगा द्वार के पास प्यूरीफिकेशन सिस्टम बाई आयोनाइजेशन लगाया जाएगा। दरअसल, गंगा द्वार बनने के बाद से श्री काशी विश्वनाथ धाम आने वाले ज्यादातर श्रध्दालु इसी रास्ते से आ रहे हैं। पुरु[illegible]वा बहने के दौरान राख के कणों और शवदाह के दुर्गंध के [illegible]रण [illegible] दिक्कत होती है। एयर प्यूरीफिकेशन सिस्टम हवा में मौजूद [illegible]दूष[illegible]लाने वाले तत्वों को ओजोन में बदल देगा। यही ओजोन [illegible] [illegible]च्छ बनाएगा और गंदगी को सोख लेगा। इससे श्रद्धालु[illegible] [illegible] की समस्या से मुक्ति मिल जाएगी।

धाम में [illegible] का अपना हेल्प डेस्क

28 राज्य [illegible]र [illegible] केंद्र शासित प्रदेशों में बंटे अपने इस देश का नाम भारत है [illegible] [illegible]श्वनाथ धाम में देश के कोने कोने से लोग आते हैं। अपने दे[illegible] के बा[illegible] एक कहावत है कि 'कोस कोस पर बदले पानी, दुई कोस पर [illegible]नी...' तरह तरह की भाषाएं, तरह तरह की जीवन शैली और तरह तरह की संस्कृति। एक दूसरे की भाषा को समझना बूझना अपने आप में एक चुनौती है। लेकिन श्री काशी विश्वनाथ धाम में ऐसा कुछ नहीं होगा। यहां हर राज्य का अपना एक हेल्प डेस्क होगा जो अपने सूबे के लोगों को उनकी अपनी भाषा में हर तरह की सूचना सम्प्रेषित करेगा। उन्हें हर तरह की सुविधा मुहैया कराएगा ताकि श्री काशी विश्वनाथ के भक्त को बाबा धाम में आने के बाद यत्र तत्र भटकना न पड़े। हेल्प डेस्क के लिए श्री विश्वनाथ मंदिर ट्रस्ट की ओर देश की सभी राज्य सरकारों को पत्र लिखा गया है।

शादी ब्याह से लेकर हर तरह के होंगे मांगलिक कार्य

श्री काशी विश्वनाथ धाम बाबा का खुला दरबार है। यहां आप यज्ञोपवीत से लेकर शादी विवाह तक के हर तरह के मांगलिक आयोजन कर सकते हैं। आपको रूद्राभिषेक कराना हो या किसी प्रकार का यज्ञ हवन... किसी तरह का जप अनुष्ठान कराना हो या फिर भजन कीर्तन... या फिर दस बीस हजार लोगों का भंडारा ही कराना हो, आप चले आइए श्री काशी विश्वनाथ धाम। यहां आपके सारे मनोरथ पूर्ण हो जाएंगे। इस कार्य के लिए धाम परिसर में बड़े बड़े हॉल बनाये गये हैं। आपके मांगलिक आयोजनों को कराने के लिए देश की बड़ी इवेंट मैनेजमेंट कम्पनियों को आमंत्रित किया गया है। हर काम के लिए एक रेट फिक्स किया जाएगा। हर काम की पहले से बुकिंग होगी और लोग पैसा जमा कर अपना काम करा सकेंगे।

धाम में खुलेगा प्राथमिक स्वास्थ्य केंद्र

धाम में आने वाले दर्शनार्थियों के प्रवाह को देखते हुए श्री विश्वनाथ मंदिर ट्रस्ट ने परिसर में आधुनिकतम प्राथमिक स्वास्थ्य केंद्र खोलने का निर्णय किया है। कहने को तो ये पीएचसी होगा लेकिन यहां किसी आधुनिकतम अस्पताल की सुविधाएं मिलेंगी। केंद्र में आधा दर्जन से ज्यादा एनएम, स्टाफ नर्स, वॉर्ड बॉय, एम्बुलेंस के अलावा कम से कम आधा दर्जन डॉक्टर्स लगातार ड्यूटी करेंगे। इस स्वास्थ्य केंद्र में पैरा मेडिकल स्टाफ के अलावा फार्मासिस्ट और लैब टेक्निशियन भी रहेंगे।

श्री अमृतेश्वर महादेव

बैंक तो खुलेगा पर खुद से करना होगा ट्रांजेक्शन

श्री काशी विश्वनाथ धाम में जल्द ही दो राष्ट्रीयकृत बैंकों की शाखाएं खुलेंगी। इन अत्याधुनिक बैंक शाखाओं में ग्राहकों को अपना सारा काम या सारे ट्रांजेक्शंस खुद से करने होंगे। इन कम्प्यूटरीकृत बैंक शाखाओं में ग्राहकों की मदद के लिए सिर्फ एक एक कर्मचारी ही रखा जाएगा। भारतीय स्टेट बैंक और केनरा बैंक ने श्री विश्वनाथ धाम में अपनी शाखा खोलने में रुचि दिखायी है।

आग लगी तो फायर फाइटर खुद करेंगे नियंत्रण

श्री काशी विश्वनाथ धाम को हर तरह की आधुनिकतम सुविधाओं से लैस किया गया है। हर तरह की आपदा से बचने और बचाने का यहां इंतजाम है। ईश्वर करे ऐसा कभी न हो लेकिन धाम में अगर कभी अग्निकांड जैसा हादसा हो जाता है तो यहां उससे तुरंत निबटने का इंतजाम है। आग लगने के साथ ही यहां के स्वचालित फायर फाइटर यंत्र तुरंत अपना काम शुरू कर देंगे। परिसर में करीब डेढ़ लाख लीटर का एक वॉटर टैंक बनाया गया है। टैंक में लगे जॉकी पम्प ऑटो मोड में रखे गये हैं। ये पम्प आग की भनक पाते ही आग बुझाने का काम शुरू कर देते हैं। इसके अलावा टैंक के साथ लगाये गये इलेक्ट्रॉनिक पम्प भी पूरे प्रेशर के साथ आग बुझाने में लग जाते हैं। किसी कारणवश अगर ये दोनों पम्प अपना काम नहीं कर पाए तो डीजल पम्प तत्काल चालू हो जाता है। धाम परिसर में कुल 96 फायर हाइड्रेंट लगाये गये हैं। इनमें से 41 एक्सटर्नल और 55 इंटरनल हैं। इनके अलावा 494 स्मोक डिटेक्टर और 46 हीट डिटेक्टर लगाये गये हैं। 224 फायर इंस्टिंगिशर भी लगाये गये हैं। कंट्रोल रूम में 162 सीसी टीवी कैमरे लगे हुए हैं जिनके जरिए पूरे धाम की निगरानी की जाती है।

बनेगी फ्लोटिंग बाथ जेटी

सड़क मार्ग के बजाय गंगा द्वार से श्री काशी विश्वनाथ धाम आने वाले दर्शनार्थियों को सुविधा देने की दृष्टि से राजघाट के बगल में नमो घाट पर फ्लोटिंग बाथ जेटी बनायी जाएगी। सब जानते हैं कि पुराने समय के खिड़किया घाट का नाम बदल कर नमो घाट कर दिया गया है। 28 मीटर लम्बी और दस मीटर चौड़ी इस जेटी पर गंगा स्नान की सुविधा भी होगी। यहां लोगों के बैठने के लिए कुर्सियां और नहाने के लिए बाथ टब भी होंगे। इस जेटी पर बैटरी चालित नावें होंगी जि[illegible] लोग सुगमता के साथ ललिता घाट स्थित गंगा द्वार तक जा सकेंगे।

सावन में शुरू हो जाएगा फूड कोर्ट

देश के बड़े महानगरो की तर्ज पर धाम परिसर में [illegible] किया जाएगा। इसके लिए टेंडर आमंत्रित किये गये हैं औ[illegible]से हर हाल में शुरू कर दिया जाएगा। फूड कोर्ट्स में उचि[illegible]त्विक नाश्ता, चाय–कॉफी, कोल्ड ड्रिंक्स और भोजन की सु[illegible]करायी जाएगी। फूड कोर्ट में हाइजिन का पूरा ध्यान रखा जाए[illegible]र वर्ग मीटर में फैले धाम परिसर में 14 से ज्यादा भवनों का नि[illegible] गया है।

नीलकण्ठेश्वर में शुरू हुआ दर्शन पूजन

धाम बनाने के लिए श्री काशी विश्वनाथ मंदिर क्षेत्र से जिन मंदिरों को अस्थायी रूप से हटाया गया था उनकी पुनर्स्थापना कर दी गयी है। पिछले दिनों नीलकंठेश्वर और अमृतेश्वर महादेव [illegible] उनका विधिवत दर्शन पूजन शुरू कर दिया [illegible]ले ये दोनों ही देवस्थान संकरी गलियों में थे। धाम [illegible] श्री काशी विश्वनाथ के मुक्त परिसर में इन्हें स्थान [illegible] दोनों काशी खंडोक्त देवालयों में लोग सहज भाव से दर्श[illegible] सकेंगे।

श्री नीलकण्ठ महादेव
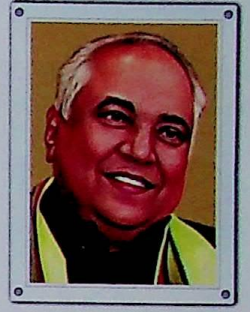
शिव और अशिव का द्वंद्व

ज्ञानवापी

बुद्धिनाथ मिश्र

1957 में जब मैं दरभंगा जनपद के अपने गाँव से संस्कृत पढ़ने काशी आया था, तब दशाश्वमेध घाट के पास ही मान मदिर मुहल्ले में रहने लगा था। रोज सबेरे गंगा स्नान कर सरस्वती फाटक होते हुए वर्तमान विश्वनाथ मंदिर में आकर बाबा विश्वनाथ के दर्शन करना हम संस्कृत विद्यार्थियों की दिनचर्या थी। बाबा के दर्शन और गंगाजल चढ़ाने के बाद ज्ञानवापी की ओर जाकर नंदी भगवान के दर्शन करना और कूप को प्रणाम करना अपेक्षित था। आम तौर पर अधिकांश लोग मानते थे कि म्लेच्छों के स्पर्श से डरकर बाबा कूप में छिप गए थे। कुछ लोग यह भी कहते थे कि मुगलिया फ़ौज आने से पहले ही एक पुजारी बाबा को लेकर कुएँ में कूद गया था। श्रद्धालु जन नेपाल-नरेश द्वारा निर्मित विशालकाय नंदी भगवान के बगल में स्थित कूप पर बिछे कपडे पर एक पैसा-दो पैसा फेंक कर प्रणाम कर लेते थे। उन दिनों ज्ञानवापी मस्जिद के पीछे पत्थर की फर्शवाला बड़ा-सा भूखंड था, जिसपर हर शाम संघ की विश्वेश्वर शाखा लगती थी,जिसमें भाग लेना मुझे भी अच्छा लगता था। विशेष अवसरों पर वहाँ पं रामकिंकर उपाध्याय जैसे श्रेष्ठ कथावाचकों का प्रवचन होता था या मानस नवाह यज्ञ जैसे धार्मिक आयोजन होते थे,जिन्हें दूर-दूर तक गलियों में टंगे लाउड स्पीकर जन-जन तक पहुँचाते थे। नंदी भगवान के पास ही पुजारी व्यास जी का मकान था, जिसके दरवाजे पर सफ़ेद काकातुआ आने-जानेवालों पर टिप्पणी करता रहता था। मस्जिद के पीछे की दीवार प्राचीन विश्वेश्वर मंदिर की कलात्मक दीवार थी, जिसे मुग़ल फ़ौज ने जान-बूझकर भक्तों को नीचा दिखने के लिए छोड़ दिया था। हम शाखा में नियमित जानेवाले लड़के उसे देखने के अभ्यस्त हो गए थे। यह भी सहज अनुमान लगाते थे कि विशाल नन्दी के सामने ही प्राचीन विश्वेश्वर का शिवलिंग होगा, जिसे आक्रांताओं ने नष्ट कर दिया। यह तो अभी अभी अदालती सर्वेक्षण से पता चला कि प्राचीन विश्वेश्वर मंदिर का शिवलिंग, मस्जिद के वज़ूखाने में उसी जगह विद्यमान है, जिस ओर नंदी का मुख है।

सनातन धर्म सभी धर्मों या पंथों के प्रति आदर भाव सिखाता है। यह भी सर्वविदित है कि काशी नगरी बाबा विश्वनाथ की नगरी है। बाबा के समीप आकर सारे विलोम अनुलोम हो जाते हैं। शिव परिवार में बाबा का वाहन नंदी और माई का वाहन सिंह है। दोनों के बीच शत्रु भाव है, लेकिन मिलकर रहते हैं। इसी प्रकार बाबा के गले में सर्प और कार्तिकेय का वाहन मयूर तथा गणेश का वाहन चूहा भी आपसी शत्रुता भूलकर रहते हैं। यही स्वाभाविक उदारता काशी की भी है। सारी दुनियाँ से लोग आकर यहाँ रहते हैं और किसी को आपत्ति नहीं होती है। इसके घाट भी विभिन्न रियासतों ने बनवाये थे। ऐसे पवित्र नगर में इतनी नफ़रत कहाँ से आयी कि मस्जिद में नमाज पढ़नेवाले लोगों को वज़ू कर विश्वेश्वर शिवलिंग पर कुल्ला करने में हिचक नहीं हुई! यह भी संभव है कि गहरे पानी में शिवलिंग होने के कारण नमाजियों ने उन्हें देखा ही न हो। जो भी हो, देश का लोकतंत्र संविधान के अनुसार क़ानून से चलता है। इसलिए दोनों पक्ष अपनी-अपनी बात सबूतों के साथ अदालत में रख रहे हैं। इसके लिए संग्रहालयों और ग्रंथालयों को खंगाला जा रहा है। इस मामले की गंभीरता को न समझनेवाले लोग ही इस विवाद को 'नफ़रत फ़ैलाने' और 'गड़ा मुर्दा उखाड़ने' की बात कहते हैं। आज हिन्दू पक्ष जिस विशाल प्रस्तर खंड को शिवलिंग कह रहा है, उसे मुस्लिम पक्ष फव्वारा मानने पर अड़ा है। यह पूरा प्रकरण सुप्रीम कोर्ट के विचाराधीन है। अदालत द्वारा नियुक्त सर्वे कमिश्नर ने मस्जिद के भीतर जाकर वीडियोग्राफी की है, जिसमें तमाम हिन्दू प्रतीक-चिह्न मिलने की खबर हैं। वैसे भी पश्चिमी दीवार तो चीख-चीख कर अपने मंदिर होने का प्रमाण दे ही रही है। अभी तक जो तस्वीरें सोशल मीडिया में आयी हैं, उनमें शिवलिंग के ऊपर कुछ सफेद सीमेंट जैसी वस्तु चिपकी हुई है।

अब तक जो हुआ सो हुआ। अब यह परिसर अदालत की देखरेख और केंद्रीय सुरक्षा बल के नियंत्रण में है सुना है कि शिवलिंग कुएँ के गहरे पानी में डूबा हुआ था, जिसे सर्वेक्षक टीम ने हजारों लीटर पानी निकालकर ऊपर किया। वज़ूखाने में जो शिवलिंग मिला है, वह सामने खड़े नंदी भगवान की डीलडौल के अनुरूप ही है। प्रायः शिवालयों में नंदी का स्वरूप शिवलिंग के अनुरूप ही होता है। दक्षिण के वृहदीश्वर विराट शिवलिंग है तो नंदी भी विराट है। विश्वेश्वर मंदिर का शिवलिंग भी विशाल होना चाहिए। क्योंकि उनका वाहन नंदी विराट है।

औरंगजेब के फरमान से वाराणसी के जिन तीन बड़े मंदिरों के ऊपर मस्जिद बनाए गए, वे हैं - विश्वेश्वर मंदिर की जगह ज्ञानवापी मस्जिद, पंचगंगा घाट पर बिंदु माधव मंदिर की जगह धरहरा मस्जिद (यहाँ के दो मीनारों के ऊपर चढ़ कर पूरा शहर देखा जाता था। इनमें एक धरहरा मेरे समय में भी 'माधो सिंह का धरहरा' के नाम से मौजूद था) और कृत्तिवासेश्वर मंदिर की जगह दारानगर में आलमगीरी मस्जिद। उस समय वाराणसी आए विदेशी यात्रियों ने भी अपने संस्मरण में लिखा है कि प्राचीन मंदिरों को मुस्लिम शासकों ने बेरहमी से ध्वस्त कर मस्जिद और दरगाह में बदल दिया। वैसे, औरंगजेब की फ़ौज को विश्वेश्वर मंदिर को तोड़ने से पहले दशनामी साधुओं से युद्ध करना पड़ा था। अपने अखाड़ों में प्रशिक्षित वे साधू शास्त्र और शस्त्र दोनों में दक्ष होते थे। दुर्भाग्यवश, मुग़लिया फ़ौज की तुलना में साधुओं की संख्या अपर्याप्त थी। औरंगजेब ने काशी का नाम भी बदलकर 'मोहम्मदाबाद कर दिया था, जिसे काशी के लोगों ने स्वीकारा नहीं। प्रयागराज को भी उसी बादशाही सनक में कभी इलाहबाद कर दिया गया था, जिसे अब जाकर यूपी सरकार ने हटाकर पुराना नाम बहाल किया है।

आदि विश्वेश्वर मंदिर के स्वरूप और महत्व के बारे में सनातन धर्म के तमाम शास्त्रीय ग्रंथों में उल्लेख हैं, जबकि मंदिर को तोड़ने का औरंगजेब का फारसी में लिखा फरमान औरंगजेब के दरबारी लेखक शकील मुस्तैद खान की 1710 में लिखी पुस्तक 'मा असीरे आलमगीरी' में नकल के रूप में दर्ज है। एशियाटिक सोसाइटी में सुरक्षित, औरंगजेब के उस फरमान में ऐसा कुछ भी नहीं है जिससे साबित हो सके कि औरंगजेब या उसके बाद के शासकों ने विवादित भूमि पर वक्फ बनाने या मुस्लिम निकाय को जमीन सौंपने का आदेश दिया था। मस्जिद वक्फ की जमीन पर ही बनाई जा सकती है, जबकि इस मंदिर की भूमि और संपत्ति अनादि काल से आदि विश्वेश्वर की है।

इसलिए किसी मुस्लिम शासक के आदेश के तहत मंदिर की भूमि पर जबरन किए गए निर्माण को मस्जिद मानना इस्लाम के वसूलों के खिलाफ है। सुनता हूँ, इस्लाम में तो यहाँ तक निर्देश है कि अगर किसी जगह नमाज पढ़ने से किसी को असुविधा या एतराज हो, तो वहाँ नमाज मत पढ़ो। मंदिर की तो बात छोड़िए, किसी की जमीन पर जबरदस्ती बनायीं गई मस्जिद में नमाज पढ़ना भी हराम है। मंदिरों को तोड़कर बनी मस्जिदों में नमाज पढ़ना तो और भी हराम है। काशी में आदि विश्वेश्वर ज्योतिर्लिंग स्वयंभू देवता हैं और द्वादश ज्योतिर्लिंगों में सबसे प्राचीन हैं, जिसके अनेकों शास्त्रीय प्रमाण है। ब्रिटिश शासनकाल में, 1810 ईस्वी में वाराणसी के तत्कालीन अंग्रेज अधिकारी वाटसन ने अध्यक्ष परिषद को पत्र लिखकर ज्ञानवापी क्षेत्र को हमेशा के लिए हिंदुओं को सौंपने का सुझाव दिया था।

मान्यता है कि भगवान शिव स्वयं अविमुक्तेश्वर लिंग रूप में यहां विराजमान है। आक्रांताओं द्वारा कई बार शिवलिंग को हटाने की कोशिश की गई, लेकिन सफलता नहीं मिली। मुगलकालीन इतिहासकारों ने भी लिखा है कि शिवालय को ध्वंस करने के बाद शिवलिंग को अपने साथ ले जाने की कोशिश हुई, मगर शिवलिंग अपने मूल स्थान से हिला नहीं, अतः उसे छोड़ दिया गया। प्रथमदृष्ट्या ही 'ज्ञानवापी मस्जिद' नाम में ज्ञानवापी शब्द संस्कृत का है, जिसका अर्थ है ज्ञान का कुआँ। पूरे इस्लामिक साहित्य में यह शब्द नहीं मिलेगा, जबकि संस्कृत ग्रंथों में इसकी भरमार है। यह एक आम मुस्लिम का कहना है कि "ज्ञानवापी तो नाम ही हिन्दू धर्म का है। इस्लाम में ऐसी जगह पर नमाज पढ़ना हराम बताया गया है। हिंदुस्तान के मुसलमानों छोड़ दो उस जगह को और बड़ा दिल दिखाओ।" पाकिस्तान से एक मुसलमान ने ट्वीट कर सलाह दी है कि 'कुरान में लिखा है कि जिस जगह दूसरे धर्म की चीजें हों, वहाँ मुसलमान नमाज पढ़े तो गुनाह होता है। इस मस्जिद में अगर हिन्दू धर्म के चिह्न मिले हैं तो भारतीय मुसलमानों को तुरंत यह जगह छोड़ देनी चाहिए। हिन्दू-मुस्लिम एकता के लिए पारम्परिक भजन को तोड़कर 'अल्ला ईश्वर तेरो नाम 'गानेवाले महात्मा गाँधी का भी स्पष्ट विचार था कि 'मंदिरों को तोड़कर बनायीं गयी मस्जिदें गुलामी के चिह्न हैं'। मैं काशी और अयोध्या दोनों से सुपरिचित हूँ। इसलिए दावे के साथ कह सकता हूँ कि बाबरी मस्जिद भी बाहरी नेताओं का खेल था और ज्ञानवापी मस्जिद भी। वर्ना हैदराबाद से ओवैसी का कूदकर आने का कोई तुक नहीं था। उसे यूपी का मुस्लिम वोट बैंक सपा के हाथ से छीनने का अवसर इसमें दिख रहा है। सपा भी आसानी से छोड़नेवाला नहीं। इसलिए यही दोनों ज्यादा मुखर हैं। काशी के स्थानीय मुसलमान इनके उकसावे के बावजूद शान्त हैं, क्योंकि उनकी रोजी -रोटी नगर के उदार सामाजिक ताने-बाने से चलती है।

शिवलिंग : ब्रह्माण्ड की आकृति

संस्कृत में लिंग का अर्थ चिह्न, प्रतीक या पहचान है।इसी अर्थ में पुंल्लिंग,स्त्रीलिंग और नपुंसकलिंग शब्द बनते हैं । (जननेन्द्रिय के लिए संस्कृत मे अलग शब्द शिश्न है।) इस प्रकार शिवलिंग का अर्थ हुआ शिव का प्रतीक,शिव की पहचान। इसका रहस्य यह है कि योगीश्वर शिव समाधि की अवस्था में निराकार यानी शून्य (आकाश) हो जाते हैं। उनकी उस अवस्था की सुरक्षा का दायित्व इनके सबल वाहन नन्दी पर रहता है।इसीलिए हर शिवालय में नंदी का मुख अनिवार्यतः शिवलिंग की ओर ही रहता है। शिवलिंग को प्रकाश स्तंभ/लिंग, अग्नि स्तंभ/लिंग, ऊर्जा स्तंभ/लिंग और ब्रह्माण्डीय स्तंभ/लिंग (कॉस्मिक पिलर /लिंग) भी कहते है। विज्ञान के अनुसार, ब्रह्माण्ड दो तत्वों से निर्मित है- ऊर्जा और पदार्थ। हमारा पार्थिव शरीर पदार्थ है जबकि आत्मा ऊर्जा है। शिव ऊर्जा और शक्ति पदार्थ का प्रतीक बनकर शिवलिंग कहलाते हैं। इस प्रकार शिवलिंग हमारे ब्रह्मांड की आकृति है। कुछ स्थानों पर गहन समाधि अवस्था में शिव ज्योति स्वरूप हो जाते हैं। ऐसे 12 स्थानों पर उनके ज्योतिर्लिंग यानि प्रकाश स्वरूप की पूजा होती है। इन द्वादश ज्योतिर्लिंगों में काशी विश्वनाथ प्रथम हैं। काशी में जिस जगह ज्ञानवापी परिसर है, उसे शिव-पार्वती का आदि निवास माना जाता है। इसलिए यहीं आदिलिंग है, जिसकी चर्चा महाभारत और उपनिषदों में अविमुक्तेश्वर के रूप में है। विश्वनाथ मंदिर की प्राचीनता का अनुमान इसीसे लगाया जा सकता है कि ईपू 11 वीं शताब्दी में राजा हरिश्चंद्र ने उस प्राचीन मंदिर का जीर्णोद्धार किया था। तदनन्तर सम्राट विक्रमादित्य ने उसका जीर्णोद्धार किया। सन् 1194 में मुहम्मद [illegible] ने उस प्राचीन मंदिर को लूट-पाटकर तोड़ दिया। हिन्दुओं ने उसे फिर [illegible] लिया, मगर 1447 में जौनपुर के सुलतान द्वारा तोड़ दिया गया। [illegible] डरमल की सहायता से पं नारायण भट्ट ने 1585 में उसी [illegible] व्य मंदिर बनवाया। शाहजहाँ जब दिल्ली की गद्दी पर बैठा [illegible] को तोड़ने का हुक्म देकर अपनी फ़ौज को भेजा। स्थानीय [illegible] विरोध के कारण विश्वनाथ मंदिर तो नहीं टूटा, मगर इसी [illegible] दिर तोड़ दिए गए। 18 अप्रैल 1669 को औरंगजेब ने विश्वनाथ [illegible] ड़ने का फरमान जारी किया था और 2 सितम्बर को हुक्म तामील [illegible] सूचना उसे दे दी गई। 1752 से 1780 तक मराठा सरदारों ने पूरी शक्ति [illegible] मंदिर मुक्ति का अभियान छेड़ा। 1777 से 1780 की अवधि में इंदौर की प्रतापी महारानी अहिल्या बाई ने छोटा-सा नया कलात्मक मंदिर बनवाया, जो आज का विश्वनाथ मंदिर है। इसके शिखर को स्वर्ण मंडित पंजाब के महाराजा रणजीत सिंह ने किया था।

मंदिरों की सांस्कृतिक भूमिका

मुग़ल बादशाहों द्वारा मंदिरों को तोड़ने के कई [illegible] कारण तो यही है कि कुरान बुतपरस्ती (मूर्तिपूजा) को [illegible] मूर्तिपूजकों और इस्लामेतर पंथ पर चलनेवाले को काफिर। [illegible] की कुछ आयतें काफिरों को मारने और उनके पूजा स्थलों को तोड़ने पर जन्नत पाने का लालच देती हैं, जहाँ 72 हूरें (अप्सराएँ) मिलती हैं। इस एक भ्रामक प्रलोभन के सहारे आतंकी लोग हजारों युवकों को आत्मघाती बनाने में सफल भी हुए हैं। दूसरा कारण यह है कि मंदिर हिन्दू सनाज के शिक्षा के केंद्र रहे हैं। संस्कृत के विद्यार्थियों को निःशुल्क शिक्षा, आवास, भोजन, वस्त्र आदि सारी व्यवस्था मंदिर के चढ़ावे से होती थी। उन विद्यालयों में योग्यतम विद्वान नियुक्त थे, जो बिना किसी वेतन के विद्यादान करते थे और इस दान को सर्वोत्तम दान मानते भी थे। यह परम्परा प्राचीन भारत के गुरुकुलों से चली आ रही थी, जिसमें आचार्य शिष्य को अपने आश्रम में रखकर पढ़ाते थे और दीक्षांत के समय शिष्य उन्हें यथाशक्ति गुरुदक्षिणा देकर उऋण होता था। इन मंदिरों को तोड़ने का मतलब भारतीय शिक्षा के मेरुदंड को तोडना था। प्राचीन नालंदा विश्वविद्यालय के विशाल पुस्तकालय को बख्तियार खिलजी द्वारा जलाने का भी यही मकसद था। ईरान (आर्यन) पहले फारस या पारस था। सातवीं सदी में जब अरब के इस्लामी आक्रांताओं ने आक्रमण कर उस पर कब्ज़ा किया, तो सबसे पहले वहां के पुस्तकालयों को नेस्तनाबूद किया, जिससे जरथुस्त्र के अनुयायी समाज की भाषा और संस्कृति विलुप्त हो गई और वह पूरी तरह अरबी इस्लाम का गुलाम होकर रह गया। चाणक्य का भी कहना है कि किसी देश को गुलाम बनाने के लिए उसकी भाषा और संस्कृति को नष्ट करो। अंग्रेजों ने भी अपने उपनिवेशों में यही किया। मंदिरों की मूर्तियों को तोड़ने का तीसरा कारण यह ख्याति रही है कि मूर्ति के नीचे बड़ी संपत्ति है। शास्त्रीय विधान के अनुसार यजमान लोग प्रतिमा स्थापित करते समय उसके नीचे सोना-चांदी, मणि-माणिक्य रखते थे और अगर यजमान राजा हुआ, तो वह मणि-माणिक्य करोड़ों का होता था।

मंदिर की सारी सम्पत्ति उसमें स्थापित देवता को समर्पित होती है। भारतीय कानून में मंदिर के देवता हमेशा नाबालिग होते हैं और न्यासी लोग उनके सेवक रूप में सारा प्रबंध कार्य करते हैं। पहले राजतंत्र में राजा मंदिर के इष्टदेव का दास होता था। इसीलिए,केरल का राजा अपने को पद्मनाभ दास यानी भगवान पद्मनाभ का सेवक मानता था। इसी भावना ने भारतीय राजाओं को बाहर से आने वाले अन्य पंथ के प्रचारकों को भी 'अतिथि - देवो भव' के अनुसरण में देवता मानने और चर्च -मस्जिद आदि बनाने के लिए उदारतापूर्वक जमीन देने की प्रेरणा भी दी।दूसरे देशों में इस प्रकार की उदारता असंभव थी। पश्चिमी सीमान्तों के लुटेरे कबीलों को इसी भारतीय उदारता ने आगे बढ़कर अपना सिक्का चलाने का मौका दिया।

12 मार्च,20[illegible] को [illegible]नऊ के शिया नेता सैयद वसीम रिज़वी (अब जितेंद्र त्यागी) ने [illegible] अपील की थी कि कुरान में 26 आयतें बाद में जोड़ी गयी [illegible] कुरान की मूल भावना से मेल नहीं खातीं।इसलिए उन्हें भारत [illegible] की अनुमति दी जाए। काफिरों यानि दूसरे पंथ के लोगों को [illegible]त भी उन्हीं में से एक है। हमारे देश की कुशिक्षा या भ्रांतिमू[illegible] भारतीय मुस्लिम समाज को अपने हिन्दू पूर्वजों तक जाने के ब[illegible] भ्रम में जीने दिया कि वे मुगलों के वंशज हैं, जबकि यह बात [illegible] दुनि[illegible] मानती है कि वे कन्वर्टेड मुसलमान हैं, जिन्हे इस्लाम के मूल देश [illegible] दोयम दर्जे का मुसलमान मानते हैं। जिस जाति-पाँति की व्यवस्था से भागकर उन्होंने पंथ बदला, वह वहाँ भी उनका पीछा नहीं छोड़ रही है।

मंदिर ऊर्जा के केंद्र

भारत में देवालय प्रार्थना का नहीं, ऊर्जा के संचय का स्थान माना जाता है। इसलिए, मंदिरों में अन्य पंथों के पूजा स्थलों की भांति बड़ा सभागार नहीं होता है, जहां अधिक लोग जुटकर प्रार्थना कर सकें। मंदिर में केवल गर्भगृह होता है, जहां मुश्किल से दस लोग खड़े हो सकते हैं। प्राचीन मंदिरों में गर्भगृह इतना छोटा है कि दो -चार व्यक्ति ही आ पाते हैं। इसलिए मन्दिर में खड़े होकर देव-प्रतिमा का दर्शन करना अपने भीतर ऊर्जा संचित करना है। सनातन धर्म में परमेश्वर को ब्रह्म कहा गया है। महर्षि पतंजलि ने ब्रह्म को एक सूत्र में मात्र तीन शब्दों में निरूपित किया है -'सत्यं ज्ञानम् अनन्तं ब्रह्म ' यानी ब्रह्म सत्य स्वरूप है, इसलिए वह परिवर्तनशील नहीं है। वह ज्ञान स्वरूप है, इसलिए उसको इन्द्रियों से प्रत्यक्ष नहीं किया जा सकता। उसका केवल अनुभव किया जा सकता है। जैसे बिजली के करेंट को देखा-सुना नहीं जा सकता, केवल अनुभव किया जा सकता है।वह अनंत है, इसलिए अनादि भी है क्योंकि जिसका आदि होता है, उसीका अंत भी होता है। जातस्य हि ध्रुवो मृत्युः -गीता। ऐसे निराकार,निर्गुण ब्रह्म का साक्षात्कार करने के लिए हमारे ऋषि-मुनियों ने सगुण ब्रह्म की परिकल्पना की, जिसकी आकृति सुन्दरतम हो। प्राचीन काल में ये देवालय क्या एशिया, क्या अरब और क्या यूरोप -सर्वत्र सनातन धर्म के उपासकों ने बनाए थे, जिसके प्रमाण यहाँ -वहाँ के उत्खननों में प्राप्त मूर्तियों से मिलते हैं।

निर्णायक मोड़

आज की बात करें तो ज्ञानवापी मस्जिद का विवाद उससे जुड़े श्रृंगार गौरी की पूजा की अनुमति को लेकर शुरू हुआ। मस्जिद बनने के बाद भी स्थानीय महिलाएं श्रृंगार गौरी की पूजा नियमित रूप से करती थीं। 2004 में सपा शासनकाल में उसपर रोक लगा दी गई और वर्ष में सिर्फ एक दिन पूजा करने की अनुमति दी गयी। इसके विरुद्ध पांच महिलाओं ने जिला अदालत में मामला दायर किया। जिला अदालत ने पूरे ज्ञानवापी मस्जिद की वीडियोग्राफी करायी, जिसे सुप्रीम कोर्ट में पेश किया गया है। अभी यह स्पष्ट नहीं है कि अदालत पांच महिलाओं द्वारा श्रृंगार गौरी की पूजा की अनुमति वाले मामले को अलग मानती है या उसे भी ज्ञानवापी मस्जिद से

श्रृंगार गौरी

जुड़े अन्य सभी मामलों से जोड़कर देखती है। हिन्दू पक्ष ने पूरी ज्ञानवापी मस्जिद की उपस्थिति पर सवाल उठाया है और मस्जिद के निचले तहखानों की पड़ताल करने की मांग की है। इसके वकील विष्णु जैन ने अपनी दलीलों से और सर्वेक्षण में मिले स्पष्ट सबूतों से मामले को रोचक और निर्णायक मोड़ पर ला खड़ा किया है। सुप्रीम कोर्ट ने मुस्लिम पक्ष की कतिपय मांगों को खारिज करते हुए इस मामले को उप्र हाई कोर्ट को सौंप दिया। कोर्ट ने ज्ञानवापी मस्जिद सम्बन्धी याचिका को वाराणसी के सिविल जज से लेकर फास्ट ट्रैक कोर्ट को सौंप दिया है। यह उचित भी हुआ क्योंकि हमारी अदालत में बिल्ली को ऊँट मानने वालों के विरुद्ध दलील और सबूत देकर बिल्ली साबित करने में बीस-तीस साल तो लग ही जाते हैं।

यह विवाद एक नये महाभारत जैसा है। पांडवों ने सिर्फ पाँच गाँव मांगे थे, मगर मोह-मद में चूर दुर्योधन सुई की नोक भर जमीन भी देने को राजी नहीं हुआ। इस देश में मुगलों ने हजारों मंदिरों को तोड़कर मस्जिदें बना दी थीं। हिन्दू पक्ष ने भाईचारा निभाते हुए केवल तीन प्रमुख मदिर-अयोध्या-काशी-मथुरा की मस्जिदों को सौंप देने का आग्रह किया था, क्योंकि ये क्रमशः राम, शिव और कृष्ण से सम्बंधित हैं। अयोध्या राम की जन्मभूमि, काशी शिव की आदिभूमि और मथुरा कृष्ण की जन्मभूमि है । सनातन धर्म के ये तीनो स्थल उसी तरह महत्वपूर्ण हैं, जैसे इस्लाम के लिए मक्का और ईसाई के लिए वैटिकन सिटी। एक समय ऐसा भी था जब भारत के मुस्लिम समुदाय शांतिपूर्ण जीवन बिताने के लिए उसे मान भी लेते। लेकिन मुस्लिम समाज को एकमुश्त वोटबैंक बनाये रखने के लिए राजनेताओं ने ऐसा होने नहीं दिया। माहौल को खराब करने के लिए, सुस्त पड़े बहुसंख्यक हिन्दुओं की भावना को चोट पहुंचाने के लिए एक से एक अन्यायपूर्ण क़ानून बनाए गए। नरसिंहा राव सरकार ने 1991 में एक हिन्दू-विरोधी क़ानून बनाकर धार्मिक स्थलों के स्वरूप परिवर्तन पर रोक लगाई थी, लेकिन उसके अनुच्छेद 4 में प्राचीन (100 वर्ष से अधिक) धार्मिक स्थलों को उस क़ानून से मुक्त रखा गया है। वैसे भी, उस क़ानून को सुप्रीम कोर्ट में चुनौती दी गई है। सुप्रीम कोर्ट के एक पूर्व निर्णय के अनुसार नमाज पढ़ने के लिए मस्जिद का होना जरूरी नहीं है।

विवादित विश्वेश्वर मंदिर के अलावा इस समय काशी मे कुल तीन विश्वनाथ मंदिर हैं। एक तो ज्ञानवापी के बगल में महारानी अहिल्या बाई होल्कर द्वारा निर्मित सोने के शिखर वाला मंदिर है, दूसरा वहीं पास में मीरघाट पर स्वामी करपात्री जी महाराज द्वारा स्थापित मंदिर है और तीसरा बीएचयू परिसर में स्थित विशाल मंदिर है, जिसे कोसों दूर से देखा जा सकता है। तथापि, देश भर से काशी आनेवाले आस्तिक हिन्दुओं की आस्था ज्ञानवापी वाले विश्वनाथ मंदिर में ही है। मोदी सरकार ने विशाल विश्वनाथ कॉरिडोर बनाकर उसे अत्यधिक आकर्षक और आधुनिक बना दिया है। सुप्रीम कोर्ट के निर्णय के बाद यदि विश्वेश्वर शिवलिंग की पूजा-आराधना शुरू हुई, तो यह कॉरिडोर दोगुनी ऊर्जा से चमक उठेगा ।

● 'देवधा हाउस', 5/2, बसन्त विहार एन्क्लेव, देहरादून-248006 | सम्पर्क- 9412992244
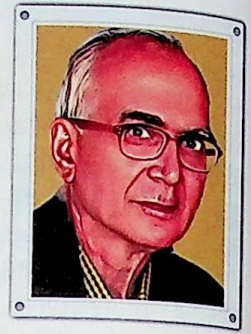
काशी का स्वर्वेद महामंदिर और विहंगम योग

निरंकार सिंह

प्राचीन काल से ही काशी अथवा वाराणसी भारतीय धर्म और संस्कृति का केंद्र रही है। आज भी दुनिया भर के लोग यहां काशी विश्वनाथ, गंगा तट के घाट और बौद्ध केंद्र सारनाथ को देखने आते हैं। लेकिन यहां 18 साल से बन रहे स्वर्वेद महामंदिर के प्रांगण में विहंगम योग संत समाज के वार्षिक उत्सव के अवसर पर जब प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी गए तो यह केंद्र भी दुनिया भर में विख्यात हो गया। प्रधानमंत्री ने कहा कि "इस दैवीय भूमि पर ईश्वर अपनी अनेक इच्छाओं की पूर्ति के लिए संतों को निमित्त बनाता है। सद्गुरु सदाफल जी महाराज ने समाज के जागरण के लिए विहंगम योग को जन-जन तक पहुंचाने के लिए यज्ञ किया था। आज वह संकल्प एक विशाल वट वृक्ष बन गया है। आज 5,101 यज्ञ कुण्डों के वैदिक यज्ञ, इतने बड़े सहज योगासन प्रशिक्षण शिविर, इतने सेवा प्रकल्पों एवं लाखों लाख साधकों के परिवार के रूप में हम उस संत के संकल्प की सिद्धि को अनुभव करते हैं। सद्गुरु सदाफल जी को नमन करते हुए उन्होंने इस परम्परा को जीवन्त बनाए रखने और विस्तार देने के लिए सद्गुरु आचार्य श्री स्वतंत्र देव जी महाराज एवं संत प्रवर श्री विज्ञान देव जी महाराज के प्रति आभार व्यक्त किया। आज एक भव्य आध्यात्मिक भूमि का निर्माण हो रहा है। जब यह पूर्ण हो जाएगा, तो काशी सहित पूरे देश के लिए एक उपहार होगा।"

वाराणसी गाजीपुर मार्ग पर 15 किलोमीटर की दूरी पर उमरहां के पास बना स्वर्वेद महामंदिर धाम अपने आप में अनोखा है। यह मंदिर शिल्प और अत्याधुनिक तकनीक के अदभुत सामंजस्य का प्रतीक है। इस भव्य मंदिर की सबसे बड़ी खासियत ये है कि यहां पर किसी भी भगवान की पूजा नहीं की जाती बल्कि सिर्फ मेडिटेशन किया जाता है। यह मंदिर अपनी भव्यता कारण पूरे देश में काफी प्रसिद्ध हो गया है। आपको जानकर हैरानी होगी कि स्वर्वेद मंदिर इतना बड़ा है कि इसमें एक साथ 20 हजार से ज्यादा लोग बैठकर मेडिटेशन कर सकते हैं। इसलिए इसे दुनिया का सबसे बड़ा मेडिटेशन सेंटर भी कहा जाता है। इस मंदिर का नाम दो शब्दों से मिलकर बना हुआ है। जिसमें स्वः का एक अर्थ है आत्मा, और वेद का अर्थ है ज्ञान. यानि जिसके द्वारा आत्मा का ज्ञान प्राप्त किया जाता है, उसे स्वर्वेद कहते हैं।

विहंगम योग के प्रणेता अनंत श्री सद्गुरु सदाफल देव जी महाराज द्वारा हिमालय की गुफा में रचित स्वर्वेद महाग्रंथ योग समाधि अवस्था में प्राप्त प्रत्यक्ष अनुभव की अभिव्यक्ति है। विश्व की इसी अद्वितीय आध्यात्मिक धरोहर को समर्पित है स्वर्वेद महामंदिर धाम। विहंगम योग भारत के ऋषियों की प्राचीनतम योगविद्या है जिसे सद्गुरुदेव ने अपनी 17 वर्षों की गहन साधना द्वारा जन सामान्य के लिए सुलभ कराया है। पांच भूमियों की विहंगम योग साधना में मन की शांति से लेकर परमात्मा प्राप्ति तक की यात्रा है। आंतरिक शांति एवं आनंद के साथ साथ जीवन के हर मोड़ पर उचित अनुचित का बोध प्राप्त होता है। वर्ष 1924 ईस्वी में उत्तर प्रदेश के बलिया जिले में स्थित वृत्तिकूट आश्रम से आरंभ हुआ विहंगम योग संस्थान आज लाखों परिवारों का जीवन सँवार चुका है। यह देश भर में अनेक सामाजिक कल्याणकारी कार्यों को भी संचालित कर रहा हैं। गुलाबी सैंडस्टोन एवं श्वेत मकराना संगमरमर की अद्भुत शिल्प कृतियों से आच्छादित स्वर्वेद महामंदिर धाम पूरे विश्व के जिज्ञासुओं को भारत की ऋषि संस्कृति की ओर आकर्षित कर रहा है। स्वेद के दिव्य प्रकाश में मानव मात्र का भौतिक एवं आध्यात्मिक उत्कर्ष हो रहा है। व्यक्ति की शांति से ही विश्व की शांति संभव है।

इस मंदिर की स्थापना सद्गुरु सदाफल देंव मह[illegible] जी [illegible] विहंगम योग केन्द्र के रूप में की है, हालांकि इसका निर्माण [illegible] 200[illegible] में शुरू किया गया था जो अभी तक पूरा नहीं हुआ है। मंदिर [illegible] नियर धनंजय के अनुसार तीन लाख वर्ग फीट में गुलाबी पत्थ[illegible]शी का काम अपने अंतिम चरण में हैं। मंदिर में मकराना पत्थ[illegible] दोहे अंकित किए जा रहे हैं। 50 हजार वर्ग फीट पर वाटर [illegible] से पांच हजार दोहे उत्कीर्ण हो रहे हैं। महामंदिर को खूबसूरत ब[illegible] ही वास्तुशिल्प का भी पूरा ध्यान रखा गया है। पूर्व दिशा में प्रवाहि[illegible] राशि के रूप में स्थापित है। यह वास्तुशिल्प का भी अद्भुत उदा[illegible] है। 64 हजार वर्ग फीट में बन रहे सात मंजिला महामंदिर का निर्माण करीब 18 साल पहले शुरू हुआ था। मुख्य गुंबद 125 पंखुड़ियों के विशालकाय कमल पुष्प की तरह है। गुजरात में जीआरसी तकनीक द्वारा बनाए जा रहे नौ गुंबद नौ कमलों की तरह होगा। इसकी ऊंचाई की बात करें तो ये 180 फीट ऊंचा है। यह देश का सबसे बड़ा मेडिटेशन सेंटर भी माना जा रहा है। महामंदिर परिसर में 100 फीट ऊंची सद्गुरुदेव की सैंड स्टोन की प्रतिमा भी स्थापित होगी।स्वर्वेद महामंदिर धाम में मई 2017 में 21 हजार कुंडीय स्वर्वेद उत्तरार्द्ध ज्ञान महायज्ञ हुआ था। उस वक्त इसे इतिहास के सबसे विशालतम यज्ञ की संज्ञा भी दी गई थी।

वाराणसी और यहाँ के आस-पास के क्षेत्रों को पुराणों में धर्म-क्षेत्र भी कहा गया है। आज जहाँ 'स्वर्वेद महामन्दिर' बन रहा है, इसके समीप ही कैथी गांव के पास गंगा-गोमती का संगम है। कहा जाता है कि यह सम्पूर्ण क्षेत्र महर्षि उद्दालक की तपोभूमि रही है। उपनिषदों में वर्णित उद्दालक पुत्र श्वेतकेतु की ज्ञान-भूमि रही है। महर्षि उद्दालक की सुपुत्री सुजाता का विवाह कहोड ऋषि के साथ हुआ था और उनकी संतान ही ऋषि अष्टावक्र थे। यह भूमि नचिकेता की भी जिज्ञासा भूमि है, जहाँ कठोपनिषद में यमाचार्य द्वारा उन्हें ब्रह्मविद्या का उपदेश दिया गया है। इस तरह काशी और इसके आस-पास के क्षेत्र में अनेक ऋषि, महर्षि और सन्त-महात्मा हुए हैं जो पूरे देश में पूज्य माने गये हैं। इसलिए काशी को भारत की धार्मिक और सांस्कृतिक राजधानी भी कहा जाता है।

गंगा-गोमती के संगम के पार्श्व में मार्कण्डेय धाम के नाम से प्रसिद्ध मन्दिर है जो क्षेत्रीय लोगों में काफी श्रद्धा की दृष्टि से देखा जाता है। इसी संगम के समीप महर्षि सदाफलदेव जी महाराज भी अपनी पर्णकुटी बनाकर कुछ काल के लिए समय-समय पर योगाभ्यास किया करते थे। इस तरह इस धर्म-क्षेत्र में स्वर्वेद महामन्दिर धाम के निर्माण से इसका महत्व और अधिक बढ़ गया है। विश्व का सर्वोत्तम साधना-केन्द्र होने के कारण इस महामन्दिर के माध्यम से स्वर्वेद सद्ग्रन्थ के ज्ञान का आलोक भी सम्पूर्ण काशी-क्षेत्र को प्रभासित करता रहेगा। वाराणसी जनपद में स्थित यह स्वर्वेद महामन्दिर धाम राष्ट्र की एक अप्रतिम धरोहर होने के साथ-साथ एक अद्वितीय दर्शनीय स्थल तथा एक स्मरणीय पर्यटक केन्द्र के रूप में प्रसिद्धि के शिखर को प्राप्त करने जा रहा है। यह महामन्दिर पूरे देश के लिए एक गौरव का विषय है।

स्वर्वेद महामन्दिर की दीवारों पर लिखे गये दोहों के बारे में संत श्री विज्ञानदेव जी महाराज का कहना है कि "स्वर्वेद" के दिव्य दोहों के श्रवण मात्र से ही हमारे शुभ संस्कारों का उदय होने लगता है, विवेक जागृत रहता है और साधना के अभ्यास में हमारा मन स्थिर होने लगता है। मन के संयम के लिए ये दोहे अत्यन्त कारगर हैं। सद्गुरुदेव का स्वर्वेद, विहंगम योग का यह ज्ञान न केवल लोक को सुधारता है बल्कि परलोक को भी सुधार देता है। जो लोक और परलोक को सुधार दे, वही सद्गुरु का स्वर्वेद है। यह भौतिक और आध्यात्मिक दोनों विकास है, जीवन का समन्वय है। इस पथ के साथ जीना और इस पथ से जीवन को सदैव अनुप्राणित किये रहना, हम सबका परम कर्तव्य एवं दायित्व है।

स्वर्वेद विहंगम योग का प्राण है, यह तो विहंगम योग की आत्मा है। विहंगम योग का सिद्धांत है, विहंगम योग का यह रहस्य है। सद्गुरु का यह अनुभव है। यह आध्यात्मिक वाणी है। यह आत्मा के कल्याण की वाणी है। समाधि के अनुभव की वाणी है और जितना हम इन वाणियों का श्रवण कर लें उतना ही हमारे लिए अच्छा है। प्रारम्भ में क्या करता है स्वर्वेद? हमारी इन्द्रियों की शुद्धि का साधन है, हमारी इन्द्रियाँ पवित्र रहती हैं, अंतकरण शुद्ध होने लगता है। अनेकों ऐसे साधक हैं, जो स्वर्वेद के दोहों का श्रवण करते हैं, उसका पाठ करते हैं तो उनके अन्दर कम्पन होने लगता है, उसके अन्दर थर्राहट होने लगती है, उनकी आध्यात्मिक चेतना का विकास होने लगता है। आत्मा के कल्याण की ही ये वाणियाँ हैं।

क्या है विहंगम योग

विहंगम योग भारतीय ऋषियों की प्राचीनतम योग विद्या है जिसे सद्गुरु सदाफलदेव महाराज ने अपनी 17 वर्षो की गहन साधना द्वारा जनसामान्य के लिए सुलभ कराया है। 1924 में उत्तर प्रदेश के बलिया जिले में स्थित वृत्तिकूट आश्रम से आरम्भ हुआ विहंगम योग संस्थान आज लाखों परिवारों का जीवन संवार चुका है। यह संस्थान समाज के कल्याण के लिए अन्य कई कार्यक्रमों का भी संचालन कर रहा है। सद्गुरू सदाफल देव महाराज रचित 'स्वर्वेद' के अनुसार "परब्रह्म प्रकृति के पार है और कर्मकाण्ड के सर्वसाधन प्रकृति के अन्तर्गत हैं। प्रकृति के पार साधन वेद में एकमात्र विहंगम योग है। उसी विहंगम योगाभ्यास द्वारा परब्रह्म की प्राप्ति एवं परमानन्द की उपलब्धि होती है अन्य मार्ग से नहीं।" भाव यह है कि ब्रह्म प्रकृति के पार चेतन है और विहंगम योग प्रकृति के पार चेतन के विकास से होता है। अतः परमात्मा से मिलने का सत्य मार्ग विहंगम योग है।

'विहंगम' और 'योग' इन दो शब्दों में विहंगम का अर्थ है अन्तरिक्ष में गमन। ज्ञान और मोक्ष साधन से समाधि की अवस्था में आत्मा और परमात्मा का जो मेल या जोड़ होता है, उसे ही विहंगम योग कहते हैं। 'विहंग' का अर्थ आकाश में गमन करने वाला अर्थात् पक्षी भी होता है। जिस तरह अन्तरिक्ष में गमन करने के लिए पक्षी को पृथ्वी का आधार छोड़ना पड़ता है, उसी तरह विहंगम योग में चेतन परमात्मा की प्राप्ति के लिए, चेतन साधना करने वालों को प्रकृति के आधार को छोड़ना पड़ता है। प्रकृति और प्राकृतिक कारणों का आधार नितान्त त्याग कर के स्व 'के शुद्ध ज्ञान से आत्मा का साधन, उत्थान, गमन पक्षी की तरह जब निराधार होने लगता है तब विहंगम योग होता है। यहाँ पक्षी की तुलना आत्मा की चेतन-शक्ति सुरति से की गयी है। आत्मा की चेतना जब तक सारे देह-संघात में रहती है, तब तक प्रकृति के त्रयगुण का सम्बन्ध बना रहता है। चेतन आत्मा जड़ अनात्म-जगत् को छोड़कर जब चेतन परब्रह्म की भक्ति करता है, तभी विहंगम होता है। अर्थात् प्रकृति से असंग हो आत्मा के स्वज्ञान से जो साधन होता है, वही विहंगम योग है।

लेकिन आज के वैज्ञानिक युग में जहाँ 'आत्मा' और ब्रह्म शब्द की सत्ता पर ही प्रश्नचिह्न लगे हुए हैं, वहाँ इसे परिभाषित करना बहुत कठिन हो गया है। इसीलिए पहले हमें आत्मा और ब्रह्म की सत्ता को ही समझना होगा। इस पंचभौतिक शरीर में आत्मा ही एक चेतन सत्ता है और बाकी सब जड़ है। इस शरीर में पंच महाभूत (पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु और आकाश) के साथ-साथ पाँच प्राण (प्राण, अपान, व्यान, उदान और समान), पाँच ज्ञानेन्द्रियाँ (आँख, कान, जिहवा और त्वचा), पाँच कर्मेन्द्रियाँ (हाथ, पैर, गुदा, लिंग और वाणी) और चतुष्टय अन्तःकरण (मन, बुद्धि, चित्त और अहंकार) ये चौबीस तत्त्व रहते हैं। लेकिन जब तक इसमें पचीसवाँ तत्त्व आत्मा 'का संयोग नहीं होता है तब तक इसमें चेतना का संचार नहीं होता है। इसी चेतन सत्ता आत्मा के संयोग-वियोग से शरीर जीवित और मृत माना जाता है।

मृत्यु के पश्चात् शरीर की सभी इन्द्रियाँ वर्तमान रहती हैं, लेकिन उनमें क्रिया नहीं होती क्योंकि क्रिया का संचालन करने वाली आत्मा 'का वियोग हो गया है। शरीर में वर्तमान समान चेतन सत्ता को हम वर्तमान आत्मा 'के नाम से जानते हैं। आत्मा की जो चेतन-शक्ति है उसे हम 'सुरति' कहते हैं। आत्मा का संयोग जब मन से, मन का इन्द्रियों से और इन्द्रियों का विषयों से होता है तो हमें प्राकृतिक विषयों का सारा ज्ञान या अनुभव होता है। आत्म-चेतना का स्वभाव की ओर जो मन के संयोग से प्रवाह है उसे हम अर्ध-धार कहते हैं। जिस तरह इस शरीर के अंदर अणु-एकाग्रता आत्मा के रूप में विराजमान है, उसी तरह इस सम्पूर्ण विश्व को संचालित करने वाली एक विभु-एकाग्रता है। सृष्टि का कण-कण उसी के आधार पर क्रियाशील है। सम्पूर्ण नक्षत्र-मण्डल, ग्रह, उपग्रह, सूर्य, चन्द्र, तारे और सृष्टि की पूरी प्रक्रिया जिसके द्वारा संचालित होती रहती है, उसे ही हम परमात्मा कहते हैं। वही परमात्मा आत्मा का भी अन्तरात्मा है।

● ए-13, विधायक निवास 6 पार्क रोड कालोनी, लखनऊ-226001 | सम्पर्क–09451910615
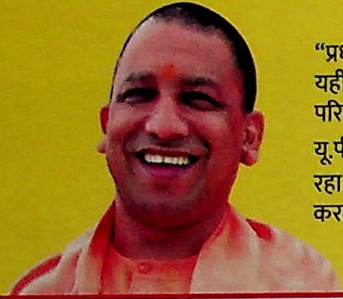
"प्रधानमंत्री गरीब कल्याण अन्न योजना का मकसद यही है कि मेरे किसी गरीब भाई-बहन को, उसके परिवार को भूखा सोना ना पड़े।

यू.पी. में जिस तरह से इस योजना को लागू किया जा रहा है वो नए उत्तर प्रदेश की पहचान को और मजबूत करता है।"

- नरेन्द्र मोदी, प्रधानमंत्री
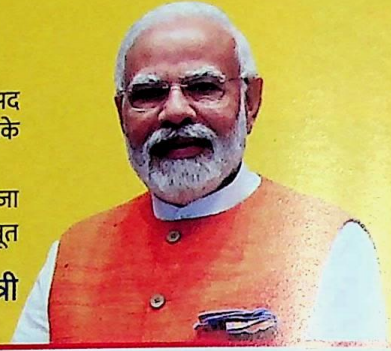
प्रदेश के 15 करोड़ लोगों को

डबल राशन का उपहार

डबल इंजन की सरकार

भारत सरकार द्वारा

सभी अंत्योदय एवं पात्र गृहस्थी कार्डधारकों को मुफ़्त 5 किलो गेहूँ/चावल प्रति व्यक्ति/माह

+

उत्तर प्रदेश सरकार द्वारा

सभी पात्र गृहस्थी कार्डधारकों को मुफ़्त 5 किलो गेहूँ/चावल प्रति व्यक्ति/माह

(अंत्योदय कार्डधारक को)

मुफ़्त 35 किलो गेहूँ/चावल के साथ मुफ़्त 1 किलो चीनी भी प्रतिमाह

साथ ही सभी कार्डधारकों को

मुफ़्त 1 किलो दाल, 1 लीटर खाद्य तेल, 1 किलो नमक

निःशुल्क राशन वितरण को आगे भी जारी रखने के लिए धन्यवाद

मोदी जी-योगी जी

सूचना एवं जनसम्पर्क विभाग, उत्तर प्रदेश

संस्कृति की सनातन क्रीडा-स्थली काशी

गिरीश्वर मिश्र

ज्योतिः पुंजमयी काशी ज्ञानरूपा मनोरमा
तया तु सदृशं वस्तु नास्ति ब्रह्माण्डगोलके

'काशी' सुनते ही आँखों में न खत्म होने वाली एक-एक कर अनेक छवियों की श्रृंखलाएं उभरने लगती हैं। कहते हैं वरुणा और अस्सी दो नदियों का गंगा से मिलाप होता है और इनसे निर्मित हो रहे क्षेत्र के आधार पर इसका 'वाराणसी' नामकरण हुआ। चन्द्राकार उत्तरवाहिनी गंगा के तट पर बसी इस पावन स्थली को बनारस भी कहते हैं। जो भी हो जब भी काल के साथ अठखेलियाँ करते इस नगर के बारे में सोचते हैं तो दृश्यावलियों, ध्वनियों और अनुभवों की लड़ी में संस्कृति के अनेक पुष्प पिरोये हुए स्मृति-नदी में तिरने लगते हैं। धर्म, शिक्षा, संगीत, साहित्य, कृषि, और उद्योग-धंधे यानी संस्कृति और सभ्यता का कोई ऐसा पक्ष नहीं है जो इस लड़ी में न गुंथा न हुआ हो। शास्त्र और लोक, परम्परा और आधुनिकता दोनों ही पक्षों को साथ-साथ अभिव्यक्त करते हुए यह नगरी 'पुराणी युवती' सरीखी है। यह नगरी नए और पुराने, अमीर और गरीब, प्राच्य विद्या और आधुनिक विज्ञान-प्रौद्योगिकी, युवा और वृद्ध, हवेली और अट्टालिका, प्राचीन मंदिर और नए 'माल', तथा संकरी गलियाँ और प्रशस्त राज-पथ दोनों ही तरह की प्रत्यक्षतः एक दूसरे के विपरीत सी प्रतीत होने वाली जीवन-धाराओं की खुल कर आव-भगत करती है। काशी विश्वनाथ, गंगा माता, संकट मोचन, दुर्गा जी, काल भैरव, और अन्नपूर्णा समेत जाने कितने देवी-देवताओं की उपस्थिति आस्था और विश्वास के माध्यम से लोक और लोकोत्तर के विलक्षण ताने-बाने को बुनते हुए इस नगर को सबसे न्यारा बना देता है। तब यह उक्ति कि 'वाराणसी निविशिते न वसुन्धरायां' प्रासंगिक हो उठती है। काशी को हरिहर धाम भी कहते हैं और आनंद कानन भी । यह मुक्ति-धाम भी है और विमुक्त क्षेत्र भी। यह परमेश्वर की अनन्य भक्ति का धाम है जो क्षुद्रता से उबार कर विशालता का अंग बना देती है।

'बनारसी', एक ख़ास तरह की जीवन-दृष्टि और स्वभाव को इंगित करने वाला 'विशेषण' बन चुका है जो भारत की बहुलता और जटिलता को रूपायित करता है। यहाँ बहुलता के बीच प्रवहमान एकता की अंतर्धारा भी जीवंत रूप उपस्थित होती है और यह व्यक्त करती है कि यहाँ किस तरह अनेक किस्म के विरुद्धों का सामंजस्य सहज रूप में उपस्थित होता है। यह नगरी अपने में समग्र भारत का आकार उपस्थित करती है जिसमें हर किसी को अपनी छवि दिखती है। यही कारण है कि पूरे भारत के लोग स्नेह के साथ इसकी प्रीति की डोर में बंध कर खिंचे चले आते हैं। इस नगर में नेपाली, बंगाली, दक्षिण भारतीय (मद्रासी!), गुजराती, तथा मराठी आदि अनेक समुदायों के लोग बसे हुए हैं। भारत ही क्यों पूरे विश्व में ज्ञान और मोक्ष की नगरी 'काशी' को लेकर उत्सुकता दिखती है। आज भी अक्सर जब भी कोई विदेशी भारत पहुंचता है तो सारे जग से न्यारी काशी का स्पर्श किए बिना उसे अपनी यात्रा कुछ अधूरी सी लगती है। काशी का दुर्निवार आकर्षण किसी जादू से कम नहीं है जो अपने में बाँध लेता है। गोस्वामी तुलसीदास के शब्दों को उधार लें तो काशी का प्रताप कुछ इस तरह का है :

मुक्तिजन्म महि जानि ज्ञानखानि अघहानिकर
जंह बस संभु भवानि सो कासी सेइय कसन

अर्थात काशी ऐसी धरती है जहाँ पर मुक्ति जन्म लेती है। यह धरती हर तरह के ज्ञान की खान है। यहाँ पाप की गठरी लुट जाती है अर्थात सारे पाप नष्ट हो जाते हैं । यहाँ पर शम्भु और भवानी कैलास के ऐश्वर्य का सब मोह छोड़छाड़ कर बस गए हैं।

पूरा बनारस एक जीवंत प्राणी सा है और यहाँ के लोग और विभिन्न स्थल उस प्राणी के ही अवयव से हैं। गंगा तट पर बने घाटों का तो कहना ही क्या। अर्ध चंद्राकार गंगा के किनारे-किनारे बने अस्सी, दशाश्वमेध, मणिकर्णिका, हरिश्चंद्र, तथा तुलसी आदि घाट देवताओं, राजाओं, संत महात्माओं का स्मरण दिलाते हैं और जीवन मरण के साक्षी बने हैं। उनकी शोभा अनूठी है। शहर में विभिन्न क्षेत्रों में आपको कुंड, बाग़, महाल, खंड, गली, टोला, डीह, चौरा, गंज, बीर, नगर, कोठी, पुर, सट्टी, सड़क आदि नाम के स्थान मिलेंगे और सबका अलग-अलग इतिहास और व्यक्तित्व है। लहुराबीर, भोजूबीर, जोगिआबीर, लौटू बीर, गोदौलिया, ज्ञान वापी, संकट मोचन, लंका, मैदागिन, चेत गंज, नाटी इमली, चौखम्भा, नेपाली खपड़ा, सिगरा, और मछोदरी आदि समाज के नायकों, देव स्थानों, घटनाओं, और उत्सव-पर्व के सांस्कृतिक आयोजनों से जुड़े हैं। काशी में प्रातः काल और संध्या दोनों ही रमणीय होते हैं। मेले, राम-लीला, नव रात्रि, स्नान(नहान!), दशहरा, रथ-यात्रा, गंगा-दशहरा आदि अनेक उत्सव साल भर होते ही रहते हैं। काशी एक जगा हुआ शहर है जिसमें गहमा गहमी भी है और शान्ति भी। जीवन की आपा-धापी और सारी उमड़-घुमड़ के बाद एक स्निग्ध विश्रान्ति यहाँ की पहचान है। बनारसीपन में एक स्वस्थ अक्खडपन है जो एक ख़ास तरह की उन्मुक्तता और सहजता में विश्वास करता है। वह जीवन को इत्मीनान से हौले-हौले लेता है न कि तीखी प्रतिस्पर्धा के बीच मार-काट मचाती तेज चाल दौड़ में शामिल होना चाहता है। यहाँ जो आया यहीं का हो गया। गलियों, घाटों में रमना, खान-पान का रस लेना, चैता सुनना, सैर करना बनारसी आदमी के स्वभाव में है। उत्सव और एकांत दोनों हैं। वह राग-रंग वाला भी है और विरागी भी।

काशी का सनातन धर्म से गहन रिश्ता है जो अनंत जीवन-सत्य को अंगीकार करता है और किसी मत में विश्वास से अधिक जिए जाने की शैली में प्रतिबिम्बित होता है। काल के व्यतीत होने के क्रम में भारत से बाहर के लोग इस क्षेत्र के निवासियों को सिन्धु नदी से रेखांकित करते हिन्दू कहने लगे और फिर उनकी जीवन शैली भी हिन्दू के रूप में जानी गई। अंततः अंग्रेजी राज की गुलामी के दौरान अंग्रेज शासकों ने राजनैतिक कारणों से 'हिन्दू' और 'हिंदूइस्म' को 'मुसलमान' और 'इस्लाम' के विपरीत की कोटि में विन्यस्त किया हजारों वर्षों से अस्तित्व में रहे भारत को भारत के बदले उधार की आरोपित शब्दावली में हिन्दुस्तान और इंडिया कहा जाने लगा जिसे स्वतन्त्र भारत के संविधान में भी स्वीकार किया गया और 'इंडिया दैट इज भारत' का प्रयोग किया गया।

भारत की अपनी बौद्धिक परम्परा की व्यापकता सृष्टि में निरंतरता और विभिन्न तत्वों के बीच अनुपूरकता को व्यक्त करती है। इसका स्वरूप काशी में आज भी परिलक्षित होता है। इसकी प्रसिद्धि मनीषियों, रसिकों, रईसों, महंथों, राजनेताओं, कलावन्तों, के लिए है जिनकी बड़ी लम्बी सूची है। पर यहाँ चोर-उचक्के, ठग, औघड़, निहंग भी मिलते है। अपने वाराणसीपुरपति विश्वनाथ भी विलक्षण हैं, द्वंद्व ही द्वन्द उनमें दिखते हैं। वे निहंग हैं पर ईश्वर भी हैं, तपस्वी हैं पर कलावंत नटराज भी हैं, चन्दन भी लगता है पर चिता-भस्म भी प्रिय है, भांग-धतूरे के साथ पंचामृत का भी स्वाद भी प्रिय है। यह जरूर है कि घर गृहस्थी का भार संभालने को अन्नपूर्णा की सहायता सतत उपलब्ध रहती है। कहते हैं कि काशी अद्वैत सिद्धि का शहर है। आनंद आत्म-दान में ही होता है। काशी का शाब्दिक अर्थ है शुद्ध चैतन्य का प्रकाश। पुराणों और जातकों में काशी का विस्तृत और सुन्दर वर्णन किया गया है। काशी जनपद की राजधानी वाराणसी थी। काशी का उल्लेख शतपथ ब्राह्मण में भी मिलता है। जातकों में ब्रह्म दत्त राजा का अनेकशः उल्लेख है। काशी और कोशल इन दो जनपदों के बीच युद्ध भी होता रहा। दिवोदास नामक राजा का भी उल्लेख मिलता है। धार्मिक उथल-पुथल के बीच महात्मा बुद्ध का भी आगमन हुआ था। महावीर

काशी में ही जन्मे थे। यहीं सारनाथ में बुद्ध ने 'धम्म चक्क' का प्रवर्तन भी किया था। बौद्ध साहित्य में काशी की समृद्धि का विस्तृत वर्णन है। अशोक ने एक बड़े स्तूप का निर्माण कराया था। शुंग कालीन पुरातात्विक और अन्य साक्ष्यों से काशी के वस्त्र व्यापार की पुष्टि होती है। काशिकांशु (लिनन) बड़ा प्रतिष्ठित था। मूर्तियों और मोहरों से पता चलता है कि गुप्त काल में यहाँ बड़ी उन्नति हुई। शिव लिंग की पूजा अर्चना की पुष्टि होती है। कई सदियों से काशी में पुण्यतोया गंगा और बाबा विश्वनाथ ने धर्म परायण भारतीय जन मानस को आकृष्ट किया है। यहाँ के विश्वेश्वर विश्वनाथ बारह ज्योतिर्लिंगों में से एक। मान्यता है यहाँ भगवान शिव शक्ति की देवी मां भगवती के साथ बिराजते हैं।

इतिहास में झांकने पर पता चलता है मुहम्मद गोरी, हुसेन शाह शर्की, तथा सिकंदर लोधी आदि ने काशी को बार-बार आक्रान्त और ध्वस्त किया। काशी विश्वनाथ के मंदिर को राजा मान सिंह और टोडरमल ने 1585 में बनवाया। औरंगजेब ने 1669 में क्षतिग्रस्त कर मस्जिद बनवाई। मल्हार राव होलकर की पुत्रवधू अहिल्या बाई ने पुनः 1780 में मंदिर का निर्माण किया। महाराजा रणजीत सिंह ने मंदिर के लिए एक टन सोना दिया। चौदहवीं से अठ्ठारहवीं सदी के बीच काशी का व्यावसायिक और धार्मिक केंद्र के रूप में खूब विकास हुआ। यहाँ अनेकानेक संत महात्मा हुए जिनमें रामानंद, कबीर, रैदास, तुलसीदास, मधुसूदन सरस्वती, तैलंग स्वामी, स्वामी विशुद्धानंद, स्वामी करपात्री जी, बाबा कीना राम आदि प्रमुख हैं। यह क्रम आगे भी चलता रहा। संस्कृत ज्ञान की परम्परा में पं. शिव कुमार शास्त्री, पं. हरि नारायण तिवारी, चन्द्रधर शर्मा गुलेरी, गोपी नाथ कविराज और हिन्दी में भारतेंदु हरिश्चंद्र, जय शंकर प्रसाद, प्रेमचन्द, श्याम सुन्दर दास, लाला भगवान दीन, पं. राम चन्द्र शुक्ल, आचार्य नरेन्द्रदेव, श्रीप्रकाश, सम्पूर्णानंद, राय कृष्ण दास प्रभृति ने काशी की चिंतन परम्परा की नीव डाली। महामना पं. मदन मोहन मालवीय ने, जो स्वयं एक महान देश भक्त, धर्मज्ञ और भारतीयता के अप्रतिम व्याख्याता थे, काशी हिन्दू विश्वविद्यालय की स्थापना कर विश्वस्तरीय ज्ञान केंद्र स्थापित कर कीर्तिमान स्थापित किया। काशी नगरी का बड़ा विस्तार हुआ है और नए-नए उपक्रम शुरू हुए हैं। जन संख्या की वृद्धि, संसाधनों की कमी और इच्छा शक्ति की कमी से इस नगर और आस पास के क्षेत्र की स्थिति उपेक्षित थी। प्रधान मंत्री मोदी ने विगत वर्षों में अनेक परियोजनाओं द्वारा स्वास्थ्य, नागरिक सुविधाओं, राष्ट्रीय राज मार्ग का निर्माण आदि की अनेक योजनाएं शुरू की हैं जिनसे नगर का काया-कल्प हो रहा है । काशी विश्वनाथ मंदिर का भव्य परिसर निर्मित हो गया है जो एक अभिनंदनीय प्रयास है।

काशी का माहात्म्य सचमुच गंगा और भगवान शिव से है। मुस्लिम कवि रहीम की चाह कुछ यूं थी :

अच्युतचरनतरंगिनि शिवसिर मालतिमाल
हरि न बनायो सुरसरि कीजिय इन्दव भाल

अर्थात मेरा शरीर जब छूटे तो विष्णु रूप न देना, क्योंकि विष्णु के पद नख से गंगा निकलती है । मुझे शिवरूप देना, ताकि तुम मेरे सर पर विराजो और चन्द्रमा की अमृत कला तुम्हारी छाया में रहे।

कभी आस्था थी कि 'गंगाजू को नाम कामतरु तें सरस है'। आज उसी गंगा को ले कर सभी चिंतित हैं। कुछ समय पूर्व खबर थी कि काशी में गंगा का जल हरा हो गया है। प्रदूषण खतरनाक स्तर पर है और उस जल का स्पर्श, स्नान, और पीना स्वास्थ्य के लिए हानिकर होने से वर्जित कर दिया गया। युगों-युगों से काशी और वहां गंगा की उपस्थिति दोनों मिल कर भारत के गौरव की श्री वृद्धि करते आये हैं। गंगा भारतीय संस्कृति की जीवित स्मृति है जो युगों-युगों से भौतिक जीवन को संभालने के साथ आध्यात्मिक जीवन को भी रससिक्त करती आ रही है। हिमालय से चल कर तमाम नदियों का जल समेटते हुए बंगाल की खाड़ी से होते हुए समुद्र तक पहुँचने की भौगोलिक यात्रा एक तथ्य है परन्तु लोक मानस में गंगा नदी से ज्यादा एक मान, पापनाशिनी, और मोक्षदायिनी जाने कितने रूपों में बसी हुई है। गंगा-स्नान की लालसा सब को गंगा की ओर लौटने के लिए आमंत्रित और उन्मथित करती रहती है। गंगा नाम लेना और उनका दर्शन मन को पवित्र करता है। गंगा जल लोग आदर से घर ले जाते हैं और प्रेमपूर्वक सहेज कर रखते हैं।

गंगा भारत की सनातन संस्कृति का अविरल प्रवाह है और साक्षी है उसकी जीवन्तता का। कहते हैं भगीरथ ने बड़े श्रम से गंगा को धरती पर अवतरित किया था। इसीलिए वह 'भागीरथी' भी कहलाती हैं। कथा के अनुसार राजा सगर के वंशज भगीरथ ने बड़ा तप किया तब कहीं भगवान विष्णु के चरणों से बिंदु-बिंदु निकलीं जिसे ब्रह्मा ने झट से अपने कमंडलु में रख लिया । ब्रह्मा को भी भगीरथ ने तप से प्रसन्न किया और तब गंगा का प्रवाह निकला जिसे भगवान शिव ने अपनी जटा में धारण कर लिया। भागीरथ ने फिर तप किया और तब जा कर गंगा का पृथ्वी पर अवतरण हुआ।

गंगा प्रतीक है शुभ्रता का, पवित्रता का, ऊष्मा का, स्वास्थ्य और कल्याण का। भौगोलिक रूप से मध्य हिमालय के अन्दर ऊँचाई पर स्थित कई ग्लेशियरों से जल उपलब्ध होता है। फिर वह गोमुख में एकत्र होता है और वहां से आगे की यात्रा पर निकलता है । आगे चल कर वनों से होते हुए कई प्रवाह समेट कर भागीरथी प्रकट होती है । इसी में केदारनाथ में मंदाकिनी मिलती है जो फिर अलकनंदा से देवप्रयाग में मिलती है । ऋषीकेश से हो कर भागीरथी हरद्वार पहुंचती है और फिर गंगा का रूप लेती है। आगे राम गंगा, यमुना से मिलती है। प्रयाग में संगम है जहां गंगा तट पर प्रतिवर्ष विश्व का अद्भुत मेला लगता है। बारह वर्ष पर कुम्भ होता है। फिर गंगा प्रसिद्ध शिव नगरी काशी पहुंचती है जिसे वाराणसी भी कहते हैं। यह अत्यंत प्राचीन नगर अर्ध चन्द्र की तरह गंगा से घिरा है। मानों शिव अपने कपाल पर अर्ध चन्द्र धारण किये हों। यहाँ से आगे चल कर गंगा घाघरा, सोन, [illegible] [illegible], कोशी तीस्ता आदि नदियों से मिलती है। इसकी दो धाराएं भी [illegible] हैं हुबली और पद्मा । हुबली कोलकाता हो कर गंगा सागर में बंगाल की खाड़ी में मिल कर समुद्र तक यात्रा पूरी होती है।

गंगा ने राजनैतिक इतिहास के उतार चढ़ाव भी [illegible] इसके तट पर तपस्वी, साधु संत बसते रहे हैं और अध्यात्म की साधना होती आ रही है। गंगा के निकट साल भर उत्सव की झड़ी लगी रहती है। [illegible] गंगा दुःख और पीड़ा में सांत्वना देने का काम करती है। वह जीवन और मरण दोनों से जुड़ी है। पतित पावनी गंगा मृत्यु लोक में जीवन दायिनी मां है। [illegible] का नाम ले कर उनका आवाहन कर जिस जल का स्पर्श करते हैं वह भी गंगा भाव से भर उठता है। गंगा की कृपा से निकटवर्ती क्षेत्र में खेती भी उपजाऊ है । कभी गंगा में जल मार्ग से व्यापार भी होता था जिसकी ओर फिर ध्यान दिया जा रहा है। इन सब के बावजूद नगरों का सारा कचरा और उद्योगों के दूषित सामग्री के अनियंत्रित मेल से गंगा अनेक स्थानों पर विषाक्त सी हो रही है। यह खतरे का संकेत है।

आज मनुष्य भूल गया है कि वह धरती का सहजीवी है स्वामी नहीं है। उसने धरती, हवा, पानी सब पर अधिकार जमा लिया है। जीवन के विकास की कथा मानें तो मनुष्य ने धरती, पशु, वनस्पति, खनिज पदार्थ आदि प्रकृति के विभिन्न अवयवों पर कब्जा कर अपने उपनिवेश का विस्तार किया और प्रकृति की जीवन-संहिता का उल्लंघन करना शुरू किया । मनुष्य ने प्रकृति के साथ द्रोह की जो ठानी उसके दुष्परिणाम आ रहे हैं और वे हमें चेताते हैं कि संभल जाओ पर अहंकार और आलस्य में हम उन संकेतों की उपेक्षा करते रहते हैं। मनुष्य केन्द्रित दृष्टि में शेष जगत उपभोग की वस्तु हो जाता है और फिर हम उसका अंधाधुंध शोषण करते हैं जो जीवन की कीमत पर होता है । हमारी भोगवादी विकास दृष्टि ने भागीरथी और गंगा का दोहन, शोषण और प्रदूषण करने में कोई कसर नहीं छोड़ी । गंगा की जीवनी शक्ति पर लगातार प्रहार हो रहे हैं। गंगा जीवन का प्रतीक है और भारत की सांस्कृतिक पहचान बनाने में उसकी प्रमुख भूमिका है। काशी ही नहीं अनेक तीर्थ गंगा से ही अपनी तेजस्विता ग्रहण करते हैं। कभी रीति काल के प्रमुख कवि पद्माकर ने कहा था :

छेम की लहर, गंगा रावरी लहर;
कलिकाल को कहर, जम जाल को जहर है ।

अब स्थिति ऐसी पल्टा खा रही है कि गंगा का स्वयं का क्षेम भी खतरे में है। काशी प्रधान मंत्री जी का क्षेत्र है और काशी में गंगा को प्रदूषण मुक्त करने का सघन यत्न जरूरी है। गंगाविहीन देश भारत देश कहलाने का अधिकार खो बैठेगा। पुण्यतोया गंगा के महत्व को पहचान कर 'नमामि गंगे' परियोजना भी कई हजार करोड़ की लागत से शुरू हुई । इन सब के बावजूद वाराणसी शहर के पास हर तरह के प्रदूषण की वृद्धि ने गंगा को बड़ी क्षति पहुंचाई है। गंगा के प्रवाह को प्रदूषण मुक्त कर स्वच्छ बनाना राष्ट्रीय कर्तव्य है। गंगा-प्रदूषण की मात्रा में निरंतर बढ़ोत्तरी हो रही है और इसके लिए तत्काल प्रभावी कदम उठाना चाहिए।

● 307, टावर-1, पार्श्वनाथ मैजेस्टिक फ्लोर्स वैभव खण्ड, इंदिरापुरम्
गाजियाबाद-201014 । सम्पर्क - 9922399666

कबीर और हमारा समय

हरेराम समीप

भक्ति साहित्य की दीर्घ परम्परा के शीर्ष कवि महात्मा कबीर आज भारत के ही नहीं विश्व साहित्य के कालजयी और सर्वाधिक प्रासंगिक रचनाकारों में से एक हैं। कबीर एक सचेतन, युगद्रष्टा और क्रान्तिचेता कवि हैं। उनके युगबोध से भरे क्रान्ति-स्वर की गूंज आज भी मद्धम नहीं पड़ी है और दुनिया भर में मनुष्यता का गान बनी है। उनकी वाणी पिछली छह शताब्दियाँ पार कर आज अपने समय, समाज और संस्कृति में भरपूर जीवंतता और सार्थकता सिद्ध कर रही है. बरसों से मैं कबीर के इस साहित्य को थोड़ा जानना और समझना चाहता था। पिछले दिनों मैंने इस कबीररूपी असीम महासागर के तट पर इसके जीवंत-जल से खेलते हुए जो अनुभूति प्राप्त की उसे आपसे साझा कर रहा हूँ.

कबीर को जानना वास्तव में अपनी संस्कृति को जानना है, अपनी पहचान को पहचानना है। वे हमारे गौरव हैं, हमारे सौभाग्य हैं। हमें गर्व है कि कबीर की वाणी हिन्दी की वाणी है। वह जनभाषा है। हम सब जानते हैं कि कबीर ने कभी कागद कलम नहीं छुआ। अतः यह वाचिक साहित्य है, जो इतनी सादगी से कहा गया है कि इसकी संप्रेषणीयता, स्मृतिशीलता और गेयता ने सदियों से इस साहित्य को जागरण और प्रेरणा का माध्यम बनाया हुआ है। लगता है कि कबीर एक ऐसी अक्षय सुगन्ध का नाम है, जो समय का अतिक्रमण करते हुए आज 600 साल बाद भी हमारे बीच पूरी महक के साथ उपस्थित है।

कबीर क्या हैं? यह जानने के प्रयास में मुझे उनका ही यह दोहा हाथ लग गया, जिसमें वे न केवल अपना परिचय देते हैं, बल्कि एक कवि की सार्वभौम परिभाषा भी गढ़ देते हैं-

अनल अकासाँ घर किया, मद्धि निरन्तर बास
वसुधा व्योम बिरकत रहै, बिन ठाहर विश्वास

कबीर यहाँ स्वयं को 'अनल' पक्षी यानी वह मिथिकीय अग्निपक्षी कहते हैं, जो धरती और आकाश के बीच अंतरिक्ष में घर बनाकर वास करता है, पूर्णतः पृथ्वी और आकाश से विलग लेकिन अपने अन-ठहरे अर्थात् गतिशील विश्वास के साथ।

यह अद्वितीय रूपक पढ़ कर मैं चकित रह गया ।पश्चिमी दर्शन की कुछ किताबों में जरूर इस अग्निपक्षी का जिक्र पाया गया है कि वह जब-जब गाता है, तो उसके शरीर से आग निकलने लगती है और वह अपनी ही आग से जलकर भस्म हो जाता है और फिर उसी राख में से पैदा होकर पुनः गाने लगता है।ये है कबीरवाणी की अनन्तता, विराटता और दृष्टि सम्पन्नत्ता।

कबीर के प्रारम्भिक जीवन के बारे में कुछ भी सप्रमाण नहीं कहा जा पाया है। हमारे अनेक देवी-देवताओं की अपुष्ट जन्म-कथाओं की तरह कबीर का जीवन वृत भी अनेक रहस्यमयी लोक मान्यताओं पर आधारित है, किन्तु सोद्देश्य और संदेशपरक है। अनुमान है कि उनका जन्म 1398 ईस्वी में असाधारण परिस्थितियों में हुआ था।काशी याने आज के बनारस नगर में लहरतारा नामक तालाब के पास कोई स्त्री लोक-लाज के डर से वहाँ अपना नवजात शिशु फेंक गयी थी, जहाँ से नीरू व नीमा नाम का जुलाहा दम्पति उस शिशु को अपने साथ ले गये, उसे पाला और उसका नाम कबीर रखा।कबीर मोहम्मद पैगम्बर का भी एक नाम है जिसका अर्थ होता है महान व्यक्ति। इस तरह वे अपने जन्म-प्रसंग से ही कितना बड़ा संदेश दे रहे हैं, कि जब मनुष्य जन्म लेता है, तब वह किसी माता, पिता परिवार, सम्प्रदाय, धर्म या समाज का नहीं होता बल्कि ईश्वर का सृजन होता है।परिवार, धर्म, सम्प्रदाय और जाति उसे बाद में उसका परिवेश देता है, समाज देता है।कबीर किस धर्म में पैदा हुए कोई नहीं जानता। इसी तरह उनकी मृत्यु भी हमें ऐसा ही महान संदेश दे कर गयी। कहते हैं सन् 1518 में गांव मगहर में जब कबीर के शव के लिए उनके हिन्दू और मुसलमान अनुयायी लड़ने लगे तब किसी ने चादर हटाई तो देखा कि वहाँ शव की जगह फूल रखे हुए थे, जो दोंनों समुदायों ने बांट लिए और अपनी अपनी तरह से उनका संस्कार किया।तब उन्होंने न केवल यह संदेश दिया कि मनुष्य का शव न हिन्दू होता है न मुसलमान बल्कि यह भी कि उसके काम उसके फूलों की सुगन्ध होते हैं। उनके सांप्रदायिक सद्भाव के इस महान संदेश को शायद हम आज भी ठीक से नहीं समझ पाए हैं । दिल्ली, कोलकाता, मुंबई तथा अन्य नगरों में हो रही साम्प्रदायिक घटनाएं हमें फिर से कबीर के संदेशों की महत्ता समझा जाती हैं।

कबीर अत्यंत निम्न जाति से थे, जहाँ उन्होंने निर्धनता, जिल्लत और कठोरता के सिवाय कुछ नहीं देखा था. उनके भीषण आत्मसंघर्ष की तो आज हम कल्पना भी नहीं कर पाऐंगे।भारतीय इतिहास में वह सिकन्दर लोदी का क्रूर शासन काल था।समाज में अराजकता का हाहाकार मचा था। हिन्दू-समाज में बलपूर्वक मुस्लिम-धर्म फैलाया जा रहा था और अशिक्षा, मत-मतान्तर, शोषण, गरीबी और असहायता का भयावह वातावरण था।

दूसरी तरफ़ कर्मकाण्ड और धार्मिक आडम्बरों से पंडितों और कठमुल्लाओं ने निर्धन जनता पर शोषण और अत्याचार का क्रूर शिकंजा कसा था।तथाकथित शुद्ध या सवर्ण जाति के लोगों ने नीची जाति के लोगों का जीना दूभर कर रखा था। इनके लिए मंदिर में प्रवेश और ज्ञानार्जन निषेध कर रखा था। छुआछूत जैसी अमानवीय प्रथा से वे लोग नारकीय जीवन जी रहे थे। कबीर यह अमानवीयता देखकर विचलित होते हुए कहने लगे -

सुखिया सब संसार खावे और सोवै
दुखिया दास कबीर जागे और रोवै

देखिए यहाँ कबीर अपने युग की पीड़ा का साक्षात्कार करते हुए रो रहे हैं।यह रोना कवि की स्वप्न से यथार्थ में आने की स्थिति है।यह सचमुच ज्ञान की पीड़ा है। यह विवेक का वह दर्द है, जो आज भी प्रश्न की तरह अनसुलझा है। वे जाग रहे हैं और रो रहे हैं, शेष सभी खा रहे हैं और सो रहे हैं। नवजागरण काल का यह रोना दरअसल समकालीन कवि की यथार्थबोध की अभिव्यक्ति भी है, जो आज के समकालीन साहित्य का बोध-वाक्य बन गया है।

यह रोना आधुनिक हिन्दी जागरण के प्रथम कवि भारतेन्दु हरिश्चन्द्र ने भी अंग्रेजी शासन काल के विरुद्ध व्यक्त किया था-

आवहु सब मिलकै रोवहु भाई
हा हा भारत-दुर्दशा न देखी जाई

मध्य युग में गालिब भी कहते हैं-

'रगों में दौड़ने फिरने के हम नहीं कायल
जो आँख से न टपका हो वो लहू क्या है?

समकालीन परिप्रेक्ष्य में उस अग्निपक्षी रूपी कबीर का जो नया आयाम जुड़ा है, वह है दलित-चेतना के रूप में उनके साहित्य का पुनर्पाठ।कबीर ने ही सर्वप्रथम दलितों के मन में आत्म-पहचान के लिए संघर्ष का बीज बोया था, जो आज एक समग्र सामाजिक, साहित्यिक आन्दोलन,एक राजनीतिक विचार, एक सांस्कृतिक पहचान बन गया है।इस तरह वर्तमान पटल पर कबीर दलितचेतना के प्रवर्तक और प्रवक्ता बन कर उभरे हैं, और व्यवस्था को चेतावनी देते हुए कहते हैं कि एक दिन जरूर ये दलित, पीड़ित, शोषित, उपेक्षित जन जागेंगे और संगठित हो कर अवश्य अपना हक मांगेंगे-

तिनका कबहुँ न निंदिये पाँव तले जो होइ।
कबहु जो उड़ आंखों पड़े, पीर घनेरी होइ।।

या फिर यह कि-

दुर्बल को न सताइए जाकी मोटी हाय।
मुए खाल की श्वास सों सार भस्म हो जाय।।

कबीर के अनुयायिओं ने उनकी प्रचलित रचनाओं को तीन खण्डों - साखी, सबद और रमैनी में वर्गीकृत करके संग्रहीत किया है और इस ग्रंथ का नाम 'बीजक' रखा गया। बीजक के पहले खण्ड में उनके 809 दोहे हैं, जिन्हें स्वयं उन्होंने साखी कहा है, जिसका अर्थ है 'सत्य का सीधा साक्ष्य'। कबीर की इन साखियों में व्यापक जीवन दर्शन और संघर्ष का संदेश विद्यमान है। अन्य दो खण्डों सबद और रमैनी में हिन्दी तथा अन्य सह भाषाओं में गाये जाने वाले आध्यात्मिक भजन संकलित हैं। उनकी उलटवाँसियाँ भी दरअसल पंडितों से लोहा लेने की प्रक्रिया में आई रचनाएँ हैं, जो बहुत लोकप्रिय हुईं।

जब हम कबीर-साहित्य की प्रासंगिकता का अध्ययन करते हैं तो पाते हैं कि हमारा समय कबीर के समय से शायद और अधिक कठिन और संश्लिष्ट हुआ है। शायद यही वजह थी कि कबीर ने सबसे पहले ज्ञान के स्रोत अर्थात गुरु के महत्व को प्रतिपादित किया-

गुरू गोविंद दोनों खड़े काके लागूँ पांय।
बलिहारी गुरू आपने गोविंद दियो बताय।।

गोविन्द अर्थात ईश्वर से मिलन या एकाकार होने की भावस्थिति पर उनका यह दोहा अद्वितीय है-

जब मैं था तब हरि नहीं, अब हरि हैं मैं नाहिं।
सब अंधियारा मिट गया जब दीपक देख्यो मांहि।।

यहाँ मुझे उर्दू शायर 'मौमिन' का वह शेर याद आता है, जिसके लिए कहते हैं गालिब ने अपना पूरा दीवान न्यौछावर करने की पेशकश की थी-

तुम मेरे पास होते हो गोया ।
जब कोई दूसरा नहीं होता।।

कबीर के इस सर्वव्यापी एकेश्वरवाद पर संसार के लगभग प्रत्येक धर्म में स्वीकृति मिली है-

कस्तूरी कुन्डल बसै मृग ढूंढ़े बन माहिं।
ऐसे घट-घट राम हैं दुनिया देखे नाहिं।।

अकर्मण्य और निरर्थक जीवन को त्याग कर कर्मशीलता और जीवन के महत्व को प्रतिपादित करता यह दोहा द्रष्टव्य है-

रात गंवाई सोय कर दिवस गंवाया खाय।
हीरा जनम अमोल था कौड़ी बदले जाय।।

तत्कालीन अशिक्षित समाज को ज्ञान से बेहतर प्रेम की राह बताते हैं, जो सहअस्तित्व के लिए जनता को जागरूक बनाता है-

पोथी पढ़ पढ़ जग मुआ पंडित भया न कोय।
ढाई आखर प्रेम का पढ़े सो पंडित होय।।

जग मुआ अर्थात् किताबें पढ़कर दुनिया चली गयी। किताबी ज्ञान प्राप्त किया वे चले गए, लेकिन जिन्होंने प्रेम का पाठ किया [illegible] गए,पंडित हो गए।तभी तो वे आस्था के प्रदर्शन या दिखावे पर [illegible] हैं-

पत्थर पूजै हरि मिलैं तो मैं पूजूं पहार।
या ते तो चक्की भली पीस खाय संसार।।

सचमुच व्यंग्य की प्रचंडता तो कोई कबीर के पास [illegible] थे। उनके व्यंग्य पूरी व्यवस्था पर चोट करते हैं ।उन्होंने वेदों और कुरान से बनी तत्कालीन व्यवस्थाओं तथा अंध-श्रद्धाओं की पूरी निर्भीकता के साथ खूब बखिया उधेड़ी है।कबीर जब पाखण्ड पर चोट करते हैं तब वे बहुत मारक हो जाते हैं।पूजा का विरोध करते हुए कबीर के कटाक्ष को जरा भजन की इन पंक्तियों में भी देखिए-

मन न रंगाए, रंगाए जोगी कपरा।
आसन मारि मंदिर मैं बैठि।
नाम छाड़ि पूजन लगा पथरा।
मन न रंगाए, रंगाए जोगी कपरा।
कनवां फड़ाय जोगी जटवा बढ़ा ले।
दाढ़ी बढ़ाय जोगी होई गया बकरा।
मन न रंगाए, रंगाए जोगी कपरा।।

उनकी वाणी केवल भर्त्सना या आलोचना तक ही सीमित नहीं थी, बल्कि अपनी वाणी रूपी मशाल को लेकर वे नये समाज के निर्माण में निकल पड़े थे और नये जीवन के आदर्श हमें सौंपते रहे ।आज के कबीरपंथी संभवतः उनकी इस संघर्ष चेतना को सहेजकर नहीं रख पाए-

माला फेरत जुग गया फिरा न मन का फेर।
करका मन का डार दे मन का, मनका फेर।।

केवल माला फेरने से मन का भाव नहीं बदलता बल्कि मन के मोतियों की माला फेरने से समस्या का हल निकलता है।यहाँ वे दरअसल आत्मज्ञान को ही भक्ति का मार्ग मानते हैं, कर्मकाण्ड या पाखण्ड को तो कतई नहीं। वास्तव में यहाँ कबीर का ध्येय लोकजागरण है।आज इस लोक जागरण की महती आवश्यकता है।लोकजागरण को लेकर यह साखी तो घर-घर पहुँचना चाहिए-

हिन्दू कहत है राम हमारा मुसलमान रहमाना।
आपस में दोऊ लड़ मरैं, मरम कोई ना जाना।।

उन्होंने अपनी प्रखर वाणी से मानवीय एकता, स्वतंत्रता, समानता और भाईचारे का जोरदार प्रचार किया था, जिसे राष्ट्रपिता महात्मा गाँधी ने आत्मसात् किया और देश को मुक्त कराया। आज भी जब तक कबीर को नहीं पहचाना जायेगा तब तक धर्म के नाम पर होने वाली हिंसा, दंगा, वैमनस्य, शत्रुता और आतंकवाद को समाप्त नहीं किया जा सकता है। उन्होंने अद्वैतवाद या एकेश्वरवाद के सिद्धान्त को प्रस्तुत करके हिन्दू-मुस्लिम

एकता का हमवार रास्ता प्रशस्त किया था। वे सदैव सभी समुदायों को निकट लाने का प्रयत्न करते रहे। गंगा-स्नान पर बनारस में लाखों लोगों की भीड़ देख कबीर उनसे कहते हैं–

नहाए धोए क्या भया जो मन मैल न जाय।
मीन सदा जल में रहे धोए बास न जाय।।

और यह भी कि-

कंकर पत्थर जोड़ के मस्जिद लियो बनाय।
ता चढ़ मुल्ला बांग दे क्या बहिरा हुआ ख़ुदाय।।

यहाँ 'कंकड़ पत्थर' प्रतीक गहन अर्थबोध देते हैं, उन्हें समझना होगा। यह संवेदनहीनता के लिए प्रयुक्त हुए हैं, जहाँ आज हम अपने सिवाय दूसरे के बारे में सोचते तक नहीं। आजकल जब हम इतने बुद्धिमान हो गये हैं, इतने तार्किक हुए हैं तब भी लाउडस्पीकर पर कीर्तन करवाते हैं, सुबह की अजान की घोषणा करते [illegible] धर्म का दिखावा करते हैं। चाहे पड़ोस में बच्चे की बोर्ड परीक्षा हो [illegible] बीमार हो जो शोर सहन न कर पा रहा हो, फिर भी लगे हैं [illegible] बजाने। बड़े-बड़े धार्मिक जुलूस निकलते हैं और शहरों में जाम [illegible] तीर्थस्थलों पर भगदड़ से कितनी ही मौतें हो जाती हैं। वैष्णव देवी [illegible] हाल ही में हमने देखा है ये दर्दनाक दृश्य। हाल ही में बिहार में [illegible] मंदिर पर लगे मेले के कारण एक ट्रेन से कट कर अनेक लोग मारे [illegible] यह सब भक्ति के नाम पर हो रहा आडम्बर नहीं तो और क्या [illegible] इसीलिए हमें कर्म, ज्ञान और मानव प्रेम का पाठ सिखाते हैं-

जिन खोजा तिन पाइया गहरे पानी पैठ।
मैं बउरा डूबन डरा रहा किनारे बैठ।।

यहाँ कबीर कर्म की महत्ता को प्रतिपादित कर रहे हैं ।ज्ञान की महत्ता बताते हुए कबीर भेदभाव छोड़कर ज्ञान प्राप्त करने की सलाह देते हैं–

जाति न पूछो साधु की पूछ लीजिये ज्ञान।
मोल करो तलवार का पड़ा रहन दो म्यान।।

इसी तरह 'साधु' की परिभाषा करते हुए कबीर समझा देते हैं कि–

साधू ऐसा चाहिए जैसा सूप सुभाय।
सार-सार को गहि रहे, थोथा देय उड़ाय।।

आज ऐसे सज्जनों की ही जरूरत है, जो अनाज साफ करने वाले सूप जैसा सुभाव रखते हों, जो सार्थक बचा ले और निरर्थक को ऊड़ा दे।साथ ही आपसी व्यवहार को लेकर कहते हैं कि–

ऐसी वाणी बोलिए मन का आपा खोय।
औरन को शीतल करे आपहूं शीतल होय।।

मन की अराजकताओं और स्वार्थों के कारण आज जब हम सम्बंधों की बुनावट को लगातार उधेड़ रहे हैं, तब हमें यह साखी राह दिखाती है और यह व्यक्तिगत, सामाजिक,राष्ट्रीय और वैश्विक स्तर पर भी हमें कितनी उपयोगी लगने लगती है। यहाँ वे कल्याण भाव और आचरण की प्रत्येक मानव से यूँ अपेक्षा करते हैं–

बड़ा हुआ तो क्या हुआ जैसे पेड़ खजूर।
पंथी को छाया नहीं फल लागे अति दूर।।

अर्थात् उस सम्पन्न की सम्पन्नता किस काम की, जो मानवता के कल्याण में किसी के काम न आ रही हो। इसी तरह वे समानता का भी संदेश देते हैं।दोनों धर्मों की एकात्मकता ही कबीरवाणी की पहचान है। यही कबीरत्व है–

एक बून्द एकै मलमूतर एक चाम इक गूदा।
एक जोति सैं सब उत्पन्ना को बामन, को सूदा।।

कबीर से प्रेरणा लेकर ही महात्मा गांधी अपने प्रातः काल की प्रार्थना सभा में समाज से जातिवाद के उन्मूलन के उद्देश्य से अक्सर इस भजन को सुनते थे कि–

जात पांत पूछे नहिं कोई।
हरि को भजे सो हरि का होई।।

कबीर अंधभक्ति के स्थान पर नयी भक्ति को अन्वेषित करते है। धर्म, ईश्वर और अध्यात्म पर समर्पण का विचार देकर कबीर भक्ति को कुछ इस तरह पुनर्परिभाषित करते हैं–

भक्ति दहेली राम की नहीं कायर का काम।
सीस उतारे हाथि करि सो लेसी हरिनाम।।

पूजा के लिए उन्होंने कभी घंटियाँ नहीं बजाईं, पूजाएं नहीं की बस खुद को ही अर्पित कर दिया।यह है उनकी भक्ति। कबीर की भक्ति के मूलभूत सरोकार उनकी सांस्कृतिक मूल्यनिष्ठा में हैं। इसी से उन्होंने अंधविश्वास की गिरफ्त से लोकचेतना को आजाद कराया। दरअसल कबीर इस आंदोलन के केन्द्र और नायक के रूप में सामने आते हैं। कबीर ने तथाकथित शुद्धवर्ग को ताल ठोककर चुनौती दी। बलि देने- दिलाने वालों से भी निडरता से वे कह गए कि–

बकरी पाती खात है ताकी काढ़ी खाल।
जो नर बकरी खात है ताको कौन हवाल।।

जब आप एक निरीह प्राणी की बलि देते हैं, तो संत कैसे हुए ? क्या यह पाप नहीं है? जरा सोचो बकरी घास खाती है, तब उसकी काठ जैसी चमड़ी बनती है, जब तुम उसे खाते हो तो बताओ तुम्हारी चमड़ी कैसी होगी। इस तरह वे नैतिक जीवन के पक्षधर थे और किसी तरह की हिंसा के विरोधी भी थे।इसी तरह मुसलमानों को भी उनके अंर्तिवरोधों के लिए खरी-खोटी सुनाने से वे कभी नहीं चूके–

दिन में रोजा रखत है रात हनत है गाय।
यह खून वह वंदगी कैसे खुशी खुदाय।।

रोजा एक पवित्र प्रथा है लेकिन आज यह भी विकृत हो गयी है । धर्मस्थल, पाखण्ड और दुराचार के केन्द्रस्थल बनते जा रहे हैं। जब धर्म अपनी सारी आस्थाओं और आदर्शों से दूर छिटक कर कर्मकाण्ड, आडम्बर तथा अनेक अस्पष्ट सिद्धान्तों की राह चलने लगता है, तब समन्वय, आस्था और विश्वास की पुनः स्थापना करते हुए कबीर आत्मंमथन की बात कहते हैं-

बुरा जो देखन मैं चला बुरा न मिलिया कोय।
जो दिल खोजा आपना मुझ से बुरा न कोय।

मैं जब संसार में बुराई खोजने निकला तो मुझे कोई बुरा न मिला और जब मैंने अपने अन्दर झांककर देखा तो पाया कि मुझसे बुरा कोई दूसरा नहीं है। यहाँ कबीर का जो अपने अंदर झांकना है वह आत्ममंथन की ही विचारणीय अवधारणा है। पूंजीवादी समाज को यह सीख गांधी के ट्रस्टीशिप के सिद्धान्त से जा मिलाती है जब वे कहते हैं कि-

जो जल बाढ़े नाव में, घर में बाढ़े दाम।
दोऊ हाथ उलीचिये, यही सज्जन को काम।।

बताइये परमार्थ का इससे बेहतर दोहा और क्या होगा। भौतिक जीवन लालच, लोभ और ईर्ष्या की ओर ले जाता है। इस लोभ और लालच की प्रवृति पर वे निरन्तर प्रहार करते हैं और आत्म संतोष का पाठ हमें याद कराते हैं-

रूखा सूखा खाइके ठण्डा पानी पी।
देख परायी चूपडी मत ललचाओ जी।।

तो यहाँ हमने देखा कि कबीर का हरेक दोहा एक चिन्गारी की तरह हमारे जेहन को, हमारे ज़मीर को हमारी आत्मा को जागृत कर देता है, उत्तप्त कर देता है। कबीर अपने युग की कुरूपता को यूँ निर्भीकता से अनावृत कर रहे हैं ।उन भेदों और सीमाओं को समझने में हमारी मदद कर रहे हैं, जो हमारा मन उत्पन्न करता है। वास्तव में हमारा अभिमान, हमारे भय और हमारी असुरक्षा का भाव हमें निरन्तर हिंसक और क्रूर बना रहे हैं।ये व्यक्तिगत द्वेष कैसे भीड़ में परिवर्तित होते हैं, कैसे सामूहिक हो जाते हैं और फिर समाज और देश से वैश्विक होकर आतंकवाद का रूप ले लेते हैं, महायुद्धों का रूप ले लेते हैं।कबीर इन दोहों से दैनिक व राष्ट्रीय जीवन में आए नैतिक और आध्यात्मिक सत्य को अदभुत उपमाओं और रूपकों से ऐसे जीवन्त कर देते हैं कि बात हमारे सामने सजीव हो उठती है ।

'बीजक' में रमैनी प्रार्थनाओं व भजनों तथा उलट बांसियाँ गूढ़ उक्तियों का

संकलन है, जिन्हें समझने में अच्छे-अच्छों के आज भी पसीने छूट जाते हैं।मिसाल के तौर पर जरा आप भी इन उलटबांसियों के अर्थ निकालने की कोशिश कीजिये–

सिर राखे सिर जात है सिर राखे सिर जात,

और दूसरी उलटबांसी–

नाव में नदिया, डूबी नदिया जाय।

महात्मा कबीर भारत की उन महानतम विभूतियों में से एक हैं जिन्होंने तत्कालीन समाज से लेकर आज तक के समाज को निरन्तर प्रभावित किया है। कबीर वाणी तब से अब तक जनमानस में क्रान्ति चेतना का सतत संचार करती रही है ।हिन्दी में युग चेतना की नयी परम्परा का प्रारम्भ कबीर से होता है।कबीर का साहित्य और संदेश अक्षय है और इसी अर्थ में कबीर महात्मा हैं, संत हैं, ऋषि हैं।

जैसा मैंने पहले भी कहा कि कबीर सामाजिक क्रान्ति के ऐसे महानायक थे, जिन्होंने अपनी वाणी से युग-चिंतन की धारा ही बदल कर रख दी थी।उन्होंने तत्कालीन समाज से लेकर आज तक उपेक्षित शोषित और दलित समाज को अपनी आवाज दी, उन्हें जागृत किया और नए प्रगतिशील समाज के निर्माण में सतत योगदान दिया।स्वामी दयानंद सरस्वती ने जो सांस्कृतिक चेतना का आन्दोलन चलाया वह कबीर से ही प्रेरित था। बाबा साहेब अंबेडकर इसी दलित उत्थान के अभियान को लेकर महामानव के रूप में समाज में उभरे। सिक्ख धर्म में कबीर महत्वपूर्ण स्थान रखते हैं। गुरुग्रंथ साहेब में भक्त कवियों की वाणी में बड़ा योगदान कबीर वाणी का है। इसमें उनके 227 पद 17 राग और 237 श्लोक सम्मिलित हैं। राधास्वामी मत भी कबीर के विचारों का ही अनुयायी है।

कबीर ने जो कहा वही अपने जीवन में जिया भी।उन्होंने अपनी वाणी में अपनी आत्मा उतार कर रख दी है। उनकी वाणी का उत्कृष्ट गुण है- उनकी मौलिकता और स्पष्टवादिता। क्योंकि कबीर ने जीवन के मूल स्वरूप को हमारे सामने उजागर करके यह बताया है कि जीवन वास्तव में है क्या और किसलिए है। महज कविता करना उनका उद्देश्य नहीं था बल्कि उनके लिए यह संघर्ष और जागरण का साधन था। अपने कवित्व से वे हमें वहां ले जाते हैं, जहाँ करुणा है, अपनत्व है, भाईचारा है, प्रेम है और जहां ईश्वर से मिलन संभव है। वे अपने कर्म से महान बने हैं। कबीर हमें पहचान की राजनीति से ऊपर उठकर एकता, सहिष्णुता और समन्वय की राजनीति सिखाते हैं। इसीलिए वे बहुत प्रासंगिक हैं।

कबीर ने अपने अराजक समय की नब्ज को परखा और समय के सामने असहमति व अस्वीकार की आवाज बुलन्द की, सत्य की आवाज बुलन्द की। उनके ये दोहे उनके जीवन-संघर्ष के जिंदा सबूत हैं।

वे नई क्रान्ति का शंखनाद करते हैं, लेकिन अपने साथ चलने वाले को वे चेतावनी भी देते हैं कि यदि मेरे साथ चलना है तो पहले अपना घर जला के आ–

हम घर जारा आपना लिया मुराड़ा हाथ।

जो घर फूके आपना चले हमारे साथ।।

एक और अंतिम बात... जब मैं साहित्य में मार्क्सवाद और बाद में दलित साहित्य का अध्ययन कर रहा था तब घूम-फिर कर मुझे कबीर की ओर लौटना पड़ा था। तब मैंने जाना कि मार्क्स भी वर्गसंघर्ष की अपनी अवधारणा में कबीर से ही प्रेरणा ले रहे हैं, उनके इस दोहे ने यह प्रमाणित भी कर दिया है-

सांई इतना दीजिए जामें कुटुम समाय।

मैं भी भूखा न रहूं, साधु न भूखा जाय।।

यह दोहा सिद्ध करता है कि कबीर ने कल्याणकारी और वर्ग-विहीन समाज का सपना मार्क्स के साम्यवादी सपने से बरसों पहले देख लिया था। इसीलिए मैं कबीर को मार्क्स से पहले का साम्यवादी चिन्तक मानता हूं। अपने इस स्वप्न को पूरा करने में उनके दो ही साधन हैं ज्ञान और प्रेम। इसीलिए मैं उन्हें पहला यथार्थवादी कवि भी मानता हूं, जिसने कविता की पूर्ववर्ती सभी परिभाषाएं, सारे प्रतिमान बदल कर रख दिए। कबीर के चिन्तन और उनकी कविता के आयाम इतने विराट हैं कि उनका आत्मबोध ही विश्वबोध में परिवर्तित होता चला गया है। तभी तो कबीर अकेले ऐसे कवि हैं, जिन्हें हिन्दू-मुस्लिम, सिख, ईसाई, बौद्ध और अन्य सभी सम्प्रदाय अपना मानते हैं।

प्रासंगिकता का अर्थ होता है- वर्तमान संदर्भ में अतीत की परख करना व उससे निसृत मूल्यों की पहचान करना।कबीर युग-प्रवर्तक थे, उनकी रचनायें अपने समय से उपजी थीं और चूंकि वही स्थितियाँ आज भी विद्यमान हैं, इसीलिये उनकी वाणी हमें आज भी आवश्यक और महत्वपूर्ण लगती है। चाहे धार्मिक एकता, सामाजिक चेतना, राजनीतिक चेतना या सांस्कृतिक चेतना की बात हो, कहीं न कहीं हम उनके विचारों से ही समाधानों और निष्कर्षों तक पहुंच रहे हैं। इसीलिए कबीर की प्रासंगिकता निर्विवाद है। वास्तव में कबीर साहित्य आधुनिक साहित्य की नींव है, जिस पर यह विशाल प्रगतिशील साहित्य का भवन खड़ा है। आधुनिक कविता का मूलस्रोत कहीं न कहीं कबीर से जुड़ता है जैसे-जैसे हम आज की स्थितियों पर विचार करते हैं, कबीर हमारे निकट और हमारे साथ खड़े मिलते हैं। मिसाल के तौर पर आजादी की लड़ाई से उपजे अनेक राजनेताओं ने कबीर से प्रेरणा ली। रवीन्द्रनाथ टैगोर ने तभी उन्हें 'मुक्तिदूत ' कहा है। भारत के महानायक गांधी और डा. अम्बेडकर कबीर चेतना से प्रभावित हैं।महात्मा गांधी ने यह स्वयं स्वीकारा है कि वे कबीर से प्रेरित हैं।सबूत के तौर पर गांधी दर्शन पर कबीर के इस दोहे की स्पष्ट छाप दिखाई देती है कि :

साँच बराबर तप नहीं झूठ बराबर पाप।

जा के हिरदय सांच है वा के हिरदय आप।।

ओशो रजनीश और अन्य संतों ने कबीर के अध्यात्म का प्रसार किया है।अर्थात छै सौ चौबीस साल बाद भी हिन्दी के जिस कवि की वाणी इतनी सार्थक और प्रासंगिक हो उसे बार बार याद किया जाना चाहिए ताकि इस अंधेरे से, इस कुहासे से बाहर निकल सकें।

इसके लिए हम लेखकों और हमारी सरकार का कर्तव्य है कि देश और विदेश में कबीर पर जो अनगिनत शोधकार्य हुए हैं, उन्हें एक जगह एकत्रित कर उन पर अध्ययन, मूल्यांकन और अध्यापन का कार्य करने हेतु एक विश्वस्तरीय 'कबीर अंतर्राष्ट्रीय शोध संस्थान' की स्थापना के बारे में अतिशीघ्र विचार किया जाना चाहिए।

अंत में उनकी अमर रचना, जिसमें हमारे जीवन का सार छुपा है और जिसे दुनिया के हजारों गायकों ने गाया है और जो हमारे दिल में बसा हुआ है, उसे प्रस्तुत करता हूँ-

झीनी झीनी बीनी चदरिया, झीनी रे बीनी

काहे के ताना, काहे के भरनी, कौन तार से बीनी चदरिया

झीनी रे बीनी...

इंगला पिंगला ताना भरनी सुखमन तार से बीनी चदरिया

झीनी रे बीनी...

आठ कंवल दल चरखा डोलै, पांच तत्व गुन तीनी चदरिया

झीनी रे बीनी...

साँई को सियत मास दस लागै, ठोक ठोक के बीनी चदरिया

झीनी रे बीनी...

सो चादर सुर नर मुनि ओढ़िन, ओढ़ि के मैली कीनी चदरिया

झीनी रे बीनी...

दास कबीर जतन से ओढ़ीन, ज्यों के त्यों धर दीनी चदरिया

झीनी रे बीनी...

झीनी झीनी बीनी चदरिया, झीनी रे बीनी

• **395 सैक्टर 8, फरीदाबाद 121006**

सम्पर्क - 9871691313
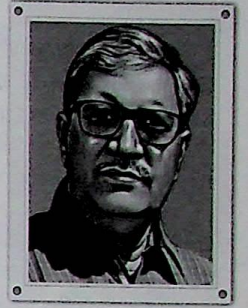
हिंदी साहित्य की ज्योति-पीठ
भारतेंदु भवन

कमलेश भट्ट 'कमल'

वाराणसी में द्वादश ज्योतिर्लिंगों में से एक बाबा विश्वनाथ तो विराजते ही हैं, साहित्य के भी कई ज्योतिर्लिंग यहां एक साथ स्थित हैं। इन ज्योतिर्लिंगों में कबीर, तुलसी, भारतेंदु, प्रसाद और प्रेमचंद बहुत महत्वपूर्ण हैं। साहित्यक संघ, वाराणसी की पत्रिका 'सोच विचार' द्वारा 27 अक्टूबर [illegible] को सायं 4 बजे से नागरी प्रचारिणी सभा में 'हिंदी ग़ज़ल और सा[illegible]' विषयक एक गोष्ठी रखी गई थी, जिसके लिए मैं एक दिन पूर्व ही वाराणसी पहुँच गया था। आयोजकों ने काशी पत्रकार संघ के गेस्ट हाउस 'पराड़कर भवन' में मेरे ठहरने की व्यवस्था की थी।यहाँ रुकने का विशेष लाभ यह था कि यहाँ से मैं गलियों में बसने वाले बनारस से मिल सकता था और ऐसा हुआ भी।

26 की शाम पराड़कर भवन पहुँचकर कोई 6 बजे मैं वरिष्ठ अधिवक्ता शरद त्रिपाठी के साथ बाबा विश्वनाथ के दर्शन और अभिषेक कर आया था। त्रिपाठी जी पराड़कर भवन से मुझे लेकर गलियों- गलियों होकर गुजरे थे। उसी में कहीं एक गली की ओर इशारा करके उन्होंने बताया था कि इसी गली के आखिर में 'भारतेंदु भवन' है। मन में पछतावा-सा उभरा था कि मुझे इस भवन के भी दर्शन कर लेना चाहिए था जो कि उतनी जल्दी संभव नहीं था। लेकिन मेरा मन बार-बार भारतेंदु भवन की ओर जाने वाली उस गली की ओर मुड़ जाता था, जिसके सामने से होकर मैं चला आया था।

बहरहाल 27 की सुबह पराड़कर भवन के कमरे में मैं अकेला ही था। आज का मेरा कोई पूर्व निश्चित कार्यक्रम भी नहीं था,सिवाय शाम वाली गोष्ठी के।

मैं एक आटो लेकर दशाश्वमेध घाट के लिए निकल पड़ा।

दशाश्वमेध घाट पर खड़े-खड़े अचानक चेतना में भारतेंदु हरिश्चन्द्र की रचना 'गंगा वर्णन' का मुखड़ा 'नव उज्ज्वल जलधार हार हीरक-सी सोहति/बिच-बिच छहरति बूंद मध्य मुक्तामनि पोहति' कौंध जाता है, जिसे उन्होंने ऐसे ही किसी घाट से गंगा को निहारते हुए लिखा होगा। कदाचित् हाईस्कूल के पाठ्यक्रम में पढ़ी गई यह रचना स्मृति में कहीं सुरक्षित रह गई थी और आज अचानक साक्षात् हो उठी।मैं जल्दी ही वहां से चौखंभा के लिए निकल पड़ा।

कुछ देर बाद ही मैं ठठेरी बाजार के नुक्कड़ पर था। बाज़ार की सँकरी गली में लोगों से पूछ-पूछ कर आगे बढ़ रहा था। दूकानों के खुलने का समय अभी भी नहीं हुआ था, नहीं तो भीड़ के कारण गली और भी सँकरी नज़र आती। कोई ढाई-तीन सौ मीटर चलने पर टी पॉइंट पर स्थित है तीन मंजिला 'भारतेंदु भवन', जो चौखम्भा मुहल्ले का हिस्सा है। एक ऊँचे चबूतरे पर बने हवेलीनुमा भारतेंदु भवन में मुख्य द्वार के दाईं तरफ 'भारतेंदु भवन' की संगमरमर की पट्टिका खिड़की के ठीक नीचे की ओर लगाई गई है, वहीं उसी खिड़की के दाएँ पार्श्व पर एक और संगमरमर की पट्टिका पर लिखा है-

'आधुनिक हिन्दी साहित्य के जन्मदाता
गोलोक वासी भारतेन्दु हरिश्चंद्र
(जन्म संवत् 1907 वि.-देहान्त संवत 1941वि.)
का
निवास स्थान।
यह शिलालेख नागरी प्रचारिणी सभा, काशी ने
सं.1989 वि. में लगवाया'

मैंने खुले दरवाजे की कुंडी खटखटाई तो जल्दी ही एक प्रसन्न-वदन प्रौढ़ व्यक्तित्व हमारे सामने था। वह और कोई नहीं, भारतेंदु के वंशज दीपेश चंद्र चौधरी थे। मैं रोमांचित-सा हो उठा! दीपेश ने अत्यंत आत्मीयता से पुरजोर गर्माहट के साथ मेरा स्वागत किया। मैंने अपना नाम बता कर परिचय दिया तो सब कुछ जैसे और भी अंतरंग हो गया- 'अरे आप तो आज के कार्यक्रम के मुख्य अतिथि हैं। कल शाम ही कार्ड मेरे पास आया है।' तब तक दीपेश मुझे खुले आँगन के दाईं ओर की बैठक में रखे तख्त पर बैठा चुके थे।

सामने की दीवार पर कई सारे पुराने चित्र लगे हुए थे, जिनमें से मैं केवल भारतेंदु जी को ही पहचान पा रहा था। दीपेश एक-एक करके उन चित्रों की पहचान कराते हैं- सबसे दाईं ओर भारतेंदु जी के दादाजी बाबू हर्षचंद्र, फिर उनके पिता बाबू गोपाल चंद्र 'गिरिधर दास'। बीच में स्वयं भारतेंदु जी, उनके बाईं ओर उनके भतीजे बाबू ब्रज चंद्र जी का चित्र। उनके बाईं ओर के दो चित्र बाबू कुमुद चंद्र जी के हैं। एक में वे क्वीन एलिजाबेथ व काशी नरेश डॉ विभूति नारायण सिंह के साथ हैं जो 1961 का है तो दूसरे में प्रधान मंत्री लाल बहादुर शास्त्री के साथ हैं। भारतेंदु जी के चित्र के ठीक नीचे लगा बड़ा तैल चित्र भी बाबू कुमुद चंद्र का है जो दीपेश के दादाजी हैं। बैठक के दाएँ कोने में परिवार के कुछ और चित्र एक स्टूल पर रखे हैं, जिनमें दो महिलाओं के तथा एक पुरुष के हैं। दीपेश बताते हैं कि एक महिला श्रीमती अनुरागवती देवी उनकी दादी हैं तथा दूसरी महिला उषा चौधरी उनकी माँ हैं। टीका लगे मस्तक वाले पुरुष बाबू गिरीश चंद्र चौधरी दीपेश के पिताजी हैं।

वे बताते हैं कि मौजूदा परिवार भारतेंदु जी के छोटे भाई बाबू गोकुल चंद्र जी का परिवार है। गोकुल चंद्र जी भारतेंदु जी से 18 महीने छोटे थे। दीपेश भारतेंदु जी की पांचवी पीढ़ी में आते हैं और उनके प्रपौत्र के पुत्र हैं।

दीपेश बताते हैं कि भारतेंदु जी के पिता बाबू फतेहचंद्र, 1760 ईस्वी के पास, पश्चिम बंगाल के मुर्शिदाबाद से काशी अपनी ससुराल आए थे। उनकी पत्नी माँ-बाप की इकलौती संतान थीं तो यह भवन उन्हें मिल गया था। लेकिन भारतेंदु जी का जन्म भदैनी में, सम्वत 1907 भाद्र पद शुक्ल पक्ष, ऋषि पंचमी, तदनुसार 9 सितम्बर 1850 में, अपने ननिहाल में हुआ था। रामकटोरा में क्वींस कॉलेज के सामने उनके परिवार का पुश्तैनी स्थान व बगीचा है। भारतेंदु जी की शुरुआती पढ़ाई भी क्वींस कॉलेज में ही हुई थी। भारतेंदु जी की महफिलें रामकटोरा वाले घर में ही जुटा करती थीं। भारतेंदु भवन में भारतेंदु बाबू ज़्यादातर दीवानखाने में ही बैठा करते थे।

दीपेश चौधरी द्वारा दी गई जानकारी के अनुसार भारतेंदु बाबू की पत्नी मन्नो बीबी भारतेंदु बाबू के जाने के बाद 42 वर्षों तक जीवित रहीं। उनका स्वर्गवास वर्ष 1926 ईसवी में हुआ।

वे बताते हैं कि भारतेंदु बाबू की तीन संतानें थीं- दो बेटे और एक बेटी। बेटे किशोर-काल में ही काल कवलित हो गए थे। लेकिन बेटी विद्यावती काफी समय तक जीवित रहीं। विद्यावती के परिवार में एक लड़की व पाँच लड़के हैं। उनमें से एक बाबू ब्रज रमन दास का साड़ियों का पुश्तैनी कारोबार है। उन्हीं की एक गद्दी भारतेंदु भवन के दीवानखाने में ब्रज रमन दास एंड संस के नाम से है।

विद्यावती देवी के एक पुत्र बाबू ब्रज रतन दास एडवोकेट अपने समय के प्रख्यात साहित्यकार भी थे और उन्होंने भारतेंदु बाबू की जीवनी भी लिखी। भारतेंदु बाबू की सबसे पहली जीवनी बाबू राधा कृष्ण दास ने लिखी थी जो उनके फुफेरे भाई थे। भारतेन्दु बाबू हरिश्चंद्र जी की जीवनी बाबू शिवनन्दन सहाय जी ने भी लिखी थी।

दीपेश चौधरी बातचीत के दौरान मुर्शिदाबाद के संदर्भ में सेठ अमीचंद का भी ज़िक्र करते हैं, भारतेंदु बाबू का परिवार उनकी ही वंश परंपरा में आता है। इतिहास सेठ अमीचंद को लॉर्ड क्लाइव और बंगाल के नवाब सिराजुद्दौला के संदर्भ में बहुत विवादास्पद ढंग से रेखांकित करता है।

तब तक दीपेश की पत्नी मालिनी और बेटा कंदर्प भी आ जाते हैं। अत्यंत सुशील और सौम्य परिवार से मिलना बड़ा सुखकर लग रहा था।

दीपेश बताते हैं कि भारतेंदु भवन पहले 5 मंज़िलों का था। वर्तमान में इसमें तीन मंज़िलें ही बची हैं, जिनकी छोटी-बड़ी 20-25 कोठरियों में प्रायः परिवार और खानदान के लोग ही रह रहे हैं।

दीपेश मुझे भारतेंदु जी की पूरी वंशावली के संक्षिप्त परिचय वाली एक छोटी-सी पुस्तिका देते हैं। साथ ही ज्ञानचंद जैन द्वारा लिखित 'भारतेंदु हरिश्चंद्रःएक व्यक्तित्व चित्र' पुस्तक भी दिखाते हैं। पुस्तक से मैं कुछ चित्रों व अन्य सामग्री की फोटो ले लेता हूँ- विशेष रूप से भारतेंदु जी की दोनों प्रेमिकाओं माधुरी और मल्लिका के।

पुस्तक के अनुसार मल्लिका बंगाली थीं और भारतेंदु हरिश्चंद्र के जन्मदिन पर उन्होंने चार बांगला गीत लिखे थे। इन गीतों से पता चलता है कि मल्लिका भारतेंदु को प्रानेश, प्रानश्री, प्रानधन आदि आत्मीय संबोधनों से संबोधित करती थीं। बाद में उक्त पुस्तक मुझे विश्वविद्यालय प्रकाशन से प्राप्त भी हो गई।

दीपेश भारतेंदु जी की हस्तलिपि में कुछ पुराने अभिलेख भी मुझे दिखाते हैं। ये अभिलेख 'तदीय समाज' की स्थापना और उसकी मासिक बैठकों से संबंधित थे। इस समाज के चार्टर में भारतेंदु जी स्वयं को वीर वैष्णव नामांकित करते हुए कुल 16 बिंदुओं का संकल्प पत्र तैयार करते हैं और उस पर हस्ताक्षर भी करते हैं, जिनके साक्षी सात गवाह बनते हैं। दो पृष्ठों का यह संकल्प पत्र भाद्रपद शुक्ल 11 बुधवार, संवत् 1930 को तैयार किया गया है। इन संकल्पों में केवल श्री राधिका रमण का भजन करना, बड़ी से बड़ी आपत्ति में अन्याश्रय ग्रहण न करना, किसी कामना हेतु भगवान से प्रार्थना न करना, वैष्णव मत के आचार्यों में से किसी एक पर पूर्ण विश्वास करना, किसी प्रकार की हिंसा व मांस भक्षण से परहेज करना, किसी भी मादक वस्तु का सेवन न करना, यथाशक्ति सत्य, शौच, दया का सर्वदा पालन करना, तुलसी की माला व पीतवस्त्र धारण करना जैसे कठिन संकल्प शामिल थे।

भारतेंदु हरिश्चंद्र का परिवार परंपरागत रूप से एक पुष्टिमार्गीय वैष्णव परिवार है। इसमें विष्णु की पूजा विधि- विधान से होती है। यहाँ सती की भी पूजा पारंपरिक रूप से होती आ रही है। दरअसल मुर्शिदाबाद में अंग्रेज़ों के भय से अमीचंद परिवार की 13 स्त्रियाँ सती हो गई थी। किंतु मालिनी बताती हैं कि परिवार में मुर्शिदाबाद से 7 सतियाँ यहाँ लाई गई थीं। ये सतियाँ चाँदी के पत्र में लिपटी सुपारी के प्रतीक रूप में हैं। इन्हें वर्ष में केवल दीपावली के दिन अथवा परिवार के किसी सदस्य के विवाह के अवसर पर ही खोलकर बाहर निकाला जाता है और घर का जो सबसे बड़ा सदस्य होता है वही इनकी पूजा करता है। यही नहीं मौजूदा परिवार चार पैरों वाले एक नन्हें-से हनुमान जी की भी पूजा करता है। यह मूर्ति बाबू फतेह चंद्र जी को हनुमान घाट वाले हनुमान मंदिर में पहनाई गई माला में छुपी हुई मिली थी। कुछेक सेंटीमीटर की वह मूर्ति नंगी आंखों से ठीक से दिखाई भी नहीं देती है। उसका एक धुँधला-सा चित्र बड़ा करके मंदिर में लगाया गया है।

भारतेंदु भवन में मुझे आए हुए दो घंटे बीत चुके थे। [illegible] लेते हुए दीवानखाने में आकर मेरे पैर एक बार फिर से ठिठक गए। न जाने क्या सोचकर मैं उस तामजान (खुली पालकी) में जा बैठा, जिसमें बैठकर भारतेंदु बाबू बनारस की गलियों में घूमने के लिए निकलते रहे थे। इसी तामजान से ही तामझाम जैसा ठसक भरा शब्द निकला है, जिससे हम आप भली प्रकार परिचित हैं।

बाद के कई दिनों तक भारतेंदु बाबू की प्रेमिकाओं मल्लिका और माधवी के प्रसंग मेरे मस्तिष्क में हलचल पैदा करते रहे। कहाँ तो तदीय समाज के वीर वैष्णव के रूप में कठोर अनुशासन का व्रत लेना और कहाँ एक के बाद एक दो प्रेमिकाओं के संसर्ग में रहना- यह विरोधाभास मुझे परेशान कर रहा था। इसके बारे में पूछने पर दीपेश चौधरी ने बताया कि उनकी पहली प्रेमिका मल्लिका थीं जो बंगाली बाल विधवा तथा ईश्वर चंद्र विद्यासागर से जुड़ी थीं। वे साहित्यकार भी थीं और उनका एक अधूरा उपन्यास 'कुमुदिनी' नाम से था, जिसे बाद में परिवार के दूसरे लोगों ने पूरा किया जो धर्मयुग में प्रकाशित भी हुआ था। वे भारतेंदु भवन के पीछे ही परिवार के एक और भवन में रहती थीं। माधवी के बारे में दीपेश का कहना है कि वह अलीजान के नाम से वेश्यावृत्ति के दलदल में फँस गई थीं और उन्हें भारतेंदु बाबू वापस नई जिंदगी में ले आए थे।

मल्लिका और माधवी से जुड़ी घटनाएँ ऊपर से देखने में बेशक शरीरी लगती हों और बेशक शारीरिक आकर्षण का भी उनमें योगदान रहा हो, लेकिन इनके पीछे दो उपेक्षित और शोषित तथा बहिष्कृत स्त्रियों को समाज की मुख्यधारा में शामिल करने का बड़ा उद्देश्य भी निहित दिखाई देता है। इन स्त्रियों की स्थितियों से भारतेंदु बाबू कहीं न कहीं विचलित अनुभव कर रहे थे और उनके संपर्क में आने पर एक कवि- सुलभ संवेदनशीलता वश उनके निकट होते चले गए।

माधवी और मल्लिका के प्रसंग पर ज्ञान चंद जैन ने अपनी पुस्तक में विस्तार से लिखा है। मल्लिका पर इसी नाम से मनीषा कुलश्रेष्ठ का एक उपन्यास आ चुका है तो वर्ष 2021 में डॉ. राजकुमार के संपादन में राजकमल प्रकाशन से 'मल्लिका समग्र' का भी प्रकाशन हो चुका है। फिलहाल यहाँ अधिक विस्तार में जाने की आवश्यकता नहीं है।

'हिंदी साहित्य का इतिहास' में आचार्य रामचंद्र शुक्ल ने भारतेंदु हरिश्चंद्र पर विस्तार से लिखा है। वे हिंदी गद्य का 'ठीक परिष्कृत रूप' पहले पहल भारतेंदु हरिश्चंद्र की पत्रिका 'हरिश्चंद्रचंद्रिका' से मानते हैं।ऐसे भारतीय हरिश्चंद्र के 'भारतेंदु भवन' में जाकर कुछ घंटे बिताना किसी साहित्यिक तीर्थयात्रा से कम नहीं था।

● 'गोविन्दम' 1512,कारनेशन-2, गौड़ सौन्दर्यम् अपार्टमेंट
ग्रेटर नोएडा वेस्ट, गौतम बुद्ध नगर (उत्तर प्रदेश) पिन कोड-201318
सम्पर्क - 9968296694

काशी अंक 13

प्रेमचंद का 'संस्कृति' चिंतन

कमलकिशोर गोयनका

संस्कृति और सभ्यता शब्दों को साधारणतः पर्यायवाची रूप में व्यवहृत किया जाता है। इनका व्यवहार अंग्रेजी के 'कल्चर' या 'सिविलिजेशन' शब्दों के समतुल्य होने लगा है। प्रेमचंद ने कल्चर के पर्याय-रूप में सभ्यता के साथ-साथ 'परिष्कृति' का प्रयोग भी किया है। उनके विचार में हमारी संस्कृति का आधार 'बड़े लोगों के कारनामे' हैं और 'हमारे विचार, हमारे सांस्कृतिक रूप, हमारे तौर-तरीके उसी साँचे में ढलते हैं, जो यह आदमी हमारी आँखों के सामने पेश करता है। भाव यह कि संस्कृति शिष्ट-जनों के (या महापुरुषों के) जन-हितकारी प्रयासों का समुच्चय है। प्रायः उन्होंने संस्कृति या सभ्यता के व्यापक अर्थ को ही स्वीकार किया है। व्यापक अर्थ में उनके अनुसार 'संस्कृति के दो रूप हैं, एक बाह्य जगत् से संबंध रखने वाली, दूसरी अंतर्जगत् से। बाह्य संस्कृति का संबंध भाषा, पहनावा, शिष्टाचार, शादी-व्यवहार आदि से है, आंतरिक का संबंध धार्मिक और आध्यात्मिक विचारों से।

उनके अनुसार विभिन्न संस्कृतियों के भेद का कारण प्राकृतिक परिस्थितियाँ रही हैं। 'जलवायु और प्राकृतिक प्रभावों के कारण भिन्न-भिन्न प्रांतों के निवासियों की भाषा, आकृति, परिधान, यहाँ तक कि स्वभाव में भी परिवर्तन होते गए। भिन्न-भिन्न संस्कृतियों का विकास हुआ। फलतः 'संस्कृति का जो कुछ रूप है, वह इन्हीं परिस्थितियों का बनाया हुआ है। ' उनके अनुसार 'संस्कृति का धर्म से कोई संबंध नहीं। आर्य संस्कृति है, ईरानी संस्कृति है, अरब संस्कृति है, लेकिन ईसाई संस्कृति और मुस्लिम या हिंदू संस्कृति नाम की कोई चीज़ नहीं है। फिर भी प्रसंगानुसार उनके लेखों, भाषणों या टिप्पणियों में हिंदू संस्कृति, मुस्लिम संस्कृति, ईसाई संस्कृति, भारतीय संस्कृति, पाश्चात्य (पश्चिमी) संस्कृति, एशियन संस्कृति, यूरोपीयन संस्कृति, रूस की नई सभ्यता, विश्व सभ्यता, मानव-संस्कृति, व्यावसायिक (आर्थिक) संस्कृति आदि के संबंध में स्थान-स्थान पर उल्लेख मिलते हैं।

भारत के हिंदू-मुसलमानों में सांस्कृतिक भेद उन्हें मान्य नहीं था। पं. जवाहरलाल नेहरू के एक बयान का हवाला देकर उन्होंने यह स्वीकार किया है कि भारतीय हिंदुओं और मुसलमानों में सांस्कृतिक एकता है। वे मानते हैं कि 'प्रत्येक प्रांत में हिंदू और मुस्लिम जनता की भाषा एक है, पहनावा एक है, शादी-ब्याह की परिपाटी भी एक है।'व्यापक रूप में मुस्लिम संस्कृति का विचार करते हुए वे उसका वैशिष्ट्य अवश्य स्वीकार करते हैं और उसी वैशिष्ट्य के आधार पर उसके गुण-दोषों का विवेचन करते हैं।

मुस्लिम संस्कृति

उनके अनुसार 'मुसलमानों की संस्कृति ईरान और अरब की है। इस संस्कृति की प्रमुख विशेषता भ्रातृभाव है, जिसकी उन्होंने मुक्त-कंठ से प्रशंसा की है। उनके अनुसार मुस्लिम 'जाति में व्यापक भातृ-भाव का आदर्श है, जहाँ कोई छोटा है न बड़ा है, सब बराबर हैं। मौलाना आजाद के साक्ष्य पर उन्होंने कुरान की धार्मिक सहिष्णुता का उल्लेख भी आदर के साथ किया है। इस्लामी अंत्येष्टि-क्रिया को उन्होंने 'शांत, गंभीर, कोमल और सौजन्यपूर्ण' माना है। मूर्तिपूजा के खंडन को उन्होंने इस्लाम का आवश्यक लक्षण नहीं माना है, क्योंकि मुसलमान भी कब्र, ताजिए और मस्जिद की पूजा करते हैं। इसी प्रकार भारतीय इतिहास के मुस्लिम काल में मौलवियों के चित्रकला-विरोध का उल्लेख भी व्यंग्य के साथ किया गया है। "मजनूँ' शीर्षक एक लेख के माध्यम से उन्होंने फारसी प्रेम-शैली की आलोचना की है। 'विक्रमोर्वशी' के उर्दू तर्जुमे की समीक्षा करते हुए उन्होंने अनुवादक से सहमत होकर मुसलमानों के कौमी हल्म और अदब पर नाज को भी हानिकर स्वीकार किया है। 'कालिदास की कविता' शीर्षक लेख में उन्होंने संस्कृत साहित्य की भाषा, कलात्मकता आदि के मुकाबले में उर्दू-फ़ारसी के साहित्य को दरिद्र घोषित किया है।

ईसाई (पश्चिमी) संस्कृति

जैसा कि पहले उल्लेख हो चुका है प्रेमचंद संस्कृति को धर्म से निरपेक्ष मानते थे। फिर भी ईसाई धर्म के पश्चिमी देशों में फैलने के कारण पश्चिमी सभ्यता और ईसाई सभ्यता को प्रायः उन्होंने पर्याय-रूप में व्यवहृत किया है। उनका विश्वास था कि ईसाई या पश्चिमी कौम के पंचानवे प्रतिशत लोगों की खुराक गोश्त है और भौतिकता उनकी 'सभ्यता की आत्मा है। ' ईसाइयों के मद्यपान पर टिप्पणी करते हुए वे व्यंग्य में कहते हैं, 'अगर कोई हमसे पूछे कि ईसाई धर्म की सबसे प्रमुख विशेषता क्या है, तो हम कहेंगे शराब का इस्तेमाल। '

पश्चिम की इस संस्कृति का उद्गम-स्थान वे यूनान और रोम के संघर्ष-प्रधान राष्ट्र को मानते हैं। उनके अनुसार ईसाई धर्म, जो मूल में बौद्धधर्म और अंशों में हिंदूधर्म का ही रूपांतर है, पश्चिम में उस पौधे के समान था, जो कहीं विदेश से लाकर आरोपित किया गया हो। कुछ दिनों तक तो उसने अपने भीतर की शक्ति से बाहर की प्रतिकूल शक्तियों का सामना किया, फिर वह नष्ट हो गई। विदेशी पौधा उस प्रतिकूल जलवायु में फल-फूल न सका। आज पश्चिमी ईसाई कहलाते हुए भी ईसाइयत से कोसों दूर हैं। 'इसी यूनानी उद्गम के कारण प्रतिकूल स्वार्थों के संघर्ष की छाप पश्चिमी संस्कृति के हरेक अंग पर लगी हुई है। ' स्वार्थ और संघर्ष के इस सनातन पश्चिमी स्वभाव को कला के आविष्कार ने हवा दे दी और फलतः 'व्यावसायिकता पश्चिमी सभ्यता का कलंक' बन गई है। वे उन विचारकों से सहमत दिखाई देते हैं, जो इस संघर्षमूलक और ईश्वरहीन सभ्यता को विश्व के लिए घातक मानते थे।

संघर्ष पर टिकी इस सभ्यता में मानवीय सहयोग के लिए कोई अवकाश नहीं है। 'जैसे सारी संस्कृति उन्मत्त होकर मरु में जल खोज रही है। ' स्वार्थपरता ने उन्हें अंधा बना दिया है। जो ईसा के जितने ही पक्के हिमायती हैं, वे उतने ही लोलुप, उतने ही अनाचारी और पराए वैभव के शत्रु हैं। अब दूसरे का सत्यानाश उनके लिए कौतुक है और एक के बाद दूसरा वर्ष इसी सत्यानाशी कौतुक का चलचित्र है।

वे बताते हैं कि मौजूदा परिवार भारतेंदु जी के छोटे भाई बाबू गोकुल चंद्र जी का परिवार है। गोकुल चंद्र जी भारतेंदु जी से 18 महीने छोटे थे। दीपेश भारतेंदु जी की पांचवी पीढ़ी में आते हैं और उनके प्रपौत्र के पुत्र हैं।

दीपेश बताते हैं कि भारतेंदु जी के पिता बाबू फतेहचंद्र, 1760 ईस्वी के पास, पश्चिम बंगाल के मुर्शिदाबाद से काशी अपनी ससुराल आए थे। उनकी पत्नी माँ-बाप की इकलौती संतान थीं तो यह भवन उन्हें मिल गया था। लेकिन भारतेंदु जी का जन्म भदैनी में, सम्वत 1907 भाद्र पद शुक्ल पक्ष, ऋषि पंचमी, तदनुसार 9 सितम्बर 1850 में, अपने ननिहाल में हुआ था। रामकटोरा में क्वींस कॉलेज के सामने उनके परिवार का पुश्तैनी स्थान व बगीचा है। भारतेंदु जी की शुरुआती पढ़ाई भी क्वींस कॉलेज में ही हुई थी। भारतेंदु जी की महफिलें रामकटोरा वाले घर में ही जुटा करती थीं। भारतेंदु भवन में भारतेंदु बाबू ज़्यादातर दीवानखाने में ही बैठा करते थे।

दीपेश चौधरी द्वारा दी गई जानकारी के अनुसार भारतेंदु बाबू की पत्नी मन्नो बीबी भारतेंदु बाबू के जाने के बाद 42 वर्षों तक जीवित रहीं। उनका स्वर्गवास वर्ष 1926 ईसवी में हुआ।

वे बताते हैं कि भारतेंदु बाबू की तीन संतानें थीं- दो बेटे और एक बेटी। बेटे किशोर-काल में ही काल कवलित हो गए थे। लेकिन बेटी विद्यावती काफी समय तक जीवित रहीं। विद्यावती के परिवार में एक लड़की व पाँच लड़के हैं। उनमें से एक बाबू ब्रज रमन दास का साड़ियों का पुश्तैनी कारोबार है। उन्हीं की एक गद्दी भारतेंदु भवन के दीवानखाने में ब्रज रमन दास एंड संस के नाम से है।

विद्यावती देवी के एक पुत्र बाबू ब्रज रतन दास एडवोकेट अपने समय के प्रख्यात साहित्यकार भी थे और उन्होंने भारतेंदु बाबू की जीवनी भी लिखी। भारतेंदु बाबू की सबसे पहली जीवनी बाबू राधा कृष्ण दास ने लिखी थी जो उनके फुफेरे भाई थे। भारतेन्दु बाबू हरिश्चंद्र जी की जीवनी बाबू शिवनन्दन सहाय जी ने भी लिखी थी।

दीपेश चौधरी बातचीत के दौरान मुर्शिदाबाद के संदर्भ में सेठ अमीचंद का भी ज़िक्र करते हैं, भारतेंदु बाबू का परिवार उनकी ही वंश परंपरा में आता है। इतिहास सेठ अमीचंद को लॉर्ड क्लाइव और बंगाल के नवाब सिराजुद्दौला के संदर्भ में बहुत विवादास्पद ढंग से रेखांकित करता है।

तब तक दीपेश की पत्नी मालिनी और बेटा कंदर्प भी आ जाते हैं। अत्यंत सुशील और सौम्य परिवार से मिलना बड़ा सुखकर लग रहा था।

दीपेश बताते हैं कि भारतेंदु भवन पहले 5 मंज़िलों का था। वर्तमान में इसमें तीन मंज़िलें ही बची हैं, जिनकी छोटी-बड़ी 20-25 कोठरियों में प्रायः परिवार और खानदान के लोग ही रह रहे हैं।

दीपेश मुझे भारतेंदु जी की पूरी वंशावली के संक्षिप्त परिचय वाली एक छोटी-सी पुस्तिका देते हैं। साथ ही ज्ञानचंद जैन द्वारा लिखित 'भारतेंदु हरिश्चंद्रःएक व्यक्तित्व चित्र' पुस्तक भी दिखाते हैं। पुस्तक से मैं कुछ चित्रों व अन्य सामग्री की फोटो ले लेता हूँ- विशेष रूप से भारतेंदु जी की दोनों प्रेमिकाओं माधुरी और मल्लिका के।

पुस्तक के अनुसार मल्लिका बंगाली थीं और भारतेंदु हरिश्चंद्र के जन्मदिन पर उन्होंने चार बांगला गीत लिखे थे। इन गीतों से पता चलता है कि मल्लिका भारतेंदु को प्रानेश, प्रानश्री, प्रानधन आदि आत्मीय संबोधनों से संबोधित करती थीं। बाद में उक्त पुस्तक मुझे विश्वविद्यालय प्रकाशन से प्राप्त भी हो गई।

दीपेश भारतेंदु जी की हस्तलिपि में कुछ पुराने अभिलेख भी मुझे दिखाते हैं। ये अभिलेख 'तदीय समाज' की स्थापना और उसकी मासिक बैठकों से संबंधित थे। इस समाज के चार्टर में भारतेंदु जी स्वयं को वीर वैष्णव नामांकित करते हुए कुल 16 बिंदुओं का संकल्प पत्र तैयार करते हैं और उस पर हस्ताक्षर भी करते हैं, जिनके साक्षी सात गवाह बनते हैं। दो पृष्ठों का यह संकल्प पत्र भाद्रपद शुक्ल 11 बुधवार, संवत् 1930 को तैयार किया गया है। इन संकल्पों में केवल श्री राधिका रमण का भजन करना, बड़ी से बड़ी आपत्ति में अन्याश्रय ग्रहण न करना, किसी कामना हेतु भगवान से प्रार्थना न करना, वैष्णव मत के आचार्यों में से किसी एक पर पूर्ण विश्वास करना, किसी प्रकार की हिंसा व मांस भक्षण से परहेज करना, किसी भी मादक वस्तु का सेवन न करना, यथाशक्ति सत्य, शौच, दया का सर्वदा पालन करना, तुलसी की माला व पीतवस्त्र धारण करना जैसे कठिन संकल्प शामिल थे।

भारतेंदु हरिश्चंद्र का परिवार परंपरागत रूप से एक पुष्टिमार्गीय वैष्णव परिवार है। इसमें विष्णु की पूजा विधि- विधान से होती है। यहाँ सती की भी पूजा पारंपरिक रूप से होती आ रही है। दरअसल मुर्शिदाबाद में अंग्रेज़ों के भय से अमीचंद परिवार की 13 स्त्रियाँ सती हो गई थी। किंतु मालिनी बताती हैं कि परिवार में मुर्शिदाबाद से 7 सतियाँ यहाँ लाई गई थीं। ये सतियाँ चाँदी के पत्र में लिपटी सुपारी के प्रतीक रूप में हैं। इन्हें वर्ष में केवल दीपावली के दिन अथवा परिवार के किसी सदस्य के विवाह के अवसर पर ही खोलकर बाहर निकाला जाता है और घर का जो सबसे बड़ा सदस्य होता है वही इनकी पूजा करता है। यही नहीं मौजूदा परिवार चार पैरों वाले एक नन्हें-से हनुमान जी की भी पूजा करता है। यह मूर्ति बाबू फतेह चंद्र जी को हनुमान घाट वाले हनुमान मंदिर में पहनाई गई माला में छुपी हुई मिली थी। कुछेक सेंटीमीटर की वह मूर्ति नंगी आंखों से ठीक से दिखाई भी नहीं देती है। उसका एक धुँधला-सा चित्र बड़ा करके मंदिर [illegible] या [illegible] है।

भारतेंदु भवन में मुझे आए हुए दो घंटे बीत चुके थे। [illegible] लेते हुए दीवानखाने में आकर मेरे पैर एक बार फिर से ठि[illegible]। [illegible] जाने क्या सोचकर मैं उस तामजान (खुली पालकी) में जा बैठा,[illegible] बै[illegible]र भारतेंदु बाबू बनारस की गलियों में घूमने के लिए निकलते र[illegible]। [illegible] तामजान से ही तामझाम जैसा ठसक भरा शब्द निकला है, [illegible] ह[illegible] आप भली प्रकार परिचित हैं।

बाद के कई दिनों तक भारतेंदु बाबू की प्रेमिकाओं मल्लिका और माधवी के प्रसंग मेरे मस्तिष्क में हलचल पैदा करते रहे। कहाँ तो तदीय समाज के वीर वैष्णव के रूप में कठोर अनुशासन का व्रत लेना और कहाँ एक के बाद एक दो प्रेमिकाओं के संसर्ग में रहना- यह विरोधाभास मुझे परेशान कर रहा था। इसके बारे में पूछने पर दीपेश चौधरी ने बताया कि उनकी पहली प्रेमिका मल्लिका थीं जो बंगाली बाल विधवा तथा ईश्वर चंद्र विद्यासागर से जुड़ी थीं। वे साहित्यकार भी थीं और उनका एक अधूरा उपन्यास 'कुमुदिनी' नाम से था,जिसे बाद में परिवार के दूसरे लोगों ने पूरा किया जो धर्मयुग में प्रकाशित भी हुआ था। वे भारतेंदु भवन के पीछे ही परिवार के एक और भवन में रहती थीं। माधवी के बारे में दीपेश का कहना है कि वह अलीजान के नाम से वेश्यावृत्ति के दलदल में फँस गई थीं और उन्हें भारतेंदु बाबू वापस नई जिंदगी में ले आए थे।

मल्लिका और माधवी से जुड़ी घटनाएँ ऊपर से देखने में बेशक शरीरी लगती हों और बेशक शारीरिक आकर्षण का भी उनमें योगदान रहा हो, लेकिन इनके पीछे दो उपेक्षित और शोषित तथा बहिष्कृत स्त्रियों को समाज की मुख्यधारा में शामिल करने का बड़ा उद्देश्य भी निहित दिखाई देता है। इन स्त्रियों की स्थितियों से भारतेंदु बाबू कहीं न कहीं विचलित अनुभव कर रहे थे और उनके संपर्क में आने पर एक कवि- सुलभ संवेदनशीलता वश उनके निकट होते चले गए।

माधवी और मल्लिका के प्रसंग पर ज्ञान चंद जैन ने अपनी पुस्तक में विस्तार से लिखा है। मल्लिका पर इसी नाम से मनीषा कुलश्रेष्ठ का एक उपन्यास आ चुका है तो वर्ष 2021 में डॉ. राजकुमार के संपादन में राजकमल प्रकाशन से 'मल्लिका समग्र' का भी प्रकाशन हो चुका है। फिलहाल यहाँ अधिक विस्तार में जाने की आवश्यकता नहीं है।

'हिंदी साहित्य का इतिहास' में आचार्य रामचंद्र शुक्ल ने भारतेंदु हरिश्चंद्र पर विस्तार से लिखा है। वे हिंदी गद्य का 'ठीक परिष्कृत रूप' पहले पहल भारतेंदु हरिश्चंद्र की पत्रिका 'हरिश्चंद्रचंद्रिका' से मानते हैं।ऐसे भारतीय हरिश्चंद्र के 'भारतेंदु भवन' में जाकर कुछ घंटे बिताना किसी साहित्यिक तीर्थयात्रा से कम नहीं था।

● 'गोविन्दम' 1512,कारनेशन-2, गौड़ सौन्दर्यम् अपार्टमेंट
ग्रेटर नोएडा वेस्ट, गौतम बुद्ध नगर (उत्तर प्रदेश) पिन कोड-201318
सम्पर्क - 9968296694

प्रेमचंद का 'संस्कृति' चिंतन

कमलकिशोर गोयनका

संस्कृति और सभ्यता शब्दों को साधारणतः पर्यायवाची रूप में व्यवहृत किया जाता है। इनका व्यवहार अंग्रेजी के 'कल्चर' या 'सिविलिजेशन' शब्दों [illegible] समतुल्य होने लगा है। प्रेमचंद ने कल्चर के पर्याय-रूप में सभ्यता के [illegible] साथ 'परिष्कृति' का प्रयोग भी किया है। उनके विचार में हम[illegible] संस्[illegible] का आधार 'बड़े लोगों के कारनामे' हैं और 'हमारे विचार, हमार[illegible] रूप, हमारे तौर-तरीके उसी साँचे में ढलते हैं, जो यह आदमी [illegible] के सामने पेश करता है। भाव यह कि संस्कृति शिष्ट-जनों के [illegible] [illegible]रुषों के) जन-हितकारी प्रयासों का समुच्चय है। प्रायः उन्होंने [illegible]कृति [illegible] सभ्यता के व्यापक अर्थ को ही स्वीकार किया है। व्यापक अर्थ में उनके अनुसार 'संस्कृति के दो रूप हैं, एक बाह्य जगत् से संबंध रखने वाली, दूसरी अंतर्जगत् से। बाह्य संस्कृति का संबंध भाषा, पहनावा, शिष्टाचार, शादी-व्यवहार आदि से है, आंतरिक का संबंध धार्मिक और आध्यात्मिक विचारों से।

उनके अनुसार विभिन्न संस्कृतियों के भेद का कारण प्राकृतिक परिस्थितियाँ रही हैं। 'जलवायु और प्राकृतिक प्रभावों के कारण भिन्न-भिन्न प्रांतों के निवासियों की भाषा, आकृति, परिधान, यहाँ तक कि स्वभाव में भी परिवर्तन होते गए। भिन्न-भिन्न संस्कृतियों का विकास हुआ। फलतः 'संस्कृति का जो कुछ रूप है, वह इन्हीं परिस्थितियों का बनाया हुआ है। ' उनके अनुसार 'संस्कृति का धर्म से कोई संबंध नहीं। आर्य संस्कृति है, ईरानी संस्कृति है, अरब संस्कृति है, लेकिन ईसाई संस्कृति और मुस्लिम या हिंदू संस्कृति नाम की कोई चीज़ नहीं है। फिर भी प्रसंगानुसार उनके लेखों, भाषणों या टिप्पणियों में हिंदू संस्कृति, मुस्लिम संस्कृति, ईसाई संस्कृति, भारतीय संस्कृति, पाश्चात्य (पश्चिमी) संस्कृति, एशियन संस्कृति, यूरोपीयन संस्कृति, रूस की नई सभ्यता, विश्व सभ्यता, मानव-संस्कृति, व्यावसायिक (आर्थिक) संस्कृति आदि के संबंध में स्थान-स्थान पर उल्लेख मिलते हैं।

भारत के हिंदू-मुसलमानों में सांस्कृतिक भेद उन्हें मान्य नहीं था। पं. जवाहरलाल नेहरू के एक बयान का हवाला देकर उन्होंने यह स्वीकार किया है कि भारतीय हिंदुओं और मुसलमानों में सांस्कृतिक एकता है। वे मानते हैं कि 'प्रत्येक प्रांत में हिंदू और मुस्लिम जनता की भाषा एक है, पहनावा एक है, शादी-ब्याह की परिपाटी भी एक है।'व्यापक रूप में मुस्लिम संस्कृति का विचार करते हुए वे उसका वैशिष्ट्य अवश्य स्वीकार करते हैं और उसी वैशिष्ट्य के आधार पर उसके गुण-दोषों का विवेचन करते हैं।

मुस्लिम संस्कृति

उनके अनुसार 'मुसलमानों की संस्कृति ईरान और अरब की है। इस संस्कृति की प्रमुख विशेषता भ्रातृभाव है, जिसकी उन्होंने मुक्त-कंठ से प्रशंसा की है। उनके अनुसार मुस्लिम 'जाति में व्यापक भातृ-भाव का आदर्श है, जहाँ कोई छोटा है न बड़ा है, सब बराबर हैं। मौलाना आजाद के साक्ष्य पर उन्होंने कुरान की धार्मिक सहिष्णुता का उल्लेख भी आदर के साथ किया है। इस्लामी अंत्येष्टि-क्रिया को उन्होंने 'शांत, गंभीर, कोमल और सौजन्यपूर्ण' माना है। मूर्तिपूजा के खंडन को उन्होंने इस्लाम का आवश्यक लक्षण नहीं माना है, क्योंकि मुसलमान भी कब्र, ताजिए और मस्जिद की पूजा करते हैं। इसी प्रकार भारतीय इतिहास के मुस्लिम काल में मौलवियों के चित्रकला-विरोध का उल्लेख भी व्यंग्य के साथ किया गया है। "मजनूँ' शीर्षक एक लेख के माध्यम से उन्होंने फारसी प्रेम-शैली की आलोचना की है। 'विक्रमोर्वशी' के उर्दू तर्जुमे की समीक्षा करते हुए उन्होंने अनुवादक से सहमत होकर मुसलमानों के कौमी हल्म और अदब पर नाज को भी हानिकर स्वीकार किया है। 'कालिदास की कविता' शीर्षक लेख में उन्होंने संस्कृत साहित्य की भाषा, कलात्मकता आदि के मुकाबले में उर्दू-फ़ारसी के साहित्य को दरिद्र घोषित किया है।

ईसाई (पश्चिमी) संस्कृति

जैसा कि पहले उल्लेख हो चुका है प्रेमचंद संस्कृति को धर्म से निरपेक्ष मानते थे। फिर भी ईसाई धर्म के पश्चिमी देशों में फैलने के कारण पश्चिमी सभ्यता और ईसाई सभ्यता को प्रायः उन्होंने पर्याय-रूप में व्यवहृत किया है। उनका विश्वास था कि ईसाई या पश्चिमी कौम के पंचानवे प्रतिशत लोगों की खुराक गोश्त है और भौतिकता उनकी 'सभ्यता की आत्मा है। ' ईसाइयों के मद्यपान पर टिप्पणी करते हुए वे व्यंग्य में कहते हैं, 'अगर कोई हमसे पूछे कि ईसाई धर्म की सबसे प्रमुख विशेषता क्या है, तो हम कहेंगे शराब का इस्तेमाल। '

पश्चिम की इस संस्कृति का उद्गम-स्थान वे यूनान और रोम के संघर्ष-प्रधान राष्ट्र को मानते हैं। उनके अनुसार ईसाई धर्म, जो मूल में बौद्धधर्म और अंशों में हिंदूधर्म का ही रूपांतर है, पश्चिम में उस पौधे के समान था, जो कहीं विदेश से लाकर आरोपित किया गया हो। कुछ दिनों तक तो उसने अपने भीतर की शक्ति से बाहर की प्रतिकूल शक्तियों का सामना किया, फिर वह नष्ट हो गई। विदेशी पौधा उस प्रतिकूल जलवायु में फल-फूल न सका। आज पश्चिमी ईसाई कहलाते हुए भी ईसाइयत से कोसों दूर हैं। 'इसी यूनानी उद्गम के कारण प्रतिकूल स्वार्थों के संघर्ष की छाप पश्चिमी संस्कृति के हरेक अंग पर लगी हुई है। ' स्वार्थ और संघर्ष के इस सनातन पश्चिमी स्वभाव को कला के आविष्कार ने हवा दे दी और फलतः 'व्यावसायिकता पश्चिमी सभ्यता का कलंक' बन गई है। वे उन विचारकों से सहमत दिखाई देते हैं, जो इस संघर्षमूलक और ईश्वरहीन सभ्यता को विश्व के लिए घातक मानते थे।

संघर्ष पर टिकी इस सभ्यता में मानवीय सहयोग के लिए कोई अवकाश नहीं है। 'जैसे सारी संस्कृति उन्मत्त होकर मरु में जल खोज रही है। ' स्वार्थपरता ने उन्हें अंधा बना दिया है। जो ईसा के जितने ही पक्के हिमायती हैं, वे उतने ही लोलुप, उतने ही अनाचारी और पराए वैभव के शत्रु हैं। अब दूसरे का सत्यानाश उनके लिए कौतुक है और एक के बाद दूसरा वर्ष इसी सत्यानाशी कौतुक का चलचित्र है।

इन गोरे लोगों में चरित्र-बल का नितांत अभाव है। वे 'पराजितों के साथ कितना अमानुषीय व्यवहार करते हैं, यह जानी हुई बात है। ... जिस इलाके में इनका पड़ाव पड़ जाता है, वहाँ स्त्रियों का राह चलना बंद हो जाता है।' इंग्लैंड और अमरीका आदि के गोरों का जाति-भेद भी निंदनीय है। उनकी संघर्षमय मनोवृत्ति के कारण प्रजातंत्र जैसी आदर्श संस्था भी दलीय स्वार्थों के संघर्ष का अखाड़ा बन गई है। संसार का सारा धन खींचकर यूरोपीय युवक-युवतियाँ अब स्वादलिप्सा से भौरे-तितलियाँ बनने लगे हैं और उनके इस कामुकतापूर्ण व्यवहार को प्रगति का लक्षण नहीं माना जा सकता।

यह सब होते हुए भी 'हमें पश्चिम की सभी चीजें अपनी सभी चीजों से बढ़िया लगती थीं। उनका रहन-सहन, उनके रीति-रिवाज, उनके खान-पान सबमें हमारे लिए एक न रुकने वाला आकर्षण था। यूरोप वाले देर में सोकर उठते हैं, इसलिए हमें भी देर में सोकर उठना चाहिए। यूरोप वाले हरदम कपड़े पहने रहते हैं, इसलिए हमें भी कभी नंगे बदन न रहना चाहिए। यूरोप वाले शराब पीते हैं, इसलिए शराब पीना भी संसार पर विजय पाने का एक मंत्र है। वही एकांत प्रेम, वही अपने से नीचे दर्जे के आदमियों से पृथक् रहने की आदत, वही मुँह में सिगार दबाकर चलना, गरज हमने बंदरों की तरह पश्चिम वालों की नक़ल शुरू की और अभी तक करते जा रहे हैं। हमारे नेता और अगुआ जब उस प्रवाह में न सँभल सके, तो छोटे-छोटे साधारण आदमी क्या सँभलते? धीरे-धीरे समय ने हमको बताया कि यूरोप में सब-कुछ सोना ही सोना नहीं है, उसमें कांसा-पीतल भी है। हम अपने खोए हुए आत्मसम्मान को फिर अपनाने लगे, हमारी नज़रों से वह सम्मोहन हटा और हममें कुछ विचार करने की शक्ति आई। महात्मा गांधी ने आकर मानो उन बिखरी हुई आकार-हीन भावनाओं को मूर्तिमान कर दिया और यूरोप की बुराइयाँ भी हमें नज़र आने लगीं।

स्पष्टतः गांधी के समान प्रेमचंद भी पश्चिमी सभ्यता के आलोचक थे। उनका विश्वास था कि 'हममें हरेक पश्चिमी चीज़ के पीछे आँखें बंद करके चलने की जो प्रवृत्ति हो रही है, वह केवल हमारी मानसिक पराजय के कारण। हमारी सभ्यता में रोग थे, मगर उसकी दवा यूरोपीय सभ्यता की अंधभक्ति नहीं है। उसकी दवा हमें अपनी ही संस्कृति में खोजनी थी। यूरोपीय सभ्यता की नक़ल करके हमें अपने यहाँ भी उन्हीं दवाओं का व्यवहार करना पड़ेगा, जो यूरोप कर रहा है। यूरोप पथभ्रष्ट है, उसे अपने लक्ष्य का ज्ञान नहीं है और आज यूरोप के विचारवान लोग कह रहे हैं कि यह संस्कृति अब विध्वंस के गर्त में जाने वाली है। क्या हम भी उन्हीं बुराइयों की नकल करके अपनी संस्कृति को भी गर्त में ढकेलने की तैयारी करें?'

प्रेमचंद को यह दुःख था कि पश्चिमी संस्कृति की चकाचौंध ने हमें अंधा बना दिया। 'पूर्वीय सभ्यता अतिथियों के आ जाने से फूल उठती थी ... पश्चिम की सभ्यता ने हमें रोटी-चोर बनना सिखा दिया है।' उसका सबसे जहरीला पाठ खुदगर्जी है। 'प्राचीन संस्कृति में चिकित्सक के लिए किसी मरीज से फ़ीस लेना हराम था। .... पहले बुद्धि या सिद्धि की सफलता सेवा और उपकार में थी, अब स्वार्थ-सिद्धि में। मरीज के होठों पर प्राण लगे हों, डाक्टर साहब बिना फ़ीस लिए नहीं जा सकते।' इसी संस्कृति की लीला से शिक्षा संस्थाएँ ग्रेजुएट बनाने के कारखाने हो गई हैं। 'किसी यूनिवर्सिटी में चले जाइए। वहाँ आपको भारतीयता की गंध भी न मिलेगी। वहाँ अंग्रेजी भाषा का, अंग्रेजी वेश का, अंग्रेजी आचार का ही आधिपत्य है। ... इन विद्यालयों ने भारत में फैशनेबल समुदाय की सृष्टि करने में जो काम कर दिखाया है, वह और किसी ने नहीं किया।' आश्चर्य इस बात का है कि वैज्ञानिक दृष्टिकोण के अभाव में 'हमने नई शिक्षा पाकर गोरी जातियों की नकल में उन चीजों का व्यवहार करना छोड़ दिया, जो हमारी भोजन-सामग्री को पुष्टिकर बनाती थीं और नई-नई सामग्रियों के फेर में पड़ गए थे, जिन्हें यूरोप के व्यापारी लंबे चौड़े विज्ञापन दे-देकर हमारे सामने लाते थे, यह ओवल्टीन है, यह क्वेकर ओट है, यह माल्टेड मिल्क है। ... जिस युवक को देखिए इन्हीं इश्तिहारी चीजों के फेर में पड़ा हुआ है ...।'

व्यायाम और नकल की विदेशी पद्धतियों का प्रचलन भी उन्हें मान्य नहीं है। मेजर नायडू के एक बयान को रेखांकित करते हुए वे लिखते हैं, जो तात्त्विक दृष्टि से अगर ज़्यादा नहीं तो उतने कल्याणकारी अवश्य हैं, जितने पश्चिमी व्यायाम। मुझे विश्वास है कि किसी युवक को प्राचीन व्यायाम का अभ्यास, प्राचीन नियमों और आदेशों के अनुसार कराया जाए तो उससे कम लाभ न होगा, जितना पश्चिमी व्यायाम से होता है। भारतीय प्रणाली प्राणियों के लिए अधिक अनुकूल है, इसके साथ ही कितना कम खर्च। देशीय खेल कहीं भी खेले जा सकते हैं, बिना किसी अड़चन के और बहुत कम खर्च में। जिमनास्टिक के औज़ार यदि यहीं के बने हों तो भी सौ रुपए और दो सौ रुपए के बीच खर्च़ हो जाएँगे। क्रिकेट का एक बैट बीस रुपए में आता है और टेनिस का एक रैकेट तीस रुपए में। फिर क्रिकेट, हॉकी, फुटबाल और अन्य खेल हैं, जिनके लिए अच्छे मैदान, अच्छे सामान और खास तरह के जूतों की ज़रूरत है। इसका मुकाबला हिंदुस्तानी खेलों से कीजिए, जो आजकल के बालकों के लिए कहानी-मात्र रह गए हैं। ... हमारे स्कूल में कबड्डी, गुल्ली-डंडा, लखनी आदि खेलों का बड़ी आसानी से प्रचार किया जा सकता है, लेकिन किसी का उधर ध्यान नहीं है।

सार्वजनिक ही नहीं, पारिवारिक जीवन में भी प्रेमचंद [illegible] पाश्चात्य आदर्शों की तुलना में भारतीय आदर्श अधिक प्रभावित [illegible] हैं। [illegible] सम्मिलित परिवार के विषय में वे लिखते हैं'हमारी सभ्यता में [illegible] कुटुंब एक प्रधान अंग था। पश्चिमी सभ्यता में परिवार का [illegible] स्त्री और पुरुष। दोनों में बुराइयाँ और भलाइयाँ दोनों ही हैं, पर [illegible] सेवा और त्याग प्रधान है, वहाँ दूसरे में स्वार्थ और संकीर्णता।' [illegible] संबंध में भी उनका दृष्टिकोण भारतीय परंपरा के निकट है। सर [illegible] के तलाक बिल पर टिप्पणी करते हुए वे लिखते हैं-'हिंदू-विवाह [illegible] आदर्श बहुत ऊँचा है। हिंदू-विवाह और तलाक़ दो परस्पर विरुद्ध बातें हैं। लेकिन इस आदर्श का मूल्य बहुत कम हो जाता है, जब इसके पालन का भार केवल स्त्रियों पर रख दिया जाता है। ... यह सत्य है कि तलाक-प्रथा का दुरुपयोग किया जा सकता है। पश्चिमी देशों में उसकी जो छीछालेदर हो रही है, वह हम नित्य अखबारों में देखते हैं।' पश्चिमी दंपतियों में प्रचलित संतति-निग्रह की प्रथा को भी उन्होंने अनेक उपाधियों के साथ स्वीकार किया है। वे ब्रह्मचर्य द्वारा संततिनिग्रह को उत्तम मानते हुए भी कृत्रिम साधनों को बुरा नहीं समझते। उनकी दृष्टि में 'संतान-निग्रह के विरुद्ध जो सबसे विचारने-योग्य बात है, वह यह है कि इससे स्त्री-पुरुष की भोग-लालसा बढ़ जाती है, और विलास प्रवृत्ति पर अंकुश रखने के लिए जिस त्याग और बलिदान की ज़रूरत है, उसके शिथिल हो जाने के कारण स्त्री-पुरुष में प्रेम-बंधन ढीला हो जाता है तथा गृह-कलह और असंतोष के रूप में प्रकट होता है।' शिक्षित दंपतियों के संतति-निग्रह को वे सर्वथा अनुचित मानते हैं। उनका तर्क है कि 'पढ़ी-लिखी विचारशील देवियाँ और उन्नत विचार वाले पुरुष संताननिग्रह नहीं कर सकते और न राष्ट्र उन्हें इस जिम्मेदारी से आजाद कर सकता है। उन्हें तो संतान उत्पन्न करके उसका पालन करना ही पड़ेगा, अन्यथा देश में अयोग्य संतानें भर जाएँगी। देश ने गरीबों का रुपया लेकर आपको पढ़ाया लिखाया और आपको इस पद पर पहुँचाया, आपकी जात से देश को क्या फायदा पहुँचा?'

विविध प्रसंगों पर प्रेमचंद की जो ढेरों सामग्री उपलब्ध है, उसमें पश्चिमी संस्कृति के लिए केवल अपवादस्वरूप ही एकाध स्थलों पर प्रशंसात्मक टिप्पणियाँ मिलती हैं। हिंदुओं के अंत्येष्टि-संस्कार की आलोचना के समय मुसलमानों और ईसाइयों की पद्धति ने उनका ध्यान खींचा था। उन्हें 'राम नाम सत्य है' की अपेक्षा यह अच्छा लगा कि 'ताबूत उठाने वाले सिर झुकाए, बहुत ही आहिस्ता-आहिस्ता कब्रिस्तान की ओर जाते हैं।' यूरोप में भी कभी-कभी शवदाह की क्रिया होती है, लेकिन यंत्रों की मदद से यह लीला इतनी जल्दी और इतने परिष्कृत रूप से समाप्त हो जाती है कि आत्मा की तरह देह भी क्षण-मात्र में अदृश्य हो जाती है। एक अन्य स्थल पर यूरोप की रजोगुणीवृत्ति का भी उन्होंने आदरपूर्णक उल्लेख किया है-'यूरोप का विलास तो अपनी सारी बुराइयों के साथ आ डँटा, पर यूरोप का अध्यवसाय और साहस और उत्सर्ग और अन्य हज़ारों खूबियाँ, जो उस विलासिता पर परदा ढाँकती हैं, यहाँ कहीं नज़र नहीं आतीं।'

इन अपवादों को छोड़कर विशिष्ट भारतीय संदर्भों के कारण उन्होंने पश्चिमी संस्कृति की कुत्सा का ही सर्वत्र चित्रण किया है। यहाँ तक कि गरीबों के

इस वकील को पश्चिमी ढंग की संघर्षमय क्रांति भी स्वीकार्य नहीं है। सन् 1934 में इंद्रनाथ मदान को लिखे पत्र में उन्होंने स्पष्ट कहा है कि 'बुद्धिमतापूर्ण उपायों की असफलता का नाम क्रांति है। ... मैं आमूल परिवर्तन को चाहता हूँ, परंतु विध्वंस नहीं।' जागरण की जमानत के प्रसंग में स्पष्टीकरण देते हुए वे लिखते हैं-'रक्तमय विधानों के हम विरोधी हैं। ... मनुष्य के आंतरिक देवत्व पर हमारा पूर्ण विश्वास है। ... हम अपने को परिष्कृत करके ही अपने विरोधियों का दिल बदल सकते हैं।' इस अहिंसक समाजवाद या विकासवाद की ओर उनके झुकाव का कारण यह बद्धमूल विश्वास था कि 'हमारी संस्कृति का मूल तत्त्व अहिंसा है, पश्चिम की संस्कृति का मूल तत्त्व संघर्ष है।'

हिंदू (हिंदुस्तानी या पूर्वी) संस्कृति :

संस्कृति को असांप्रदायिक मानते हुए भी प्रारंभ में प्रेमचंद हिंदू-संस्कृति पर गर्व करते थे। 'हिंदू-सभ्यता और लोकहित' तथा श्रीकृष्ण और भावी जगत' जैसे विषयों पर उनकी टिप्पणियाँ इस तथ्य का प्रमाण हैं। आगे चलकर इस रागात्मक [illegible] में बौद्धिकता का पुट आ जाने पर भी उन्होंने संस्कृति संबंधी विविध प्रसंगों पर जितना लिखा है, उसमें हिंदू-संस्कृति के सत्पक्ष का स्तवन परिमाण में [illegible] सर्वाधिक है। ईसाई या पश्चिमी संस्कृति की तुलना में उन्होंने अपनी संस्कृति को सदैव अधिक महत्त्व दिया है। अपनी संस्कृति से उनका यह रागात्मक संबंध इतना प्रबल है कि पश्चिमी सभ्यता के तथाकथित सत्पक्षों की [illegible] वे [illegible] आलोचना-परीक्षा करते हैं और उनके समकक्ष अपनी परंपराओं [illegible] तौलते हैं। उदाहरणार्थ 'नवीन और प्राचीन' शीर्षक टिप्पणी 48 में उन्होंने वक्त की पाबंदी वाली पश्चिमी परंपरा के मुकाबले अतिथि की दिलजोई करनेवाली भारतीय परंपरा को तरजीह दी है।

प्रेमचंद हिंदू और हिंदुस्तानी सभ्यता में कोई अंतर नहीं करते। 'हिंदू-सभ्यता और लोकहित' शीर्षक निबंध में हिंदू-सभ्यता की बात करते-करते वे हिंदुस्तानी सभ्यता पर उतर जाते हैं। भारतीय हिंदू-मुसलमानों की संस्कृति में भेद उन्हें मान्य नहीं है। उनकी दृष्टि में भारतीय सांस्कृतिक संघर्ष का आधार हिंदू और मुस्लिम संस्कृतियाँ नहीं, पश्चिमी और पूर्वी संस्कृतियाँ हैं। 'इकबाल की शायरी पर एक नजर' डालते हुए वे कहते हैं-'संयोग कहिए या भगवान की इच्छा कहिए, आपका जन्म देश के बौद्धिक उत्थान की दृष्टि से भारतीय इतिहास के एक नाजुक ज़माने में हुआ है, जिसमें दो शानदार तहजीबों में कशमकश हो रही है। एक तरफ पश्चिमी सभ्यता का सिक्का फिर रहा है, दूसरी तरफ़ पूर्वी सभ्यता दिलों पर आधिपत्य जमाए हुए है।'

पहले भी यह कहा जा चुका है कि प्रेमचंद इस सांस्कृतिक संघर्ष में आजीवन हिंदू, हिंदुस्तानी या पूर्वी के समर्थक रहते हैं। इस समर्थन का कारण मात्र पूर्वाग्रह नहीं था। आलोचन-परीक्षण से उन्हें यह विश्वास हो गया था कि भारतीय संस्कृति का मूलाधार आध्यात्मिकता और त्याग-भावना है तथा मानवता का भविष्य उसके आदर्शों का अनुसरण करने में सुरक्षित है। संघर्ष और भोग को वे पश्चिमी सभ्यता की रीढ़ मानते थे और उन्हें मानवता के लिए अहितकर समझते थे। उनका विश्वास था कि 'महासमर का निदान है–विश्व-प्रेम' और उसकी स्थापना भारतीय आत्मवाद के आधार पर ही हो सकती है। इसीलिए उन्होंने कनफ्यूशियस से प्रेरित होकर घोषणा की थी कि 'हम प्रेमी हैं, प्रेम करते हैं-समूचे विश्व से, हमने विश्वशांति का डंका पीट दिया है।' 'नई या समाजवादी सभ्यता में भी उन्हें भावी मानव का कल्याण दिखाई देता है, परंतु समाजवाद का पश्चिमी अर्थ उन्हें स्वीकार नहीं है। वे विवेकानंद या रामतीर्थ के निकट आकर सोचते हैं कि भारत में इस समाजवाद का अर्थ एकात्मवाद को केवल व्यवहार में लाना है।'

उदार मानववादी प्रेमचंद को मानव की सात्त्विक उपलब्धियाँ स्वीकार करने में कभी झिझक नहीं हुई। धर्म या अध्यात्म की श्रेयस्कर प्रेरणाओं को उन्होंने सदैव मुक्त कंठ से सराहा है। आर्यसमाज या रामकृष्ण मिशन के सत्प्रयासों पर लिखी गई टिप्पणियाँ इसका प्रमाण हैं। उनका विरोध केवल प्रगति में बाधक धार्मिक रूढ़ियों से था। मानव और मानव के बीच दीवार खड़ी करनेवाले धर्म से उन्हें घृणा थी। इसीलिए सनातनी पाखंड पर उन्होंने अनेक वज्रा-प्रहार किए हैं। श्रेय की इसी भावना से उन्होंने 'हिंदू-समाज के वीभत्स दृश्य' खुली आँखों देखकर अंकित किए हैं। हिंदू-धर्म की अनेक रूढ़ियों में जाति-भेद का विशेष स्थान है। प्रेमचंद इस अमानवीय रूढ़ि को राष्ट्रीयता में बाधक होने के कारण यथाशीघ्र समाप्त करना चाहते थे। इसी कारण शोषक पंडे-पुजारी भी उन्हें फूटी आँख नहीं भाते थे। साधारण बोलचाल में गाली देने के भारतीय स्वभाव को उन्होंने कोसा है, क्योंकि 'बदज़बानी नैतिक अंधकार और जाति के पतन का पक्का प्रमाण है।' 'छुआछूत की भर्त्सना उन्होंने इसलिए की है कि जब तक हिंदू अपने धर्म से 'यह कलंक दूर न करके उसी से चिपटे रहेंगे, तब तक वे कभी स्वतंत्र नहीं हो सकते।'

इस प्रकार प्रेमचंद के सांस्कृतिक चिंतन का विकास पुनर्जागरण के वातावरण में हुआ है। भारतीय पुनर्जागरण के सारभूत तत्त्वों को आत्मसात् करनेवाले महात्मा गांधी का उज्ज्वल व्यक्तित्व उनके लिए प्रकाश-स्तंभ रहा है। प्रायः उन्हीं के विचारों से प्रेरित या सहमत होकर उन्होंने कुछ विकास-विरोधी सांस्कृतिक रूढ़ियों का खंडन किया है। अन्यथा, गांधी के समान वे भारतीय सांस्कृतिक परंपराओं और मूल्यों के प्रबल समर्थक रहे हैं। भाषा, साहित्य, कला, शिक्षा, रहन-सहन, पारिवारिक संबंध, खान-पान, खेलकूद, वेशभूषा आदि की श्रेयस्कर भारतीय परंपराएँ सदैव उनके लिए आदर्श रही हैं। उनकी भाषा-नीति गांधी के समान राष्ट्रीय गौरव की भावना और राष्ट्रीय एकता के आदर्श से अनुप्राणित है। शिक्षित समुदाय में अंग्रेजी के प्रचलन पर शोक प्रकट करते हुए वे लिखते हैं- 'अंग्रेज़ स्वप्न में भी किसी अंग्रेज़ से गैर-अंग्रेजी भाषा में न बोलेगा, मगर यहाँ हम आपस में ही अंग्रेजी बोलकर अपनी मानसिक दासता का ढिंढोरा पीटते हैं। आदमी के मुख में कलंक लग जाए तो वह शर्माता है, वह कलंक को छिपाता है, कम-से-कम उस पर गर्व नहीं करता, पर हम अपनी दासता के कलंक को दिखाते फिरते हैं, उसकी नुमाइश करते हैं, उस पर अभिमान करते हैं, मानो वह नेकनामी का तमगा हो, या हमारी कीर्ति की ध्वजा। वाह री भारतीय दासता, तेरी बलिहारी है।'

इस कलंक को दूर करने के लिए उन्होंने गांधी के समान सारे देश को एक करने वाली राष्ट्रभाषा हिंदुस्तानी की पैरवी की है। हिंदू और उर्दू के अलग-अलग कैंपों की आलोचना करते हुए वे हिंदुस्तानी का समर्थन करते हैं- हिंदुस्तानी इस चहारदीवारी को तोड़कर दोनों में मेल-जोल पैदा कर देना चाहती है ... जो लोग भारतीय राष्ट्रीयता का स्वप्न देखते हैं, जो इस सांस्कृतिक एकता को दृढ़ करना चाहते हैं, उनसे हमारी प्रार्थना है कि वे लोग हिंदुस्तानी का निमंत्रण ग्रहण करें, जो कोई नई भाषा नहीं है, बल्कि उर्दू और हिंदी का राष्ट्रीय स्वरूप है।'

भाषा के समान ही साहित्य के क्षेत्र में भी उनका दृष्टिकोण राष्ट्रीय रहा है। वे प्राचीन भारतीय साहित्य की उपलब्धियों के प्रशंसक और आधुनिक भारतीय साहित्य के उत्थान में प्रयत्नशील थे। वाल्मीकि, व्यास, कालिदास, तुलसीदास, केशव और बिहारी जैसे प्राचीन और मध्यकालीन कवियों का प्रशंसात्मक परिचय वे अपने उर्दू-पाठकों को प्रायः देते रहते थे। संस्कृत साहित्य के गौरव पर तो वे एक तरह से फिदा थे और इसीलिए उर्दू वालों को उसे पढ़ने की ताकीद करते थे। उदाहरण के लिए 'कालिदास की कविता' आदि लेख देखे जा सकते हैं। एक अन्य स्थान पर वे संस्कृत के काव्यशास्त्र की अंग्रेज़ी से तुलना करते हुए लिखते हैं- 'संस्कृत में हँसी के प्रकारों, उनकी व्याख्या और उनके उद्दीपकों आदि को बड़े विशद और विस्तृत ढंग से बयान किया गया है। अंग्रेजी में ऐसी विशद सैद्धांतिक चर्चा इस विषय पर नहीं है। आधुनिक भारतीय साहित्य को उन्होंने अपनी लेखनी से समृद्ध करने के साथ-साथ अंतांतीय साहित्यिक आदान-प्रदान के लिए अपने खून-पसीने से सींचा हुआ मासिक पत्र 'हंस' भी समर्पित कर दिया। विविध प्रसंग, भाग 3 का 'नीरक्षीर' खंड सामयिक साहित्य के प्रति उनकी जागरूक आलोचना-दृष्टि का परिचायक है।

प्रेमचंद के भारतीय कला और विशेषतः चित्रकला-संबंधी विचार विविध प्रसंग, भाग 1 के दो लेखों में व्यक्त हुए हैं। उनका विचार था कि 'हिंदुस्तान में अन्य कलाओं की तरह चित्रकला भी अपने शिखर पर पहुँची हुई थी। यद्यपि आजकल उस ज़माने की तस्वीरें नहीं मिलतीं, मगर जिन हाथों ने एलोरा और अजंता के मंदिरों में जादूगरी की, उनकी उन्नत चित्रकला में कोई संदेह नहीं हो सकता।' उनका विश्वास है कि शादी-ब्याह या त्योहार पर औरतें घरों की दीवारों पर जो चित्र बनाती हैं, उनसे यह बात यक़ीनी तौर

पर साबित हो जाती है कि पुराने जमाने में इस कला की सभी विधाएँ हमारी स्त्रियों के शिक्षा-क्रम में सम्मिलित थीं। स्वर्गीय चित्रकार राजा रवि वर्मा के प्रसंग में उन्होंने यह भी स्वीकार किया है विभिन्न भाषाओं के देश में राष्ट्रीय एकता के लिए तस्वीरों की भाषा ही सर्वमान्य माध्यम हो सकती है। दूसरे निबंध (भारतीय चित्रकला) में बौद्धकाल की मजहबी और मुगलकाल की गैर-मजहबी कला का ऐतिहासिक परिचय दिया गया है। उनकी दृष्टि में कला का आदर्श 'प्रकृति की नकल नहीं', 'सुंदर को सुंदरतम' बनाना, प्रकृति को सँवारना और सुधारना है।

भारतीय सांस्कृतिक विषयों पर उन्होंने जो कुछ लिखा है, उसमें संभवतः सर्वाधिक महत्त्व शिक्षा-संबंधी लेखों और टिप्पणियों का है। उन्होंने प्रचलित शिक्षा-पद्धति की आलोचना करते हुए राष्ट्र और समाज के लिए उपयोगी शिक्षा के आदर्श प्रस्तुत किए हैं। अंग्रेज़ी शिक्षापद्धति की निम्नलिखित आलोचनाएँ उन्होंने मुख्य रूप से की हैं

1. यूनिवर्सिटी तो भारत में कोई है नहीं, हाँ, ग्रेजुएट बनाने के कई कारखाने हैं। इस लिहाज से संयुक्त प्रांत, भारत का लंकाशायर या बंबई है। यहाँ ऐसे-ऐसे पाँच बड़े-बड़े कारखाने हैं, जहाँ युवकों को दुर्व्यसन और फ़िज़ूलखर्ची और विलासिता और झूठे अभिमान की शिक्षा दी जाती है।

2. हमारी शिक्षा हमारी सामाजिक चेतना को नहीं जगाती, उसका उद्देश्य अपने फ़ायदे के लिए समाज से काम निकालना है।

3. हमारे विचार में इसमें सबसे बड़ा दोष जो है, वह इसकी स्वास्थ्य की ओर से उदासीनता है। ... हमारे अधिकतर शिक्षित लोग चलते-फिरते रोग हैं।

4. एक तो अंग्रेज़ी भाषा और उस पर परीक्षाओं का यह आतंक। इन दोनों चक्की के पाटों के बीच में छात्रों का सर्वनाश हुआ जा रहा है।

5. वाद-विवाद, ड्रामा, स्काउटिंग, तत्काल चिकित्सा आदि विषयों को स्कूल के कर्मचारी उतना महत्त्व नहीं देते, जितना दिया जाना चाहिए।

6. स्त्री-शिक्षा के संबंध में वे मेकेंजी की इस आलोचना से सहमत हैं- 'वर्तमान शिक्षा-प्रणाली उन्हें माता और गृहिणी बनने के योग्य नहीं बनाती।' इसीलिए उन्होंने प्रयाग महिला विद्यापीठ के विषय में खुशी से यह लिखा है कि 'यहाँ की विदुषियाँ तितलियाँ बनकर नहीं, गृह-देवियाँ बनकर निकलती हैं।'

7. हमारे यहाँ की शिक्षा अभी तक अव्यावहारिक है और उसके सांस्कृतिक पक्ष पर अधिक जोर दिया जाता है।

8. अनिवार्य शिक्षा का क्या ज़िक्र, हर चार गाँव में मुश्किल से एक गाँव में कोई मदरसा है।

9. हमारे यहाँ अभी तक प्राइमरी शिक्षा भी मुफ्त नहीं है।

10. यह तालीम भी मोतियों के मोल बिक रही है।

प्रेमचंद अंग्रेज़ी ढंग की संस्थाओं के मुकाबले में राष्ट्रीय संस्थाओं को आदर्श मानते थे। उन्होंने गुरुकुल कांगड़ी', प्रयाग महिला विद्यापीठ, आर्य कन्या व्यायाम मंदिर, बड़ौदा और उस्मानिया विश्वविद्यालय जैसी राष्ट्रीय संस्थाओं की मुक्त कंठ से प्रशंसा की है। गुरुकुल कांगड़ी के प्रसंग में वे लिखते हैं- 'यों तो स्वामी जी प्राचीन आर्य आदर्शों के पूर्ण रूप से प्रवर्तक थे, पर मेरे विचार में राष्ट्रीय शिक्षा के पुनरुत्थान में उन्होंने जो काम किया है, उसकी कोई नज़ीर नहीं मिलती। ऐसे युग में जब अन्य बाजारी चीजों की तरह विद्या बिकती है, यह स्वामी जी का ही दिमाग था, जिसने प्राचीन गुरुकुल-प्रथा में भारत के उद्धार का तत्त्व समझा।' इसी प्रकार उस्मानिया विश्वविद्यालय के विषय में वे लिखते हैं कि वह काम की चीज़ है, 'अगर उर्दू और हिंदी के बीच की खाई को और चौड़ी न बना दे। फिर भी मैं उसे और विश्वविद्यालयों पर तरजीह देता हूँ। कम-से-कम अंग्रेज़ी की गुलामी से तो उसने अपने को मुक्त कर लिया।'

अंग्रेजी ढंग की शिक्षा-संस्थाओं को राष्ट्रीय निर्माण के योग्य बनाने के लिए उन्होंने निम्नलिखित सुझाव दिए हैं–

1. बालक के लालन-पालन और शिक्षा-दीक्षा को एक सिरे से बदलना पड़ेगा, जिससे समाज में संघर्ष की जगह सहयोग की प्रवृत्ति जागे...। इस लिहाज से हमारे गुरुकुल आजकल के ईटन या हैरी या राजकुमार कॉलेजों से कहीं उत्तम थे, जहाँ सभी छात्र समान थे। इससे उनमें सार्वजनिकता का भाव पैदा होता था।

2. राष्ट्र इस सिद्धांत को स्वीकार कर ले कि डिप्लोमा संपत्ति और अधिकार के खज़ाने की कुंजी नहीं है, तभी शिक्षा का वास्तविक महत्त्व प्रकट होगा।

3. ट्रेनिंग कॉलेजों में जहाँ और बहुत से विषय पढ़ाए जाते हैं, वहाँ शरीर-विज्ञान भी एक प्रधान विषय होना चाहिए।

4. किशोरावस्था में जब यौवन का विकास होने लगता है, हमारे कितने ही बालक अज्ञान के कारण अपने इंद्रियों का दुरुपयोग करके अपनी सेहत और देह दोनों ही सर्वनाश कर बैठते हैं। ... अगर हमारे हाई स्कूलों और यूनिवर्सिटियों में योग्य विशेषज्ञों से इस विषय पर भाषण कराए जाएँ तो निश्चय हमारे विद्यालयों में जो गुप्त रूप से दुराचरण होता है, वह बहुत कुछ कम हो जाए। ... इसके साथ ही विद्यालयों का भी यह कर्त्तव्य होना चाहिए कि वे अपने बालकों के मस्तिष्क को पाटना ही कर्त्तव्य [illegible] इति[illegible] न समझें, उनकी आत्मा उनके स्वास्थ्य और उनके जीवन का कल्[illegible] भी [illegible]ना कर्त्तव्य समझें।

5. शिक्षोपयोगी चित्रों से अलबत्ता युवकों का बहुत [illegible] उप[illegible]र होने की आशा की जाती है।

6. तेरह बरस की उम्र तक ज़रूरी है कि बच्चे [illegible] साधारण शिक्षा दी जाए। उसके बाद जिस तरफ़ उसका रु[illegible] [illegible]खे, [illegible]सी ढर्रे पर लगा दें।

7. जरूरी है कि बच्चों के सामने अच्छी-अच्छी त[illegible] पेश करके उनमें सुरुचि की बुनियाद डाली जाए।

8. मदरसों की तादाद और तनख्वाह बढ़ाएँ।

9. हमारी आरंभिक शिक्षा का पाठ्यक्रम ऐसा स्थिर किया जाए कि चार वर्ष तक पढ़ने के बाद लड़का अपनी ज़रूरतों के लिए काफ़ी तौर पर शिक्षा पा जाए।

निष्कर्षतः वे शिक्षा-पद्धति में आमूल परिवर्तन के पक्षपाती थे। उनकी दृष्टि में शिक्षा का उपयोग स्वार्थपूर्ति के लिए नहीं, सामाजिक हित के लिए होना चाहिए। वह चरित्र-निर्माण और सामाजिकता के विकास में सहायक होनी चाहिए। इस उद्देश्य की पूर्ति के लिए शिक्षकों को मात्र सूचनाएँ देने के अतिरिक्त कुछ और कर्तव्यों का निर्वाह भी करना होगा। शिक्षकों की आर्थिक कठिनाई को दूर करना भी वे आवश्यक समझते थे, परंतु विश्वविद्यालयों के प्रोफेसरों की ऊँची तनख्वाहों को देश के लिए बोझ समझते थे।

प्रेमचंद के रहन-सहन-संबंधी विचार गांधी से प्रभावित थे और रूस की नई सभ्यता का आलोक देख चुकने के बाद भी यह प्रभाव कम नहीं हुआ था। औद्योगिक और व्यापारिक संस्कृति के मूल्य उन्हें स्वीकार्य नहीं थे और ग्रामीण एवं वन्य जीवन के नैसर्गिक वातावरण का मोह उन्हें आजीवन बना रहा। आरंभ में तो वे अपने-आपको सहयोगी मानकर उस गुजरे हुए ज़माने को लौटाने का दावेदार घोषित करते हैं, जब वेद की सृष्टि हुई थी, जब दर्शनशास्त्र लिखे गए थे, जब बुद्ध और हजरत ईसा जैसे महात्मा पैदा हो सकते थे, जब तैरत संग्रहीत हुई थी। बाद में 'व्यापार और कल कारखानों की उन्नति, तरह-तरह के यंत्रों का आविष्कार' करनेवाले नए नक़ल पर टिप्पणी करते हुए वे भारतीयों की इस वानरी प्रवृत्ति पर कठोर आघात करते हैं।

ईसाई संस्कृति के प्रसंग में यह संकेत दिया जा चुका है कि पारिवारिक पद्धति की दृष्टि से प्रेमचंद यूरोपीय छोटे परिवार के मुकाबले भारतीय सम्मिलित परिवार की प्रथा को अधिक मानवीय और ग्राह्य मानते थे। स्त्री-पुरुष के संबंधों की दृष्टि से तो वे यूरोपीय तलाक-प्रथा से पर्याप्त सशंक थे। भारतीय परंपरा के अनुकूल वैवाहिक संबंध की पवित्रता में उनकी पूरी आस्था थी। 'कारवाँ' की आलोचना करते हुए वे लिखते हैं- 'वैवाहिक जीवन में पाँव रखते ही स्त्री-पुरुष दोनों वफ़ादारी का व्रत लेते हैं, और इस व्रत का जितना दृढ़ता से पालन होता है, उतना ही जीवन सुखी होता है।' यह भी उल्लेख किया जा चुका है कि संतति-निरोध के कृत्रिम उपायों की यूरोपीय प्रथा को उन्होंने केवल इस आधार पर अस्वीकार किया है कि उससे स्त्री-

पुरुषों में विलासिता की प्रवृत्ति बढ़ने का भय रहता है। उन्हें दम-संयम वाली भारतीय जीवन-पद्धति अधिक श्रेयस्कर लगती है।

खेलकूद और मनोरंजन की भारतीय पद्धतियों के प्रति उनके पक्षपात का उल्लेख भी पहले हो चुका है। यूरोपीय नंगे नाचों के प्रति घृणा प्रकट करते हुए वे एक टिप्पणी में लिखते हैं- 'यूरोप में नग्न विलासिता ज़ोरों से बढ़ रही है और वही लोग जो स्त्रियों के आदर का गुल मचाते हैं, बालिकाओं को नग्न वेश में देखकर अपनी आँखों को तृप्त करते हैं। इतना ही नहीं भारत में शिक्षितों द्वारा यूरोपीय वसन-विन्यास की नक़ल [illegible] भी वे अनुचित मानते हैं और किसी [illegible] पहनावे की कमी के बावजूद ऐसी [illegible] व्यवहार न करने की सलाह देते [illegible] विदेशीपन की झलक आती हो। [illegible] नावे के प्रति वे इतने संवेदनशील [illegible] साड़ी ऐसी लोचदार चीज़ को [illegible] पहनने में कुरुचि की गंध आ [illegible]

खान-पान [illegible] भी वे बहुत दूर तक परंपरागत [illegible] तीय [illegible] चियों के कायल हैं और उन्हें यह देखकर खुशी होती है कि 'विज्ञान भी हमें उसी तरफ़ ले जा रहा है, जिधर हम पहले से चल रहे हैं।' यूरोपीय पद्धति के डिब्बा-बंद भोज्यों की अपेक्षा वे मूली-गाजर, पालक-बथुआ, गुड़, चावल, गेहूँ आदि को भारतीय पद्धति से खाना अधिक उपयोगी समझते हैं। टूथपेस्ट और ब्रश की अपेक्षा उन्हें दातून निःसंदेह अधिक लाभदायक दिखाई देती है। 'इसी उपयोगितावादी दृष्टि से वे मादक-वस्तुओं का निषेध आवश्यक समझते हैं- 'मादक वस्तुएँ सभी हानिकर हैं और हमारा कर्तव्य है कि उन्हें स्वयं छोड़ें और यथाशक्ति दूसरों से छुड़वाएँ।'

निष्कर्षतः हम कह सकते हैं कि प्रेमचंद के आचार और विचार में भारतीयता का रंग बहुत गहरा है। उनके परंपरागत संस्कारों को दयानंद और गांधी जैसे राष्ट्रीय नेताओं के दृष्टिकोण से बल मिला है।

पुनर्जागरणकालीन भावनाओं के अनुरूप वे बौद्धिक परीक्षा में खरी उतरने वाली भारतीय परंपराओं को सोत्साह स्वीकार करते हैं और विदेशी परंपराओं की अंधी नक़ल के कटु आलोचक रहे हैं। अंतिम दिनों में कुछ सांप्रदायिक संस्थाओं के सांस्कृतिक नारों से सशंक होकर वे संस्कृति की आर्थिक व्याख्या करने को विवश हो गए थे, परंतु सामान्यतः आदर्श और श्रेयस्कर भारतीय सांस्कृतिक परंपराओं में उनके प्रिय नेता गांधी के समान उनकी आस्था भी निष्काम रही है।

● ए-18, अशोक विहार, फेज-1, दिल्ली 110052
सम्पर्क - 9811052469

धरोहर

कबीर
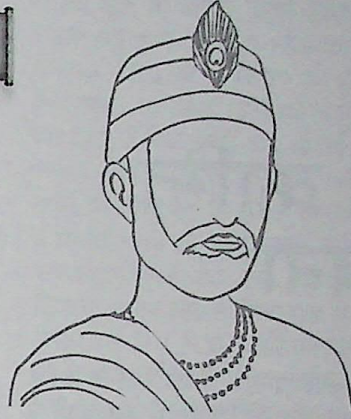
ठाकुरप्रसाद सिंह

काशी नगरी प्राचीन
किन्तु चिर नूतन
इसमें अहरह गुंजित
गंगा का गुंजन
गंगा के धनु पर तीर
सदृश स्थिर खरतर
है सधी साधना साध
भरी अविनश्वर
जो जितनी गहन
साधना से मन जोड़ेगा
उतनी ही शक्ति
समेट वह तीर छोड़ेगा
सामने लक्ष्य ध्रुवतारे सा हँसता है।
साधक का तीर सहास
वहीं धँसता है
आँखें अलसायी हैं
प्यारे घर आओ
यदि स्वयं न आ पाओ
तो मुझे बुलाओ
अपने भीतर ही गंगा
है, जल शीतल
जब चाहें झुककर
पी लें हो मन निर्मल
प्यासा मन फिर भी
भटक-भटक रह जाता
सब ओर घूमता
अपनी ओर न आता
काशी के सूने लहर
ताल के तट पर
है एक दीप जलता
अविराम निरन्तर
छोटी सी कुटिया में
आकाश उतर आता है
जब वह किशोर
दर्दीले पद गाता है

माँ की चिन्ता
पिता उदासा
बालक पर
प्यासे का प्यासा
आँखें सोयीं
ढीली काया
तिरती एक
मनोरम छाया
क्या कोई
घर में है आया?
कोलाहल में
इस हलचल में
कौन बुलाता?
गहरे जल में ताना बुनना
सोना - खाना
रोज रात
बन्दगी बजाना
दूर कहीं
पूजा को जाना
अब न चलेगा
जीवन मुझको
अब न छलेगा
सब दे दूँगा
पर यह तम
कैसे झेलूँगा।
एक दीपक शून्य का
इसको जलाओ
चेतना सोयी इसे फिर से
जगाओ
दूर क्यों हो प्रिय हमारे
पास आओ
तिरो आँखों में गहन मन से
समाओ

लहर ताल से लगता
चलता शाही पथ था
जिस पर चलकर थे
काशी में पहुँचे कबीर
पथ के दोनों ओर
बस्तियाँ मिलीजुली थीं।
हिन्दू मुस्लिम साथ-साथ
रहते थे कबके

अफगानों के शासन का
अपरान्ह समय था
छायाएँ लम्बी होतीं
जा रहीं सभय थीं
चारों ओर घिरा था
वलय घृणा का कुहरा
परिवर्तन की बेचैनी से
मन था मथा जा रहा
उत्तर भारत के नगरों-
गाँवों में अहरह
एक नया स्वर बजने था
लग गया निरन्तर
ध्वस्त पुराने विश्वासों
के मलवे फैले
उन्हें हटाने को आगे
अब कौन बढ़ेगा?
प्रश्न पूछते थे सब दर्शन
सब अनुशासन
उत्तर कहीं नहीं था–
प्रश्न भरी थी काशी
थी बस्तियाँ उदास-
पुराना आसपास था

● कबीर खण्डकाव्य से साभार

जब काशी क्रान्ति का केन्द्र बना

उषा निगम

1905 में बंगाल-विभाजन के बाद बंगाल प्रांत में अंग्रेजी राज के विरुद्ध अभूतपूर्व विरोध दिखाई दिया था। शीघ्र ही विरोध की इस आँधी ने उत्तरी भारत के पंजाब प्रांत को भी अपने आगोश में ले लिया। हवाएँ कुछ ऐसी बहीं जिसके परिणामस्वरूप संयुक्त प्रांत (उ.प्र.) में भी क्रान्ति की चिन्गारियाँ दिखाई देने लगीं। उस प्रक्रिया में कब और कैसे काशी क्रान्ति का केन्द्र बन गया पता ही नहीं चला। विशुद्ध धार्मिक नगरी ने देश की आज़ादी की सशस्त्र धारा को अपनी धरती पर विकसित होने और फलने-फूलने का पूरा अवसर दिया। यह कथन अतिशयोक्तिपूर्ण नहीं होगा कि क्रान्ति-दल का एक छोटा सा पौधा शचीन्द्रनाथ सान्याल ने काशी की धरती पर रोपित किया था जिसने भविष्य में एक विशाल वृक्ष का आकार ले लिया।

अपनी आत्मकथा 'बंदी जीवन' में शचीन्द्रनाथ सान्याल ने लिखा है कि उनका जन्म काशी में हुआ था, बाल्यावस्था कोलकाता में बितायी थी। पिता की मृत्यु के बाद 1909 में वे वापिस काशी आ गये। कोलकाता के अपने प्रवास काल में वे छोटी सी आयु में ही अनुशीलन समिति के सदस्य बन गए थे। अनुशीलन समिति बंगाल का प्रसिद्ध क्रान्तिकारी संगठन था। काशी आने पर सान्याल ने यहाँ भी अनुशीलन समिति की शाखा खोली। उधर अलीपुर षड़यंत्र के कारण अंग्रेजी सरकार ने अनुशीलन समिति को गैर-कानूनी घोषित कर दिया था। अतः सतर्कता की दृष्टि से सान्याल ने काशी में अनुशीलन समिति का नाम 'यंगमेन्स एसोसिएशन' रखा, जहाँ युवकों को लाठी चलाना, कुश्ती और जिमनास्टिक सिखाया जाता था।

बंगाल में सरकार के दमनचक्र के कारण क्रान्तिकारी रास बिहारी बोस (रासू दा) को युक्त प्रांत आना पड़ा था। यहाँ उन्होंने देहरादून को केन्द्र बना कर दिल्ली में वाइसराय लॉर्ड हार्डिंग के जुलूस में उनके ऊपर बम फेंक कर साहसपूर्ण घटना को अंजाम दिलाया। यही वह समय था जब युवा सान्याल रासू दा के संपर्क में आए थे। दिल्ली षड़यंत्र केस चला। गिरफ्तारी से बचने के लिए रासू दा एक वर्ष तक सान्याल के साथ काशी में रहते रहे थे। तभी से काशी में क्रान्तिकारी केन्द्र की स्थिति मजबूत होती चली गई। 'बंदी जीवन' में सान्याल लिखते हैं– "रासू दा जितने दिन काशी में रहे उतने दिन मैंने भारत वर्ष के भिन्न-भिन्न स्थानों के लोगों को उनसे मिलते देखा था। राजपूताना, पंजाब और दिल्ली से लेकर सुदूर पूर्व बंगाल तक के लोग उनके पास आते थे। वह जब तक काशी में रहे तब तक युक्त प्रदेश तथा पंजाब के भिन्न-भिन्न स्थानों में विप्लव केन्द्रों की स्थापना में लगे रहे। उसी का यह परिणाम हुआ कि एक ही वर्ष में हमारा दल पर्याप्त शक्तिशाली हो गया और उसी का यह फल था कि यूरोपीय महायुद्ध (प्रथम विश्वयुद्ध) जब आरंभ हुआ तब हम खूब जोर से काम कर सके थे।"

यह भी विचित्र संयोग था कि इधर काशी में दल के विस्तार का कार्य चल रह था उधर अन्तर्राष्ट्रीय जगत में भारतीय क्रान्तिकारी लंदन पेरिस अमरीका और जर्मनी में रहकर भारत की आज़ादी के प्रयास कर रहे थे। इन सबके सहयोग से 1913 में अमरीका में लाला हरदयाल के मार्ग-दर्शन में गदर पार्टी का गठन हुआ। हजारों की संख्या में रोजगार की तलाश में अमरीका पहुँचने वाले असंतुष्ट पंजाबी-सिख मजदूरों ने भी इनका खूब साथ दिया। देश को आज़ाद करने के लिए हज़ारों की संख्या में गदरी अमरीका से भारत की ओर चल पड़े। भारत के क्रान्तिकारियों की तथा भारतीय सेना की मदद से अंग्रेजों को परास्त करने की योजना थी।

इस पूरे आयोजन का केन्द्र पंजाब था लेकिन इन दीवानों को तो बंगाल और उत्तरी भारत के सभी क्रान्तिदलों के सहयोग से आगे बढ़ना था। उनके नेता यहाँ के क्रान्तिकारियों से मिले। उन्हें बंगाल के क्रान्तिकारियों से पूरा आश्वासन मिला था। गदर पार्टी के 18 वर्षीय युवा करतार सिंह सरामा ने स्वयं काशी आकर रासूदा से गदर की सफलता के लिए उनके मार्गदर्शन की इच्छा व्यक्त की थी। तब रासूदा ने कहा था– "जाओ पंजाब को तैयार करो, इधर हम तैयार हो रहे हैं" (मन्मथ नाथ गुप्त– 'भारतीय क्रान्तिकारी आन्दोलन का इतिहास', पृ0 83)। परिणामस्वरूप काशी की सक्रियता बढ़ गई। दिल्ली षड़यंत्र केस के कारण रासूदा पर गहरा संदेह था, अतः उन्होंने पंजाब की स्थिति की जानकारी लेने के लिए सान्याल को पंजाब भेजा। पंजाब से वापस आकर उन्होंने रासू दा को वहाँ की स्थिति से अवगत कराया फिर वे बम गोलों और शस्त्रों की आपूर्ति के लिए बंगाल चले गए। स्पष्ट है कि काशी दो सुदूर प्रांतों के बीच अब संपर्क सूत्र का कार्य करने लगा था। अब रासू दा पंजाब गए।

पंजाब पहुँच कर रासू दा करतार सिंह सरामा, पिंगले आदि क्रान्तिकारियों से मिले उनके सहयोग से पंजाब रेजिमेन्टों से संपर्क किया और फिर पंजाब से लेकर युक्त प्रांत तक की सभी सैनिक छावनियों में अंग्रेजी राज के विरुद्ध विद्रोह करने की योजना बनाई थी। इस विद्रोह के लिए 21 फरवरी का दिन सुनिश्चित किया गया था। लेकिन एक मुखबिर कृपाल सिंह के कारण यह सारी योजना धराशायी हो गई। उसी के साथ गदर का आयोजन पूर्णरूप से असफल हो गया। इस आन्दोलन में भाग लेने वाले सैकड़ों देशप्रेमियों को लंबी सजाएँ, कालापानी और फाँसी की सजाएँ दी गईं। रासू दा को देश छोड़ना पड़ा, वे जापान चले गए।

युक्त प्रांत के राजद्रोही क्रान्तिकारियों के लिए पृथक 'बनारस षड़यंत्र केस' चलाया गया, जिसमें शचीन्द्रनाथ सान्याल, गिरिजा बाबू, सुरेशचन्द्र भट्टाचार्य, मुन्नीलाल अवस्थी आदि को सजाएँ हुईं। सान्याल को कालापानी का दंड मिला। विद्रोह की असफलता ने पंजाब के साथ काशी केन्द्र को भी छिन्न-भिन्न कर दिया। जैसे शरीर मर जाए, आत्मा का अस्तित्व शेष रहता है वैसे ही कुछ समय के लिए ऐसा प्रतीत हुआ कि सरकार की दमन-नीति की विजय हुई। लेकिन ऐसा नहीं था। सशस्त्र क्रान्ति की चिंगारियाँ भीतर ही भीतर सुलग रही थीं। अवसर मिलते ही वे पुनः प्रज्वलित हो उठीं।

1920 में सरकार ने प्रथम विश्वयुद्ध में विजय प्राप्त होने के उपलक्ष्य में राजनीतिक बंदियों की आम माफी की घोषणा की। परिणामस्वरूप अनेक क्रान्तिकारी भी दंडमुक्त हुए। सान्याल काला पानी से छूटकर भारत वापस आए। उसी के बाद गांधी जी का असहयोग आन्दोलन आरंभ हो गया। गांधी जी के अनुरोध के कारण क्रान्तिकारियों ने सशस्त्र आन्दोलन को स्थगित रखा। 1922 में असहयोग आन्दोलन के स्थगन के उपरान्त सभी क्रान्तिकारी और उनके संगठन नई ऊर्जा के साथ देश को आज़ाद करने चल निकले। काशी नगर पुनः सक्रिय हुआ। अब वहाँ शचीन्द्रनाथ बख्शी, मन्मथनाथ गुप्त, चन्द्रशेखर आज़ाद और राजेन्द्रनाथ लाहिड़ी व कुन्दनलाल गुप्त जैसे दिलजले थे निसंदेह जिन्हें सान्याल का मार्गदर्शन प्राप्त था। अंततः काशी को योगेशचन्द्र चटर्जी का साथ मिला, जो ढाका की अनुशीलन समिति की ओर से काशी भेजे गए थे। अब सान्याल ने काशी

की अनुशीलन समिति जो 'कल्याण आश्रम' के नाम से सक्रिय थी, तथा काशी एवं युक्त प्रांत के सभी केन्द्रों को मिलाकर 'हिन्दुस्तान प्रजातंत्र संघ' का गठन किया। इस संघ के काशी केन्द्र का दायित्व योगेश दा को दिया गया, फिर यही पद राजेन्द्रनाथ लाहिड़ी को हस्तान्तरित कर दिया गया। इन्हीं राजेन्द्रनाथ लाहिड़ी ने 1925 में काकोरी ट्रेन डकैती में भाग लिया था और काकोरी केस में उन्हें फांसी की सजा हुई थी।

संस्कृत के छात्र चन्द्रशेखर का राजनैतिक जीवन असहयोग आन्दोलन से शुरू हुआ था। पिकेटिंग में भाग लेने के कारण उन्हें पकड़ा गया, 15 बेंतों की सजा हुई। गिरफ्तार होने के बाद उनसे इनका नाम पूछा गया। उन्होंने उत्तर दिया - आज़ाद। तभी से वे आज़ाद कहलाए। काकोरी डकैती के बाद अज़ाद फरार होकर काशी आये थे। वहीं से इलाहाबाद होते हुए झांसी चले गए थे। अंग्रेजी सरकार मृत्युपर्यंत उन्हें पकड़ नहीं सकी। वे सदैव आज़ाद रहे। आज़ाद ने भगतसिंह के साथ मिलकर 'हिन्दुस्तान समाजवादी प्रजातंत्र संघ' का गठन और संचालन किया। अंत में पुलिस मुठभेड़ में शहीद होकर क्रान्तिकारी आन्दोलन के इतिहास में अमर हो गए।

केवल 13 [illegible] आयु में ही स्वाधीनता संग्राम के सेनानी बन गए थे मन्मथनाथ [illegible]। काकोरी कांड में भाग लेने के कारण काकोरी के शहीदों की टोली [illegible] नहीं हो सके थे। प्रणवेश चटर्जी और मन्मथनाथ के प्रयासों से [illegible] आ[illegible] काशी के क्रान्ति-दल में शामिल हुए थे। शचीन्द्रनाथ बख्शी ने [illegible] में काशी केन्द्र की नींव को मजबूत किया था। बख्शी 'कल्याण आश्रम' के संपर्क में आए, उसके सदस्य बने, उन्होंने व्यायामशालाओं के खुलने में सहयोग दिया, फिर झांसी आकर झांसी शाखा को संगठित किया। काकोरी कांड में भाग लेने के कारण बख्शी को आजीवन कारावास की सजा मिली थी।

काकोरी कांड के बाद बिखरे हुए संगठन को पुनः एक सूत्र में जोड़ना था। शचीन्द्रनाथ सान्याल की सक्रियता के समय से ही पंजाब पुनः क्रान्ति की राह की ओर अग्रसर होने लगा था। जयचंद्र विद्यालंकार जैसा अध्यापक, भगतसिंह, भगवतीचरण वोहरा जैसे विचारक, सुखदेव जैसे संगठनकर्ता के रहते पंजाब को तो इस राह पर आगे बढ़ना ही था। उधर आज़ाद जैसे साथियों को भी साथ-साथ चलना था। अब संगठन को एक नया नाम दिया गया- "हिन्दुस्तान समाजवादी प्रजातंत्र संघ"। इसके अन्तर्गत राजस्थान, दिल्ली, बिहार, युक्त प्रांत, उड़ीसा, मध्य प्रदेश सभी राज्य एकता के सूत्र में बँध गए।

अब काशी के स्थान पर पंजाब, दिल्ली, सहारनपुर, आगरा और ग्वालियर का महत्व बढ़ गया। स्थानाभाव के कारण आगे होने वाली घटनाओं को विस्तार से प्रस्तुत नहीं किया जा सकता। इतना जानना ही पर्याप्त होगा कि अंग्रेजी राज के विरुद्ध तमाम ऐक्शन होते रहे। 17 दिसम्बर 1928 को सांडर्स बध हुआ, 8 अप्रैल 1929 को असेम्बली में बम विस्फोट हुआ। 23 दिसम्बर 1929 को वायसराय की ट्रेन पर बम फेंका गया, मेरठ षड़यंत्र केस चला, 18 अप्रैल 1930 को चटगाँव शस्त्रागार कांड हुआ, फिर झांसी बम कांड, लैमिंगटन रोड कांड (बम्बई में), मि0 टेगर्ट पर हमला (25 अगस्त 1930) आदि प्रमुख घटनाएँ हुईं। 1940 में ऊधम सिंह ने लंदन में जनरल डायर की हत्या कर दी। बंगाल तो कभी शांत नहीं रहा।

8 अगस्त 1942 को 'भारत छोड़ो' आंदोलन का निर्णय लेकर अनजाने में ही महात्मा गांधी ने एक ऐसे अहिंसात्मक आन्दोलन का श्रीगणेश किया जिसका स्वरूप शीघ्र ही हिंसात्मक हो गया। उन्होंने 'करो या मरो' का नारा दिया। यह नारा ही शुद्ध अहिंसात्मक नहीं था। आन्दोलन की घोषणा होते ही 9 अगस्त को गांधी जी तथा शीघ्र ही सभी महत्वपूर्ण नेता गिरफ्तार कर लिए गए। इस नेतृत्व विहीन आन्दोलन को द्वितीय पंक्ति के नेताओं से मार्गदर्शन तो मिला लेकिन आन्दोलन में उतर आए सैकड़ों नौजवानों ने इसे क्रान्ति में बदल दिया। अतः यह आन्दोलन 'अगस्त क्रान्ति' के नाम से जाना गया। पूरे देश में "रेल, तार, यातायात तथा समाचार के साधनों में तोड़-फोड़, हड़तालों की तैयारी, सरकारी फौजों को बरगलाना तथा युद्ध की तैयारियों में विशेषकर भर्ती में बाधा देना" के कार्यक्रम चलते रहे। परिणामस्वरूप सारा देश दमन से जूझ रहा था।

काशी में अगस्त क्रान्ति का आरंभ हिन्दू विश्वविद्यालय के छात्रों से हुआ था जिन पर हंटर और लाठियाँ चलाई गयी थीं। अगले दिन जनता ने फ़ौजदारी और दीवानी अदालतों पर तिरंगा फहराया। सरकार ने इसका विरोध नहीं किया। 13 तारीख को दशाश्वमेध से जुलूस निकला जिस पर लाठी चार्ज किया गया। विरोध में जनता ने पत्थर चलाए। तब उन पर गोलीँ चलाई गईं। अनेक लोग शहीद हुए। निडर जनता प्रदर्शन में लगी रही। तार काटना, स्टेशनों, गोदामों, पुलिस चौकियों, डाकखानों आदि को लूटना जारी रहा। एक दरोगा दो सिपाही मारे गए, तब यहाँ के विद्यार्थी सारे देश में फैल गए और आन्दोलन को आगे बढ़ाते रहे। हिन्दू विश्वविद्यालय में श्री कृपलानी, राधेश्याम जी, असरानी जैसे देशभक्त अध्यापक थे। यहाँ की छात्राओं ने भी आन्दोलन में खूब भाग लिया था।

कहने का तात्पर्य यह कि धार्मिक नगरी काशी आजादी की लड़ाई में पीछे नहीं रही। पूरी आधी सदी तक यहाँ के नौजवान अपनी जान की परवा किए बग़ैर परतंत्र भारत की स्वाधीनता के लिए संघर्ष करते रहे। काशी को अपने शहीदों-वतन पर मर मिटने वालों पर गर्व है।

74, कैन्ट, कानपुर-208004
सम्पर्क- 9792733777

काशी-मन

अनीता पंडा

आतुर है काशी-मन,
विश्वनाथ की गलियों में,
भ्रमित होता, राह ढूंढता,
लक्ष्य की ओर बढ़ता,
झलक पाने को जिज्ञासु मन।

दशाश्वमेध घाट की सीढ़ियाँ,
प्रातः अठखेलित स्वर्ण-रश्मियाँ,
हर-हर गंगे से हो पावन,
नख-शिर से हो पूरित,
समाधिस्थ होता चंचल मन।

प्रथम पूज्य जहाँ गणेश,
काल भैरव बने दरवेश,
मृत्युंजय का पा वरदान,
शिवोहं बन जाता मन।

संकट हरते संकट मोचन,
शक्ति प्रदान कर भीरु जन को,
दुर्गाकुण्ड में शक्ति अपार,
तुलसी मानस मंदिर विस्तार,
नत-मस्तक हो जाता मन।

शिव-त्रिशूल पर है काशी,
बम भोले घर-घर वासी,
वेद-पुराण, भाषा-संस्कृति,
विश्वनाथ से सारंगनाथ बन
विचरता रहता वैरागी मन।

जन्म, जरा, मृत्यु का संगम,
शहनाई, तबला, गायन, कत्थक,
श्रृंगार, करुण, भक्ति, वीभत्स रस,
प्रज्वलित चिताएँ मृगतृषित,
मणिकर्णिका बन जाता मन।

एम.के.टेक, सैमसंग कैफे, बावरी मैंशन, धानखेती, शिलांग-793001, मेघालय
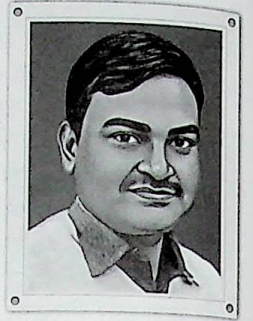
काशी में चन्द्रशेखर आजाद

प्रताप गोपेन्द्र

अमर शहीद चन्द्रशेखर आजाद ने किशोरावस्था का कुछ काल काशी के पावन धराधाम पर व्यतीत किया था। महात्मा गाँधी और उनके असहयोग आन्दोलन के समर्थक से एक प्रचण्ड क्रान्तिकारी के रूप में उनका रूपान्तरण भी काशी में ही हुआ था। चन्द्रशेखर आजाद के पुरखे कानपुर से आकर उन्नाव जनपद के बदरका में बस गए थे। उनके पिता श्री सीताराम तिवारी का जन्म ग्राम बदरका में ही हुआ था। आजाद के बड़े भाई का जन्म भी इसी स्थान पर हुआ। कालान्तर में वृत्ति की तलाश में उनके पिता जी मध्यप्रदेश के अलीराजपुर रियासत में स्थित भावरा गाँव में जाकर बस गए। बदरका के पं0 रामराखन अवस्थी उस समय अलीराजपुर रियासत में पुलिस के दरोगा थे। उन्होंने ही श्री सीताराम तिवारी को वन विभाग में नौकरी दिलवाई थी, लेकिन वे लम्बी अवधि तक वह नौकरी कर नहीं सके। 23 जुलाई, 1906 में चन्द्रशेखर आजाद का और इसके पूर्व उनसे बड़े तीन-चार अन्य भाई-बहनों का जन्म भावरा ग्राम में ही हुआ। लेकिन बाकी सभी अल्पायु में काल कवलित होते गए। श्री सीताराम तिवारी और उनकी धर्मपत्नी श्रीमती जगरानी देवी के संयोग से उत्पन्न सन्तानों में सिर्फ सबसे बड़े सुखदेव और सबसे छोटे चन्द्रशेखर ही जीवित बचे। भावरा गाँव में अधिकांश भील और मुस्लिम थे। चारों ओर ताल-तलैया और वन थे। पूरे गाँव में बामुश्किल दो घर ब्राह्मण थे। आजाद की आरम्भिक शिक्षा और लालन-पालन इसी ग्राम में हुआ। वे कक्षा 6 तक पढ़ सके। चन्द्रशेखर का मन पढ़ने से ज्यादा जंगल में भील मित्रों के साथ निशाना लगाकर आखेट करने और घूमने-फिरने में लगता था। घर की आर्थिक स्थिति दयनीय थी। परिवार चलाने के लिए पिता श्री सीताराम ने जानवर पालकर दूध का कारोबार भी किया और बाग की रखवाली का काम भी करते थे जिसके लिए उन्हें पाँच रूपये मासिक मिला करते थे।

अपने जीवन के अन्तिम साल में चन्द्रशेखर आजाद अपने मित्र व क्रान्तिकारी दल के सहयोगी श्री विश्वनाथ वैशम्पायन को अपने जीवन के प्रसंग सुनाया करते थे, जिन्हें श्री वैशम्पायन ने अपनी पुस्तक- "अमर शहीद चन्द्रशेखर आजाद" में विस्तार से उद्धृत किया [illegible] आजाद पिता के कहने पर उन्होंने थोड़े समय के लिए सरक[illegible] भी की, किन्तु वहाँ पर अफसरों को झुककर मुजरा करना [illegible] जो उन्हें कदापि सह्य नहीं था। अतः उन्होंने बाहर जाने का [illegible]। उनके गाँव में मोती का एक व्यापारी बाम्बे से आया कर[illegible] के साथ चन्द्रशेखर बाम्बे चले गए। वहाँ आजीविका के लिए [illegible] से माल उतारने और जहाज की पेंटिग करने का काम किया। [illegible] मजदूरों के साथ एक छोटे से कमरे में रहते थे, और पास के ढाबे [illegible] कर लिया करते थे। समय व्यतीत करने के लिए सिनेमा देखा करते थे। लेकिन जल्द ही चन्द्रशेखर बाम्बे के जीवन से भी उकता गए और वहाँ से निकलने पर विचार करने लगे। कहाँ जाएँ, यह प्रश्न सामने था ! फिर उन्हें अपने पिता की कही बातें याद आयीं और संस्कृत का अध्ययन करने के लिए वे काशी आ गए। वहाँ संस्कृत विद्यालय में दाखिला लेकर पढ़ने लगे। विद्यालय में रहने और खाने की व्यवस्था समृद्ध लोगों द्वारा दिए गए दान से निःशुल्क उपलब्ध थी।

उन दिनों भारत के राजनीतिक मण्डल पर गाँधी जी छाये हुए थे। असहयोग आन्दोलन अपने उत्कर्ष पर था। चन्द्रशेखर जैसे जागरूक युवा उस समय के राजनीतिक वातावरण से अप्रभावित नहीं रह सके और असहयोग आन्दोलन की सभाओं में सक्रिय भागीदारी करने लगे। गाँधी जी का आह्वान था कि ब्रिटिश सरकार के साथ हर तरह का असहयोग करते हुए विद्यालय, सरकारी नौकरी और वकालत त्याग दी जाये। काशी में असहयोग संस्कृत छात्र समिति में धरना करते हुए चन्द्रशेखर पकड़े गए। उन्हें मजिस्ट्रेट 'बरेघाट' के सम्मुख पेश किया गया। जब उसने नाम पूछा तो, 'आजाद', पिता का नाम 'स्वतंत्रता' तथा निवास 'जेल' बताया था। इससे चिढ़ कर तथा असहयोग आन्दोलन में भाग लेने के दण्डस्वरूप मजिस्ट्रेट ने चन्द्रशेखर को 23 सप्ताह का कारावास तथा 15 बेतों की कड़ी सजा दी। उस समय उनकी आयु 14-15 वर्ष से अधिक नहीं थी। विश्वनाथ वैशम्पायन के अनुसार बेतों की सजा बेहद पीड़ादायक होती थी। दण्डित व्यक्ति के सारे वस्त्र उतार कर एक खम्भे से बाँध दिया जाता था, फिर पृष्ठ भाग पर तेल चुपड़ कर एक झीना कपड़ा रख दिया जाता था, जिससे खाल ना उधड़े। बेंत की सजा पाये व्यक्ति महीनो तक पीठ के बल लेटा करते थे। चन्द्रशेखर को सेण्ट्रल जेल में बेंत लगाने का काम गेंडा सिंह ने किया था। उन्होंने बाद में अन्य क्रान्तिकारियों से अपना संस्मरण साझा किया था कि हर बेंत पर चन्द्रशेखर-'भारत माता की जय' और 'महात्मा गाँधी की जय' बोलते रहे। ब्रिटिश नियमों के अनुसार बेंत की सजा पाए व्यक्ति को तीन आना दिया जाता था। बकौल गेंडा सिंह चन्द्रशेखर ने घृणा से वे पैसे वहीं फेंक दिये थे और किसी तरह घसीटते हुए आवास पर गए थे।

जब चन्द्रशेखर आजाद काशी में रह रहे थे, उस समय उनका सम्पर्क बदरका से पाँच कोस दूर स्थित बीघापुर गाँव के रहने वाले पं0 शिव विनायक मिश्र से हुआ था। वे किसी रिश्तेदारी में भी आते थे, जिसके अनुसार चन्द्रशेखर उन्हें फूफा जी कहा करते थे तथा उनके घर बड़ी पियरी

श्री आया-जाया करते थे। श्री मिश्र ने दैनिक आज में 26 फरवरी, 1964 को एक लेख लिखा- ''क्रान्तिकारी वीर चन्द्रशेखर आजाद''। इस लेख में मिश्र जी लिखते है -''काशी में असहयोग छात्र समिति कायम हुई। क्वींस कालेज की सरकारी परीक्षा के बहिष्कार में सत्याग्रह करने के कारण डाक्टर अब्दुल करीम के साथ बहुत से संस्कृत के छात्र भी जेल गए थे। चन्द्रशेखर आजाद भी उस समिति के एक छात्र थे। वे स्वयं सेवक दल के साथ गिरफ्तार हुए थे। मैं और बाबू भगवानदास जी सेण्ट्रल जेल में सजा काट रहे थे। वहीं श्री आजाद को 15 बेंत लगाए गए। मुझे अपनी बैरिक में महात्मा गाँधी की जय की आवाज सुनाई दी। थोड़ी देर में गंगाराम नाम के एक कैदी ने आकर बताया कि एक लड़के को जिसका नाम चन्द्रशेखर है, बेंत लगाये गए। किसी तरह जब वह शहर पहुँचा तो सराय गोवर्धन में पं0 गौरीशंकर की पत्नी ने कई दिन तक उसकी सेवा की। उन दिनों आजाद ज्ञानवापी के पास पुतली वाले शिवाले में छात्र समिति में रहते थे।'' मिश्र जी आगे लिखते है-''बेंत लगने के बाद श्री आजाद अंग्रेजी राज्य के बहुत विरोधी हो गए थे। धीरे-धीरे उनका मन अहिंसा से उठता गया।''

बेंत की घटना से चन्द्रशेखर का नाम लोकप्रसिद्ध हो गया था। उन्हें ज्ञानवापी में एक सभा करके सम्मानित किया गया। फूलों की माला से लाद दिया गया। उम्र व कद [illegible] के कारण वे दिख नहीं रहे थे, अतः उन्हें एक मेज पर खड़ा किया गया। [illegible] में इस पल को यादगार बनाने के लिए गाँधी जी के द्वारा प्रचारित [illegible] के साथ उनका छाया चित्र लिया गया था जो श्री शिव विनायक मिश्र के पास था। बेंत लगने के बाद चन्द्रशेखर आजाद ने काशी विद्यापीठ में दाखिला ले लिया। वहाँ उनकी भेंट मन्मथनाथ गुप्त, शचीन्द्रनाथ बख्शी और सेठ दामोदर स्वरूप जैसे लोगों से हुई। उन्हीं दिनों शचीन्द्रनाथ सान्याल ने उत्तर भारत में सर्वप्रथम काशी में क्रान्तिकारियों का अपना संगठन बनाया था। इसमें बंगाली समाज के तथा काशी विद्यापीठ के अनेक छात्र गुप्त रूप से जुड़े हुए थे। आजाद के सहपाठी मन्मथनाथ गुप्त के संस्मरणों से स्पष्ट है कि क्रान्तिकारी संगठन से चन्द्रशेखर आजाद का सम्पर्क श्री गुप्त ने ही कराया था।

श्री शिव विनायक मिश्र ने अपने संस्मरणों में लिखा है-'' काशी में रहते हुए एक बार सम्पूर्णानंद जी ने आजाद को नोटिस कोतवाली के पास चिपकाने को दिया। चूँकि वहाँ पुलिस का सख्त पहरा रहता था, अतः चन्दशेखर ने वह नोटिस हल्के से अपनी पीठ पर चिपका कर, दूसरी ओर ढेर सारी लेई लगा दी। सिपाही से बात करते हुए कोतवाली के पास के खम्भे पर उन्होंने वह नोटिस चस्पा कर दी थी।'' यह उनके बुद्धिचातुर्य का ज्वलंत उदाहरण है। बनारस में पहले क्रान्तिकारी दल के लोग लक्सा पर एक भाड़े के मकान में रहते थे। वहाँ आगे के कमरे में गाने-बजाने का साज-सामान रख दिया गया था, ताकि किसी को शक न हो कि वहाँ क्रान्तिकारी रहते हैं। चन्द्रशेखर आजाद लक्सा के इस कमरे में भी रहे। फरारी के दिनों में आजाद बैजनत्था मुहल्ले में एक कोयला बेचने वाली बुढ़िया के यहाँ आकर रहते थे। बकौल शिव विनायक मिश्र एक बार पुलिस को कुछ संदेह हुआ तो उसने बैजनत्था मुहल्ले पर धावा बोला। चन्द्रशेखर आजाद एक बोरे में छुप गए और बुढ़िया से कहकर ऊपर से कोयला रखवा दिया। पुलिस ने उस दुकान की तलाशी ली और चली गई। इस प्रकार अपनी प्रति उत्पन्न मति से वे पुनः बच गये। इसके बाद भी क्रान्तिकारी गतिविधियों के क्रम में चन्द्रशेखर आजाद अनेक बार गुप्त रूप से काशी आये। शहादत के कुछ माह पूर्व उनकी मुलाकात चन्द मिनटों के लिए श्री शिव विनायक मिश्र से भी हुई थी। श्री मिश्र कांग्रेस के सक्रिय सदस्य थे। अतः 27 फरवरी, 1931 को जब पुलिस मुठभेड़ में चन्द्रशेखर आजाद की कम्पनी बाग, इलाहाबाद में शहादत हुई तो श्रीमती कमला नेहरू ने उन्हें सूचना करवाई थी। वे और मदन मोहन मालवीय के पुत्र पदमकान्त मालवीय जी जब रसूलाबाद घाट पर पहुँचे तो श्री आजाद की चिता में आग लग गई थी। खैर, उसे बुझा कर विधि विधान से पुनः अग्नि संयोग किया गया। श्री मिश्र आजाद की अस्थियाँ चुनकर काशी वापस आ गए और यहाँ उनका क्रिया कर्म सम्पन्न कराया था।

● सेनानायक, चतुर्थ वाहिनी, पी.ए.सी., प्रयागराज
सम्पर्क - 9559528017

दशाश्वमेध घाट की गंगा

अंजना वर्मा

शांत, डूबी खयालों में
नील गंगा बह रही है ।

छतरियाँ तट पर तनी हैं,
आ रहे जा रहे जन हैं।
दर्शनार्थी छवि अपनी
उतरवाने में मगन हैं।
पर्यटक-स्थल बनी
गंगा बहुत चुप रही है
नील गंगा बह रही है।

बात कितनी है समेटे
हुए अपने गहन मन में !
अगर सुनना चाहते हो
सुनोगे ही मौन क्षण में।
माँ नहीं अब, नदी-भर है
आस्थाएँ ढह रही हैं ।
नील गंगा बह रही है।

छोड़कर आकाश अपना,
बर्फ के घर से निकलकर,
त्यागकर शिव की जटा को
भी चली आई पिघलकर।
शाप और संताप हरने
के लिए सब सह रही है।
नील गंगा बह रही है।

बिना माँगे मिला अमृत
इस तरह से धार बनकर !
सब बनाते रहे इसको
ज़हर बेपरवाह बनकर।
बस्तियों की गंदगी
चुपचाप पीती यह रही है।
नील गंगा बह रही है।

शिव की नगरी को अपरिमित
प्यार गंगा का मिला है।
भोग के संग मुक्ति का
वरदान काशी में खिला है
इस अलौकिक धरा की
श्रृंगार यह सोलह रही है।
नील गंगा बह रही है।

जो हवा की नमी है, रस
बन ज़मीं को जोड़ती है।
लाल धारा बनी तन में
सुरसरि ही दौड़ती है।
देख लो महसूस करके
धड़कनों में रह रही है।
नील गंगा बह रही है।

वही सूरज है यहाँ भी,
पर अलग ही रोशनी है।
पवन पुरवाई हमेशा,
वीथियाँ खुशबू भरी हैं।
व्यंजनों, फूलों से नगरी
कर बहुत मह-मह रही है।
नील गंगा बह रही है।

कोई आता है जगत के
रंग में डूबा हुआ ।
कोई आया मोह-माया
भंग कर टूटा हुआ।
मनोवांछित दे सभीको,
'खुश रहो तुम' कह रही है।
नील गंगा बह रही है ।

● ई-102, रोहन इच्छा अपार्टमेंट
भोगनहल्ली, विद्या मंदिर स्कूल के पास, बेंगलुरु - 560103
सम्पर्क - 8210777500

आलेख

काशी की लुप्तप्राय उत्तर मुगलकालीन चित्रकला शैली

मधुज्योत्सना

'विष्णु धर्मोत्तर पुराण' के तीसरे भाग 'चित्रसूत्र' में प्राचीन भारतीय चित्रकला में प्रयुक्त होने वाली तकनीक और सिद्धान्त तथा साधनों के सम्बन्ध में पर्याप्त विवरण प्राप्त होता है। उक्त सिद्धान्त और तकनीकों का अनुपालन सातवीं शताब्दी के भारतीय कलाकारों की कृतियों में पर्याप्त रूप से देखने को मिलता है। अजन्ता और उसकी समकालीन कलाकृतियाँ इसकी सर्वश्रेष्ठ उदाहरण है। ये तकनीकें ही काफी बाद में चलकर मुगल व राजपूत कला में भी प्रयुक्त हुई हैं। यद्यपि उक्त कला की तकनीक के सम्बन्ध में तथ्यों का सर्वथा अभाव है। इस क्षेत्र के प्रथम अध्येता डॉ0 कुमार स्वामी थे, बाद में प्रख्यात कलाविद् डॉ0 मोतीचन्द्र और राय कृष्णदास ने विशेष रूप से काशी में कला के इस पक्ष की व्यापक जानकारी काशी के मुगल शैली के तत्कालीन घरानेदार कलाकार उस्ताद राम प्रसाद से प्राप्त की। बीती पिछली सदी में राय कृष्ण दास ने काशी की इस कला शैली के विकास और संरक्षण के लिए विशेष प्रयास किया है।

काशी में मुगल चित्रकला शैली

काशी में कला की इस शैली के मूल में अठारहवीं सदी में अंग्रेजी सरकार द्वारा निर्वासित होकर, अन्तिम मुगल सम्राट शाह आलम के पुत्र जवांबख्त के साथ बनारस आये मुगल शैली के चित्रकार लाल जी मुसब्बर के द्वारा सिक्खी ग्वाल को प्रशिक्षित किये जाने के बाद उनके वंशजों द्वारा कला की इस शैली को उत्तरोत्तर आगे बढ़ाया गया। सिक्खी के पुत्र बटोही ने कला की इस परम्परा को आगे बढ़ाते हुए काशी के बाहर बिहार के राजाओं और सामन्तों के लिए इस शैली में अनेक चित्र बनाये।

इस घराने में देवी-देवताओं के चित्रों का निर्माण परम्परागत 'गदकारी' (टेम्परा) शैली में मुख्यतः नायिका भेद, कृष्ण लीला आदि के चित्र हाँथी दांत के फलकों पर बने हैं। इनके अतिरिक्त तैल रंगों और जल रंगों में भी व्यक्ति चित्र बने। इस प्रकार काशी की इस शैली में मुख्यतया तीन प्रकार के चित्रों के निर्माण की परम्परा दिखाई देती है। उस्ताद मूल चन्द्र (मूला प्रसाद) ने इन विधाओं को विशेष ऊँचाई पर पहुँचाया, लेकिन उपयुक्त आश्रय के अभाव में उनका जीवन संघर्षपूर्ण रहा। उस्ताद मूलचन्द्र की श्रेष्ठतम कलाकृतियाँ आज भी काशी में 'पीताम्बरा देवी मन्दिर; में संरक्षित हैं। इस घराने के कलाकारों ने हाथी दांत के अलावा कांच, लकड़ी, बेठन,

दिवार, कपड़े, पत्थर, आइवरी पेपर पर भी चित्र बनाये। कला की इस विधा में स्वनिर्मित खनिज रंगों के साथ, पत्थर के रंग और वानस्पतिक पदार्थों से बने और ऑबरंगों का ही प्रयोग हुआ है।

कला की यह शैली उत्तर भारत से पश्चिम बंगाल तक फैली। यह दक्षिण में बीजापुर, दक्खिनी के अलावा अवध, लखनऊ, दिल्ली, राजस्थान, कश्मीर, पटना और वाराणसी तक पहुँची। इस कला शैली में अन्य कला से अलग तकनीकें प्रयुक्त होती हैं। इस तकनीक से बने चित्रों में विशेष मधुरता होती है, जो जनसामान्य को अपनी ओर विशेष रूप से आकर्षित करती हैं। इस तकनीक और शैली में तीन-चार सौ वर्ष पूर्व बने चित्र भी मिलते हैं।

काशी में सिक्खी ग्वाल के वंशजों ने कला की इस शैली को अपनाया जो आज भी काशी में उनके वंशजों की धरोहर है उस वंश परम्परा की वंशावली निम्नवत् है –

- सिक्खी
  - बटोही
    - मूलचन्द्र
      - तपाकी
      - बटुक
      - रामप्रसाद
        - शारदा प्रसाद
          - मुकुन्द प्रसाद
          - गोपाल प्रसाद
        - गौरी
      - शिवप्रसाद
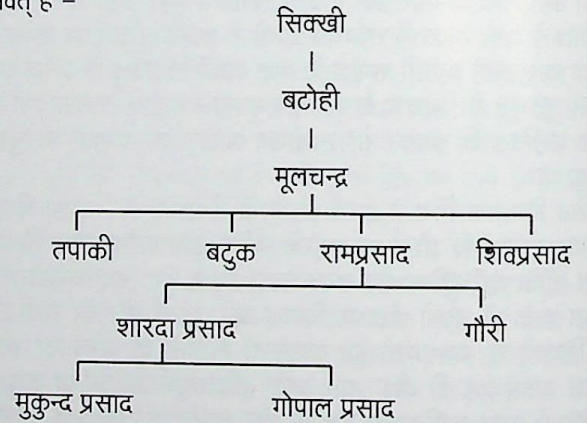
कलाविद् रायकृष्ण दास की कला पारखी नजरों ने काशी में इस शैली के कलाकारों की विशेषता को पहचानकर उस्ताद राम प्रसाद, उनके पुत्र उस्ताद शारदा प्रसाद और पौत्र मुकुन्द प्रसाद को अपने आश्रय में भारत कला भवन में स्थान देकर काशी में उत्तर मुगलकालीन चित्र कला शैली को संरक्षित करने का काम किया। उसे अपनी देख-रेख में सजाया, संवारा और कुछ नये प्रयोग के साथ निखार देकर राष्ट्रीय स्तर से आगे विश्व स्तर पर ले जाकर काशी की मुगल चित्रकला शैली को एक अलग पहचान देने के साथ अमरत्व प्रदान किया। उनके प्रयास का ही परिणाम है कि भारत कला भवन सारे विश्व में उत्तर मुगल शैली के चित्रों का श्रेष्ठतम संग्रहालय बना। जुलाई 1989 ई. में भारत कला भवन में 'कला सृजन की तीन पीढ़ियाँ' शीर्षक चित्रकला प्रदर्शनी आयोजित की गई थी। इस प्रदर्शनी में मुगल चित्रकला की काशी शैली के तीन पीढ़ी के कलाकारों उस्ताद राम प्रसाद, उस्ताद शारदा प्रसाद और उनके पुत्र मुकुन्द प्रसाद की कलाकृतियों को प्रदर्शित किया गया था।

उत्तर मुगलकालीन चित्रकला की काशी शैली में प्रयुक्त होने वाले साधन, उसकी निर्माण तकनीक

कागज

कागज चित्रण के लिए सबसे महत्वपूर्ण सामग्री है। सचित्र पुस्तक और 'छिन्द चित्र' कागज पर ही उत्कीर्ण किये जाते थे। यद्यपि सूती कपड़ों व

दीवारों पर भी बने इस शैली के चित्रों के उदाहरण प्राप्त होते है, लेकिन अधिकतर चित्र कागज़ पर ही उपलब्ध होते है।
मुगल कलाकारों द्वारा प्रयुक्त कागज को 'ईरानी' या 'इस्फाहानी' के नाम से जाना जाता है। इसके अतिरिक्त काश्मीर तथा सियालकोट में निर्मित कागजों को भी प्रयोग किया गया। सबसे उत्कृष्ट कागज 'महाजाल' होता था। इसके अतिरिक्त नेपाली व सांगानेरी कागजों का भी प्रयोग हुआ है।

भित्ति चित्रण

मुगल कला में 'फेसको' हेतु भित्ति तैयार करने की विधि को हम इटैलियनों द्वारा प्रयुक्त 'फ्रैस्को ब्यूनो' कह सकते हैं। यह गीले चूने के प्लास्टर जिसका अनुपात कलि व भीकी से 1:3 के होते हैं, बन्धन विहीन रंजक चूर्ण को शुद्ध जल के घोल से - प्रयोग से की गयी चित्रकारी होती है।

शीशे पर चित्रण

शीशे पर बने चित्रों की शुरूआत लगभग 18वीं शती में हुई। यह चित्रपरम्परा यूरोप से चीन होते हुए भारत में आयी व 19वीं शती आते-आते भारत में वि[illegible] लो[illegible] हो गयी। इनमें देवी-देवताओं के चित्र, पूजाघरों में शीशे पर ब[illegible] आल[illegible]क चित्र, मकानों की सजावट हेतु प्रयुक्त होते थे। उस्ताद राम[illegible] बनाये गये इस प्रकार के चित्र 'बाबू शिवप्रसाद गुप्त' की कोठी के [illegible] में लगे हैं। ये चित्र तीन फुट के शीशे पर बने है। एक चित्र [illegible] शिव व दूसरे चित्र में भगवान् विष्णु 'शेषनाग के ओम्कार' के [illegible] है।

शीशे पर चित्र बनाने की विधि

शीशे पर बने चित्र अन्य चित्रों की अपेक्षा ठीक विपरीत तरीके से बनाये जाते है अर्थात् पहले इसकी 'खुलाई' क्रिया की जाती है। उसी के अनुसार बारी-बारी से अलग-अलग रंग लगाये जाते है। इन चित्रों में पक्के रंगों का प्रयोग होता है। कभी-कभी आगे की तरफ से उल्टा करके कागज़ पर बने चित्रों को चिपका कर फिर उसी के ऊपर खुलायी करके उसमें विभिन्न रंगों को भरते थे। ये चित्र काफी बड़े-बड़े होते है। इस तकनीक से बने अधिकतर 'शबीह' व धार्मिक श्रेणी के चित्र मिलते है। चित्र में एक रंग को लगा लेने के पश्चात् उसको अच्छी तरह सूखने के बाद ही दूसरा रंग लगाते है। इस प्रकार के चित्रों के निर्माण में बहुत ही सावधानी की आवश्यकता रहती है। इसके लिए उल्टा चित्र बनाने का अभ्यास व धैर्य नितान्त अनिवार्य है।

वस्त्र पर चित्रण

कपड़ों पर चित्रण के उदाहरण यद्यपि हमें साहित्य में अवश्य ही मिलते हैं पर ऐसा प्रतीत होता है कि मुगलों के आगमन के साथ लघु चित्रों की बढ़ती माँगों ने कपड़े पर चित्रण को लगभग समाप्त सा कर दिया। यद्यपि आरम्भिक मुगल स्कूल के 'हम्जनामा' पर आधारित चित्र कपड़ों पर ही मिलते है।

हाथी दाँत पर चित्रण

हाथी दाँत पर कार्य करने की तकनीक भारतीय कलाकारों ने 18वीं सदी के अन्तिम चरण में आये यूरोपीय चित्रकारों से सीखी थी। इस तकनीक को न सिर्फ भारतीय कलाकारों ने सौ साल से अधिक समय तक अपने भावों की अभिव्यक्ति का साधन बनाया अपितु मुगल स्कूल (दिल्ली, लखनऊ, पटना और बनारस) के अन्तिम चरण के कलाकारों में भी यह काफी लोकप्रिय हुई। हाथी दाँत 1/20 से 1/16 इंच तक अलग-अलग पर्त में निकाली जा सकती है। उसे सुरक्षित रखने हेतु चार पर्ती कपड़ों के भीतर रखा जाता है। पैनल के खुरदुरेपन को दूर करने हेतु उसे समुद्र फेन से रगड़ कर सपाट और चिकना किया जाता है, फिर रीठे के पानी से धोया जाता है।
तैयार पैनल पर ड्राइंग ट्रेसिंग की सहायता से उतारा जाता है। अन्तिम रेखांकन लिफ्टी आबरंग (पानी की तरह) और लिफ्टी लैम्ब (ब्लैक, कैरमाइज) की सहायता से किया जाता है। तत्पश्चात् आवश्यक रंग की पारदर्शी पर्त इस प्रकार लगाई जाती है कि भूमि दिखती रहे। फिनिशिंग स्टेपलिंग की सहायता से करते है। अशुद्धियों को समुद्र फेन से साफ कर नया रंग भरते हुए कन्टेपलिंग की सहायता से फिनिश करते हैं। हाथी दाँत का वास्तविक रंग ही सतह का कार्य करता है। 'अबदरी' द्वारा चित्र में चमक प्रदान की जाती है। उदाहरण के तौर पर तेल लगे बालों की चमक दिखाने हेतु बबूल की गोंद को बहुत कमजोर माध्यम के रंग में मिलाकर प्रयोग में लाया जाता है।
इन चित्रों में अतिपारदर्शी रंजकों का प्रयोग किया जाता है, ताकि हाथी दाँत की प्राकृतिक कोमलता व चमक झलकती रहे। कुछ रंजक तो स्वभावानुसार पारदर्शी होते है, जैसे रसोत, आलता, थ्यूरी, जहरी स्याही आदि।

वसली चित्रण

वसली की प्रथा मुगल चित्रों का निजस्व है। यह प्रथा 17वीं शती में ईरान में प्रचलित हुई थी, परन्तु राजस्थानी कलाकार पन्द्रहवीं शती में भी वसली पर चित्र बनाते थे, जिससे वसली की परम्परा भारतीय प्रमाणित होती है। वसली निर्माण के लिए कागजों की मनोवांछित मोटाई प्राप्त करने के लिए कागज की आवश्यकतानुसार दो-तीन परतों को लेई से चिपकाया जाता है। इसके लिए ऐसे कागजों का प्रयोग किया जाता है, जो 'केमिकली ब्लीच्ड' न हों। हाथ से बने कागज इसके लिए उपयुक्त होते हैं। यदि वसली पर चित्रण या अलंकरण का कार्य करना हो तो उसकी अन्तिम पर्त पर किसी तरह के गोंद का प्रयोग नहीं करते है।
उत्तर मुगल कलाकारों द्वारा प्रयुक्त रंगों को दो भागों में विभक्त किया जा सकता है -

1. प्राकृतिक रंग
2. रासायनिक रंग

प्राकृतिक पिगमेण्ट एलिमेण्ट, कम्पाउण्ड मिनरल व वेजिटेबल एक्सट्रैक्ट का मिला रूप होता है जबकि कृत्रिम रूप से निर्मित रंग (आर्टिफिशियल मैनिफैक्चर्ड साल्ट) या फिर पिगमेण्ट का रंग सब्जियों या कीड़े-मकोड़े से प्राप्त किया जाता है। रंग अधिकतर प्रकृति में उपलब्ध खनिजों से मिल जाता है। कुछ खनिज रंग पृथ्वी से बारीक पाउडर के रूप में प्राप्त होते हैं, तो कुछ खनिज रंग पत्थर को पीस कर तैयार किये जाते है।
भूरंग को दो अनावश्यक तत्वों बालू और पेड़-पौधों के अवशेषों से अलग करने हेतु पानी में घोला जाता है। ऐसा करने से बालू नीचे बैठ जाता है व पानी ऊपर तैरने लगता है। पानी के ऊपर तैरते हुए फेन को धीरे से निकाल लेते है। इसके पहले कि रंग पात्र की तली पर बैठ जाये, पानी को सावधानीपूर्वक दूसरे बर्तन में पलट देते है। यह प्रक्रिया कई बार दोहरायी जाती है। जब तक कि उसमें से सारी अशुद्धियाँ दूर न हो जायँ। धूप में सुखाने के पश्चात् यह रंग प्रयोग हेतु तैयार हो जाता है। रंगीन पत्थरों से भी इसी विधि से रंग प्राप्त किये जाते है। पत्थर को पहले भली प्रकार धोकर उसका चूर्ण बना लेते है। पुनः उपरोक्त शुद्धिकरण (लेविगेशन) प्रक्रिया द्वारा शुद्ध कर रंग एकत्र करते है।
मुगल शैली के कलाकारों द्वारा इण्डिगो को छोड़कर अन्य किसी प्रकार के वास्तविक रंगों का प्रयोग नहीं किया गया, क्योंकि स्वभाव से ये धुंधले होने लगते है। मुगल कला के पतन के समय, मुख्य रूप से पटना स्कूल के कलाकारों द्वारा अन्य वानस्पतिक रंगों का प्रयोग प्रारम्भ हुआ था। इन रंगों का विवरण निम्नवत् है -
(1) साल्ट जो एलिमेण्ट्स को सीधे मिलाकर प्राप्त किया जाता है। जैसे- ईथर या पारे का लाल सल्फाइड।
(2) साल्ट जो मेटल के साथ ऐसिडिक री-एक्शन से प्राप्त होता है। ऐसे रंगों में माटा 'जंगाल' प्रयोग होता है।

सफेद रंगचूर्ण

कारागर सफेदा - मुगल कलाकारों द्वारा सिर्फ सफेदा का प्रयोग हुआ है। बारीक पीसे सफेदे को मलमल के कपड़े में छान, चीनी मिट्टी के बर्तन में डाल, आवश्यकतानुसार पानी मिलाकर घोटते हैं। रंग शुद्धि के पश्चात् पानी फेक देते हैं। इस विधि से रंग का सूखा पाउडर चित्र निर्माण के लिए तैयार होता है। बन्धक के लिए बबूल का गोंद प्रयोग किया जाता है।

काजल

परम्परागत मुगल कलाकार इसे स्याही कहते है। काले रंग के रूप में लैम्प 'ब्लैक कालिख' का प्रयोग प्राचीनकाल से होता है। सरसों के तेल से दीपक जलाकर किसी कुल्हड़ को उल्टा कर ढक देते है। इससे कुल्हड़ के अन्दर की दीवार पर काजल की पर्त इकट्ठी हो जाती है, जिसे खरोच कर निकालते है, 'घण्ट लैम्पफर' को जलाकर भी कालिख प्राप्त की जाती है। इसमें बबूल की गोंद मिलाकर गोला बना लिया जाता है व भट्ठी में डालकर पकाया जाता है। इसमें रंग का तैलीय भाग भट्ठी द्वारा सोख लिया जाता है। माध्यम के रूप में बबूल का गोंद प्रयुक्त होता है। इससे पूर्ण चित्र तैयार होते है जिसे 'स्याह कलम' कहते है।

लाल रंग चूर्ण

गेरू (गैरिक)– गेरू का अत्यधिक प्रयोग प्राचीनकाल के चित्रों में मिलता है। यह हल्का व गर्म प्रकृति का रंग है।

सिन्दूर– पीले लाल प्रभाव हेतु इसका अत्यधिक प्रयोग मुगल कलाकारों द्वारा हुआ। रंग को प्राप्त करने हेतु ह्वाइट लीड को खुली हवा में तब तक भूनते हैं जब . तक कि वह गाढ़ा लाल न हो जाये।

हिरौंजी– इस इण्डियन रेड का निर्माण पशिच्यन गल्फ के द्विभुज महाद्वीप पर मिलने वाले औकर से होता है। इसका शेड् गाढ़ा ठंण्डा व बैंगनी होता है। शुरू में यह फारस की खाड़ी हरभुज से आने के कारण ही इसे 'हरभुजी' व 'हिरीमंच' नाम से जाना जाता है।

ईगुर (सिंगरफ) - यह मरकरी का सल्फाइड है। यह चमकीले लाल रंग की आभा देता है व ईगुर को नीबू के रस के साथ घिसने पर प्राप्त होता है। वर्तमान में और भी तरीकों से इन रंगों को तैयार किया जाता है। सिंगरफ को भेड़ के दूध के साथ घोंटकर नींबू द्वारा शुद्ध करते हैं।

कैरमाइन (गुलाबी) - इसका निर्माण एक कीड़े के द्वारा होता है। आवश्यक मात्रा के 'कोकस इण्डिका' को मलमल के कपड़े में लोडे पटानी लौद और बेनक के साथ रातभर पानी में भिंगोकर छोड़ देते है। धीमी आँच पर पानी उबालने को चढ़ा कर चलाते रहते है। पानी उड़ जाने पर उसमें तीन दिन की बासी दही मिला देते हैं, ब्लैक शेड का कैरमाइन प्रयोग में लाना हो तो दही नहीं मिलाया जाता है।

नीला रंग चूर्ण – इसका निर्माण एक पेड़ के द्वारा होता है।

लाजवर्द – अल्ट्रामैरिन का प्रयोग भारतीय चित्रों में चिरकाल से होता चला आ रहा है। 'लेपिस लैजुली' नामक पत्थर से इसका निर्माण होता है। यह मुगल कलाकारों का अत्यधिक प्रिय रंग रहा है। अत्यन्त बारीक रूप में अपनी रंगत खो देता है, माध्यम के लिए सिर्फ सरेस का प्रयोग उपयुक्त होता है।

एज्यूराइट – सुन्दर गाढ़ा नीला व कभी-कभी अन्य खनिजों के साथ पाया जाता है। बारीक एज्यूराइट येलो ग्रीनिस स्काई ब्लू रंग का प्रभाव देता है। सौलिड ब्लू हेतु इसकी कई पर्त लगायी जाती है।

पीले रंग चूर्ण : प्यूरी (गौगोली) - प्यूरी का प्रयोग मुगल कलाकारों द्वारा पीले रंग के रूप में होता था। इसका निर्माण गौ मूत्र द्वारा होता है। गौ मूत्र को एकत्रित कर उसे ठंण्ढा होने के बाद पकाया जाता है। द्रव के नीचे बैठे भाग का गोला बनाकर कोयले की आँच पर सुखाने के पश्चात् पुनः सूर्य के प्रकाश में सुखाया जाता है।

रामरज – यह प्राकृतिक रंग ब्राउन मैला प्रभाव देता है। लैविगशन प्रक्रिया द्वारा शुद्ध किया जाता है।

हरे रंग का चूर्ण :

हरा भाटा – यह फीरियस आक्साइड का सिलिकेट होता है। यह रंग पीला ब्राइट, अपारदर्शी (ओपेक) और कण युक्त होता है। घास फूस वाली जमीन दिखाने के लिए इसका अधिकांशतः प्रयोग होता था।

टेरावर्ट – इसके द्वारा प्राप्त रंगों का टैक्श्चर पारदर्शी, जल व सोपी होता है। इसका प्रयोग मूल रूप से सत्रहवीं शताब्दी में पृष्ठभूमि निर्माण हेतु किया जाता था।

जंगाल – मुगल कलाकारों का पसन्दीदा रंग हरा था और इसका बहुतायत प्रयोग इलस्ट्रेटैड मैन्युस्क्रिप्ट्स और स्टेन पेण्टिंग्स के लिए होता था। यह समय के साथ गाढ़ा होने लगता है व ब्राउन टोन भी देने लगता है। यह कॉपर का ऐसीटेट होता है जो ताँबों के छीलन को सिरके के साथ प्रतिक्रिया कर बनाया जाता है।

जौहरी– ओरपिमेण्ट, सल्फाइट या हरताल में से किसी एक को इण्डिगो के साथ मिलाकर जौहरी रंग प्राप्त होता है।

इसके अलावा भी कई रंगों को अन्य रंगों के साथ मिलाकर प्राप्त किया जा सकता है। जैसे- बैंगनी, इण्डियन रेड, सोजनी, सोनजाई (सोनकिरवा) आदि।

मुगल कलाकारों द्वारा जिन चमकीली धातुओं का प्रयोग चित्रण एवं अलंकरण हेतु हुआ इसमें स्वर्ण सबसे प्रिय था।

स्वर्ण चूर्ण

इसका प्रयोग पाउडर के रूप में चित्रण हेतु व पत्तर के रूप में अलंकरण के लिए होता था। दोनों कार्यों हेतु सोने की एकदम [illegible] पत्तर तैयार होती है। शहद या गोंद का गाढ़ा मिश्रण या अण्डे के पीले [illegible] को [illegible]नी मिट्टी के बर्तन के चारों ओर लगाकर सावधानीपूर्वक उसमें [illegible] डालते है। ऐसा करते समय बुलबुला आदि नहीं उठना चा[illegible] जंगली की सहायता से इसे घोंट देते है। पूरा पाउडर बन जाने [illegible] मलमल के कपड़े से छान कर छने भाग को 15 मिनट नीचे बैठने के [illegible] छोड़ देते है। पानी को सावधानीपूर्वक निथाल, बर्तन के ऊपरी हिस्से [illegible] ढक देते है। इसमें माध्यम के लिए सरेस मिला कर प्रयोग किया जाता है। अधिक गोंद होने पर इसकी आभा समाप्त हो जाती है। घोटकर इसमें चमक पैदा की जाती है।

चाँदी – रजत चूर्ण या पत्तर का बहुत कम प्रयोग मुगल कलाकारों द्वारा हुआ है, क्योंकि चाँदी समय के साथ काली पड़ जाती है। इसका प्रयोग कहीं-कहीं पानी की चमक दिखाने व सस्ती पेण्टिंग्स का बार्डर बनाने के लिए किया गया है। इस प्रक्रिया को ललई बनाना कहते है।

अबरखी (माइका) - इसका प्रयोग चाँदी के स्थान पर चमक के लिए मुगल कलाकारों द्वारा हुआ है।

माध्यम– टेम्परा पेण्टिंग्स में माध्यम के विशेष महत्व को नकारा नहीं जा सकता है। टेम्परा पेण्टिंग्स में मीडियम व पिगमेण्ट्स को सही मात्रा में मिलाकर द्रव रूप प्रदान कर प्रयोग में लाया जाता है।

बबूल का गोंद - महीन कणकीय रूप में बबूल के वृक्ष से प्राप्त किया जाता है। सफेदा व प्यूरी को छोड़कर इसका प्रयोग अन्य रंगों के साथ माध्यम के रूप में किया जाता था और उपरोक्त दोनों रंग चूर्ण के साथ धव का गोंद माध्यम के रूप में इस्तेमाल किया जाता है।

गम का ट्रॉगकानथ– एक ऐसा माध्यम है जो सिर्फ माइका (अभ्रक) हेतु प्रयोग में लाया जाता है।

सरेस (बज्र लेप)– सोने व लाजवर्द के लिए सर्वश्रेष्ठ माध्यम है। इसका निर्माण भैंस के सींग, खुर व चमड़े को उबाल कर किया जाता है।

रीठा– तैलीय भूमि के लिए इसका प्रयोग हुआ है। रीठे को पानी में भिंगो देते है व कलाकार बार-बार उसमें कलम डुबोकर चित्रण कार्य करता है। अभ्रक व हाथी दाँत वाले पेण्टिंग में तैलीय भाग को हटाने हेतु रीठे के पानी का प्रयोग करते है।

लेई– मैदा, आरारोट व इमली के बीज को पानी में उबाल कर तैयार किया जाता है। पम्पलेट चिपकाने व बुक बाइण्डिंग हेतु प्रयोग होता है। तूतिया या कॉपर, सल्फेट का संगरक्षक (प्रिजरवेटिव) के रूप में कभी भी प्रयोग नहीं किया जाता है। रंग चूर्ण में माध्यम मिलाते वक्त विशेष सावधानी बरती जाती है।

क्रेयान (चारकोल)– मुगल कलाकारों द्वारा पेंसिल आने के पहले इमली के कोयले का प्रयोग स्केचिंग हेतु होता था। पेन्सिल के आविष्कार से कोयले का प्रयोग बन्द हो गया।

कलम (ब्रश)– मुगल कलाकारों द्वारा इसे 'कलम' नाम दो अर्थों से दिया जाता है - (1) तूलिका, (2) शैली।
मुगल कलाकार गिलहरी की पूँछ के बालों से ब्रश बनाते थे। गिलहरी के बाल को पानी में भिंगोकर उसे (गाय की पूंछ) बारली के भुट्टों के शेप में काट कर परगजा में कलम उतार हैण्डिल में लगा देते हैं। स्तरीय कलाकार की यह पहचान होती है कि उसकी रेखाओं में अत्यधिक गति प्रवाहित होती है। साधारण चित्रों में आभूषण व मोती आदि का चित्रण रूई द्वारा होता था, इसे 'मोतरा' कहते हैं।
चित्र बनाने की शुरूआत :
कलाकार ताजी तबियत से कार्य करना प्रारम्भ करता है। वह 'वीर आसन' (एक घुटना मुड़ा व दूसरा खड़ा) की मुद्रा में बैठते थे। ब्रश को अंगूठे व तर्जनी से पकड़ते थे व शेष ऊँगलियाँ हथेली पर होती थी। कार्य प्रारम्भ करने से पूर्व वे कलम को सर से लगाते व गणपति को याद करते 'जय गणपति बाबा की' व मुसलमान कलाकार 'बिसमिल्ला रहमाउर रहीम' की स्तुति कर कार्य प्रारम्भ करते है।
पेण्टिंग का [illegible] रेखांकन क्रेयान या लिफ्टी या आबरंग (एक में मिली स्याही गु[illegible] व [illegible]) से शबीह व ख्याली चित्र जो भी बनाना रहता है उसका स्केच (ख[illegible]) [illegible]ते हैं। शबीह बनाते वक्त यह ध्यान रखना चाहिए कि टिपाई के [illegible] कि मॉडल का फीचर मेल खाता होना चाहिए। चित्र को बड़ा कर [illegible] कलाकार वास्तविक के अनुपात में ही बड़ा कर बनाता है, पर उसी [illegible] कापी करते वक्त कलाकार नमूने की बाहरी रेखा को ट्रेसिंग पर [illegible] खाक झाड़ने वाली प्रक्रिया से छाप लेते थे। ट्रेसिंग करने का नया तरीका आधुनिक कलाकारों द्वारा प्रयोग में लाया जाता था। ट्रेसिंग के पिछले हिस्से पर रेड ऑकर का पाउडर लगा कर किसी नुकीली चीज़ से बाहरी रेखांकन पर चलाया जाता है।
टिपाई के पश्चात् पतले सफेदा का तीन अस्तर इस प्रकार देते है कि नीचे की आकृति भी दिखाई देती रहे व जमीन भी बंध जाये। इस धुंधले अस्तर पर फिर से सम्भालकर टिपायी करते हैं। इसे 'सच्ची टिपाई' कहते हैं। फिर चित्र को पलट कर मोटे काँच या पौलिश्ड मार्बल, चिकना संगमरमर, अकीक पर रख पीढ़े से बट्टे द्वारा घोंटते है, इससे अस्तर बराबर होने के साथ-साथ ओप भी आ जाती है। फिर अपेक्षित रंग की आवश्यकतानुसार दो-तीन पर्त लगायी जाती है। इसे 'गद्‌कारी' कहते हैं और उक्त प्रकार से घोटते जाते है। इससे चित्र मीनाकारी जैसी जान पड़ती है।
कलाकार सर्वप्रथम पृष्ठभूमि में रंग लगाता है, तत्पश्चात् चेहरई लगाता है फिर वस्त्र आदि की बारी आती है, तब रूपरेखा (सारहद) से आकर और अंग-प्रत्यंग का निर्णय करते है। इसे 'खुलाई' कहते है। साथ ही जहाँ छाया व सौन्दर्यबर्द्धक रंग लगाने की आवश्यकता रहती है (जैसे- आँख के कोने में रतनारापन) उसे भी स्टेपलिंग द्वारा लगाते जाते है। इसे 'साया-सुषमा' कहते है, तब आभूषण पहनाते हैं
और यदि स्त्री का चित्र हुआ तो हाथ में मेहन्दी, पैर में महावर, श्रृंगार अलंकरण आदि बनाते है। इसे 'मोती महावर'' कहते है। इसके उपरान्त झीना वस्त्र अर्थात् जिसमें नीचे कतान व दूसरा वस्त्र आदि दिखाई पड़े। जैसे स्त्री की ओढ़नी और पुरुष का दुपट्टा बनाते है। इसे 'झीना ओढ़ाना' कहते हैं। अब तैयारी की घोटाई करते हैं, जिसके साथ चित्र तैयार हो जाता है। इसके बाद चित्र वसली साज और तब नक्काश तथा खतकश के हाथ में जाता है। वसली साज उसे वसली पर जमाता है और तब नक्काश एवं खतकश बेलों तथा पट्टियों आदि से उसके हाशिये की सज्जा (अलंकरण) करते है। बाद में यह कार्य कलाकारों द्वारा स्वयं होने लगा।
ऐसे हाशिये भी उत्कृष्ट दस्तकारी के नमूने है उन पर बेल, बूटे शिकार, शिकार गाह, बेल बूंटों के बीच-बीच में पशु-पक्षी आदि ऐसे दृश्य जिनका सम्बन्ध चित्र से हो और जो चित्र से मेल खाते हो, बने रहते हैं। जान पड़ता है कि हाशिये के शेषांक चित्र नक्काश नहीं (चित्रकार ही तैयार करते थे) क्योंकि कभी-कभी तो वे प्रधान चित्र से भी बेहतर होते हैं, कुछ हाशियों पर सोने की तबक का छिड़काव रहता है जिसे 'अफशां' कहते हैं। इन हाशियों से चित्रों का सौन्दर्य बहुत बढ़ जाता है।

● डी. 52/100, छोटी गैबी, लक्सा रोड, वाराणसी 221010 (उ.प्र.)

कविता

काशी के शिव

सूर्य प्रकाश मिश्र

काशी के कण -कण में शिव हैं

है जग में ऐसा नगर कहाँ
इस जीवन दर्शन में शिव हैं

शव में हैं शिव कृति में हैं शिव
सभ्यता संस्कृति में हैं शिव
अंकित है जिन पर काल खण्ड
पूजित हर आकृति में हैं शिव

वैराग्य और अपनेपन में
क्रंदन अभिनन्दन में शिव हैं

शास्त्रों में शिव शस्त्रों में शिव
पोषण विचार वस्त्रों में शिव
तप योग ध्यान अर्चन वन्दन
स्तुति में शिव मंत्रों में हैं शिव

आहुति में यज्ञ की ज्वाला में
अक्षत में चन्दन में शिव हैं

उन्नति में शिव अवनति में शिव
प्रारम्भ और परिणति में शिव
सुख की दुःख की परिभाषा में
दुर्गति सद्‌गति हर गति में शिव

शिव हैं विरक्ति अनुरक्ति भक्ति
निष्काम समर्पण में शिव हैं

करुणामय शिव उपकारी शिव
भक्तों के आज्ञाकारी शिव
पालनकर्ता काश्याधिराज
प्रलयंकर हाहाकारी शिव

संगीत नृत्य साहित्य कला
मारण उच्चाटन में शिव हैं

लघुता में शिव गरिमा में शिव
श्रृंगार और उपमा में शिव
गंगा की अविरल धारा में
घाटों की परिक्रमा में शिव

हर वैभव नत सम्मुख जिसके
ऐसे अक्खड़पन में शिव हैं

जंगम में शिव जड़ता में शिव
मूल्यों की साक्षरता में शिव
शिव हर -हर महादेव धुन में
हैं शिव की सुन्दरता में शिव

शिव सत्यम् शिवम् सुन्दरम् में
शासन अनुशासन में शिव हैं

क्षमता में अक्षमता में शिव
सौहार्द प्रेम ममता में शिव
समदर्शी शिव प्रियदर्शी शिव
हर एक विलक्षणता में शिव

हर व्याख्या, सीमा से विशाल
रमते जन गण मन में शिव हैं
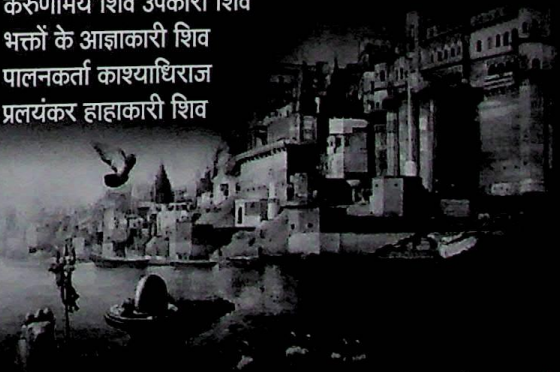
● बी 23/42 ए के, बसन्त कटरा (गांधी चौक), खोजवा, दुर्गाकुण्ड
वाराणसी 221001 । सम्पर्क - 09839888743

काशी को संवारती तिथियाँ

श्रीराम माहेश्वरी

काशी की संस्कृति, यहाँ का वैभव और यहाँ की अपसंस्कृति में सुधार की संभावनाओं पर बहुत से लोगों ने अपने अनुभव साझा किए हैं। यदाकदा काशी के कुछ लोगों की आवाज ने भी काशी को बदला है। वास्तव में काशी एक जीवन धारा है, यह प्रकाशमय अविरलता से इस भौगोलिक भू–भाग को निरंतर उज्ज्वल बनाए रखती है। हाल के कुछ वर्षों में काशी के वैभव में जितनी तीव्रता से वृद्धि हुई है, वह गति इससे पूर्व नहीं देखी गई। काशी के सांसद एवं भारत के यशस्वी प्रधानमंत्री श्री नरेंद्र मोदी जब पहली बार यहाँ आए तो सायास या अनायास उन्होंने कहा "मैं यहाँ आया नहीं मुझे माँ गंगा ने बुलाया हैं।" एक राजनैतिक संदेश की तरह इसे सुना गया और काशीवासियों ने अपने स्वभाव से उसे वैसे ही सुना जैसे अब तक सुनते आए हैं। परंतु आज काशी विश्वनाथ धाम का वैभव, माँ गंगा के निर्मलीकरण के सद्प्रयास, स्थानीय आवागमन, पर्यटन सुविधाओं के विकास, नवोन्मेषी स्थापत्य युक्त घाटों का सुंदरीकरण, यहाँ की गलियों की बनावट का रख रखाव, सफाई व्यवस्था, स्वास्थ्य सेवा, रेल परिवहन में स्टेशनों का कायाकल्प, हवाई अड्डे पर वायुयानों के सीधे यात्रा मार्ग, पूर्वांचल के धार्मिक पथ की सुविधाओं में विस्तार, सुविधा संपन्न आयोजन/सम्मेलन स्थल "रूद्राक्ष" का निर्माण आदि कार्य इन आठ वर्षों में हुए हैं, उन्हें देख कर कहना पड़ता है काशी सँवर रही है। धार्मिक पर्यटन का केन्द्र तो काशी थी ही अब सुविधाओं से भी युक्त हो रही है। इसी तारतम्य में श्री नरेन्द्र मोदी की काशी यात्राओं का संक्षिप्त विवरण और इन विकास कार्यों में उनकी संलग्नता तिथिवार यहाँ प्रस्तुत है :

17 मई 2014

वाराणसी से लोकसभा सांसद चुने जाने के बाद, वाराणसी आगमन पर काशी की जनता द्वारा उनका भव्य स्वागत।

7, 8 नवम्बर 2014

ट्रेड फेसिलिटेशन सेन्टर का शिलान्यास।
आदर्श ग्राम योजना के अन्तर्गत जयापुर गाँव को अंगीकार किया।
स्वच्छता अभियान के अन्तर्गत अस्सी घाट पर श्रमदान।

25 दिसम्बर 2014

मदन मोहन मालवीय राश्ट्रीय मिशन का शुभारंभ।
इन्टर यूनिवर्सिटी सेन्टर का शुभारंभ।
वाराणसी महोत्सव का शुभारम्भ।
अस्सी घाट के निकट जगन्नाथ मंदिर की गली में स्वच्छता अभियान।

18 सितम्बर 2015

काशी हिन्दू विश्वविद्यालय ट्रामा सेंटर राष्ट्र को समर्पित किया।
वाराणसी में इंटीग्रेटेड पावर विकास योजना का शुभारंभ।
वाराणसी रिंग रोड, फेज–1 का शिलान्यास।
वाराणसी से बाबतपुर (एन.एच–56) मार्ग विकास का शिलान्यास।

12 दिसम्बर 2015

जापान के प्रधानमंत्री शिंजो आबे के साथ गंगा आरती।

22 जनवरी 2016

सामाजिक अधिकारिता शिविर में दिव्यांगों के लिए उपयोगी उपकरण प्रदान किया। महामना एक्सप्रेस को हरी झंडी दिखाकर रवाना किया।

1 मई 2016

ई बोट योजना का शुभारंभ।
ई रिक्शा प्रदान किया एवं ई–रिक्शा चालकों से [illegible]

3 एवं 4 मार्च 2017

जनसभा को संबोधन एवं वाराणसी में विभिन्न परियो[illegible] शुभारंभ।

22 एवं 23 सितम्बर 2017

अनेक विकास योजनाओं के शुभारंभ के साथ [illegible] दान किया तथा पशुधन आरोग्य मेला में भाग लेने के साथ ही [illegible] जनता को संबोधित किया।

12 मार्च 2018

फ्रांस के राष्ट्रपति के साथ दीनदयाल उपाध्याय हस्त[illegible] संकुल का दौरा

14 जुलाई 2018

अनेक महत्वपूर्ण योजनाओं का शिलान्यास

17–18 सितम्बर 2018

आंगनबाड़ी एवं आशा कार्यकर्त्ताओं से मुलाकात।
स्कूली बच्चों के साथ संवाद व पूर्व घोषित विकास कार्यों की समीक्षा।

11–12 नवम्बर 2018

नेशनल हाइवे प्रोजेक्टस एवं जलमार्ग टर्मिनल का उद्घाटन।

29 दिसम्बर 2018

एक जिला एक उत्पाद सम्मेलन में भाग लिया।

22 जनवरी 2019

प्रवासी भारतीय दिवस का उद्घाटन एवं दीनदयाल हस्तकला शंकुल में उपस्थिति।

19 फरवरी 2019

पं. मदन मोहन मालवीय कैंसर हास्पिटल के उद्घाटन के साथ ही रू. 3350 करोड़ की योजनाओं की घोषणा।

08 मार्च 2019

नेशनल वूमेन लाइवलीहुड क्रांफ्रेस को संबोधित किया।

25 अप्रैल 2019

विशाल रोड शो एवं कार्यकर्त्ताओं तथा जनता को संबोधित करने के साथ ही दशाश्वमेध घाट पर गंगा आरती दर्शन।

27 मई 2019

काशी विश्वनाथ मंदिर में दर्शन पूजन एवं भाजपा कार्यकर्त्ताओं को संबोधित किया।

24 अक्टूबर 2019

दीपोत्सव कार्यकर्त्ता संवाद के अन्तर्गत वीडियो कान्फ्रेंसिग द्वारा कार्यकर्त्ताओं से संवाद।

16 फरवरी 2020

दीनदयाल उपाध्याय ट्रेड फेसिलेटेशन सेंटर में आयोजित काशी एक रूप अनेक कार्यक्रम में भाग लिया।

36 परियोजनाओं का उद्घाटन एवं 14 अन्य परियोजनाओं के शिलान्यास के साथ ही पड़ाव पर पं. दीनदयाल उपाध्याय की 63 फीट ऊँची मूर्ति का अनावरण महाकाल एक्सप्रेस परिचालन हेतु हरी झंडी दिखाई।

जंगमबाड़ी मठ में जगद्गुरू विश्वाराध्य गुरूकुल के शताब्दी समारोह आयोजन के समापन समारोह में उपस्थिति।

मंगल केवट एवं रिक्शा चालक की नवविवाहित पुत्री को आशीर्वाद प्रदान किया, जिन्होनें प्रधानमंत्री को इस अवसर पर निमंत्रित किया था।

25 मार्च 2020

नागरिकों के साथ कोविड संबंधी समस्याओं पर संवाद।

19 जून 2020

वीडियो कान्फ्रेंसिग द्वारा काशी विश्वनाथ धाम तथा अन्य परियोजनाओं की समीक्षा।

9 जुलाई 2020

वाराणसी के एन.जी.ओ से वीडियो कान्फ्रेंसिग द्वारा कोविड–19 के संबंध में चर्चा।

9 नवम्बर 2020

रू. 614 करोड़ की परियोजनाओं का शिलान्यास एवं लोकार्पण।

30 नवम्बर 2020

देव दीपावली महोत्सव में सहभागिता।

एन.एच.-19 के वाराणसी–प्रयागराज सेक्शन के सिक्स लेन के चौड़ीकरण परियोजना का उद्घाटन।

निर्माणाधीन काशी विश्वनाथ मंदिर कॉरिडोर परियोजना का अवलोकन।

सारनाथ के पुरातात्त्विक स्थल का अवलोकन।

21 मई 2021

डाक्टर्स, पैरामेडिकल स्टाफ से कोरोना महामारी की रोकथाम पर विचार–विमर्श।

15 जुलाई 2021

विभिन्न विकास परियोजनाओं का उद्घाटन।

बी.एच.यू. के प्रसूति एवं बाल चिकित्सा विभाग का निरीक्षण।

25 अक्टूबर 2021

पी.एम. आयुष्मान भारत हेल्थ इन्फ्रास्ट्रक्चर मिशन का शुभारंभ।

गंगा घाट के सौन्दर्यीकरण तथा स्वच्छता से संबधित रू. 5200 करोड़ की विकास परियोजनाओं का उद्घाटन।

13–14 दिसम्बर 2021

काशी विश्वनाथ धाम का भव्य उद्घाटन समारोह।

4 फरवरी 1916 को गाँधी जी जब काशी आए थे, उन्होनें अपने अनुभव को भारतीय सनातन संस्कृति के निर्मल आध्यात्म में महादेव की श्रेष्ठ भूमिका को अपनी भावभूमि में देखने का मन बनाया हुआ था। वे चाहते थे कि जहाँ महादेव का देवालय हो वह शांत, निर्मल, प्रकाशमान और श्रद्धा के फूलों से पग–पग पर भरा हो। परंतु यहाँ आने पर उन्हें वह भाव भूमि नहीं मिली। गंदी गलियाँ, सीवर से भरे मार्ग, मंदिर के आस–पास जो तथाकथित पुजारी हैं उनका व्यवहार देखकर सनातन संस्कृति के केन्द्र की दशा–दिशा से आघात लगा। इसे उन्होनें काशी हिन्दू विश्वविद्यालय में अपने संबोधन के दौरान व्यक्त भी किया। हो सकता है काशी हिन्दू विश्वविद्यालय के विश्वनाथ मंदिर का निर्माण इसी प्रतिक्रिया का प्रतिफल रहा हो। हाँ आज अगर गांधी जी होते तो उन्हें शायद यह परिवर्तन सुखद लगता। मोदी जी ने जब यहाँ परिवर्तन की परिकल्पना की तो पृष्ठभूमि में गांधी जी के अनुभव भी उनके स्मृति पटल में रहे होगें। उल्लेखनीय है कि मोदी जी ने काशी की संस्कृति को आत्मसात् किया तथा उनके आचरण एवं कार्यपद्धति से यही लगता है कि वे काशी के हैं तथा काशी उनकी भी है। काशी की राष्ट्रीय अस्मिता को गौरव का उच्चतम शिखर प्रदान करने के लिए कटिबद्ध दिखे। इस संपूर्ण विकास यात्रा में उ.प्र. के मुख्यमंत्री योगी आदित्यनाथ की निरंतर देख–रेख की महत्वपूर्ण एवं उल्लेखनीय भूमिका भी रही है।

• जे.12/8–1 द्वएत्र्न एफ.–1, एपेक्सी इंक्लेव, नाटी ईमली, वाराणसी–221001
सम्पर्क– 9415202825

दो ग़ज़लें बनारस पर

वेद मित्र शुक्ल

1.

इक नदिया को मान दिया है हर हर गंगे,
सबका ही उपकार किया है हर हर गंगे।

सुबह-ए-बनारस होती है ओ दोस्त! तभी तो,
कहने को आयी दुनिया है हर हर गंगे।

पाप मुक्त होता जल की कुछ छींटों से ही,
भोला-भाला या छलिया है हर हर गंगे।

देश-धर्म, रिश्ते-नाते औ गाँव-शहर ने-
कह-कहकर बस पुण्य लिया है हर हर गंगे।

बीच धार में दीप लिए उम्मीदों के औ -
फूलों वाली इक डलिया है हर हर गंगे।

2.

मौसम हो या बेमौसम हो थमे न रेला, चलो बनारस!
दुनियावी या देवों का हो, सबका मेला, चलो बनारस!

ढलने कब दे रौनक देखो, संध्या-वंदन घाट-घाट पर,
जगमग जगमग दीपाराधन है अलबेला, चलो बनारस!

दर्शन काशी-विश्वनाथ के करने सारा ही जग उमड़े,
जब भी, जैसे भी हों दर्शन, उत्तमबेला, चलो बनारस!

कंकर-कंकर में शंकर औ हर घर मंदिर महादेव के,
सब उसके ही, कौन सगा औ है सौतेला, चलो बनारस!

छोड़े है संसार साथ पर, प्यारी काशी साथ न छोड़े,
अंतिम क्षण भी कौन यहाँ पर रहा अकेला, चलो बनारस!

बाहर ही बाहर बस घूमें, भीतर कभी न देखा हमने
'क्या खोया औ क्या पाया' का छोड़ झमेला चलो बनारस!
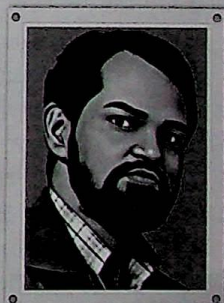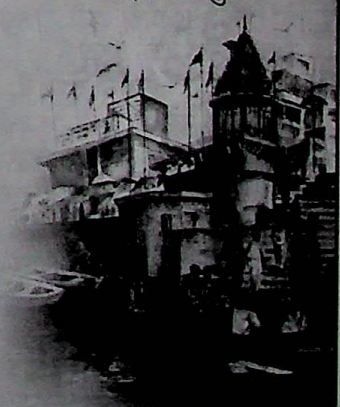
• अंग्रेजी विभाग, राजधानी महाविद्यालय, दिल्ली विश्वविद्यालय, राजा गार्डन, नई दिल्ली - 110015 । सम्पर्क - 9953458727

मीनाक्षी दुबे

माटी की खुशबू के ग़ज़लकार अनूप वशिष्ठ

प्रो. वशिष्ठ अनूप से मेरा प्रत्यक्ष परिचय तब हुआ था जब वह सन् 2015 में मेरी पी-एच0डी0 की मौखिक परीक्षा के लिए भोपाल आये थे लेकिन भोपाल की 'एकलव्य' संस्था द्वारा प्रकाशित एक छोटी-सी पुस्तक में छपे उनके एक गीत ने मेरा ध्यान बहुत पहले आकृष्ट कर लिया था जिसकी आरंभिक पंक्तियाँ हैं

इसलिए राह संघर्ष की हम चुनें
ज़िन्दगी आँसुओं में नहाई न हो,
शाम सहमी न हो, रात हो ना डरी
भोर की आँख फिर डबडबाई न हो।...

गीतकारों और ग़ज़लकारों को पढ़ना मुझे शुरू से ही अच्छा लगता है। इसीलिए कुछ प्रिय रचनाकारों पर लिखती भी रही हूँ। दुष्यन्त कुमार और उनके समकालीन तथा बाद के रचनाकारों को पढ़ते हुए मैंने अनुभव किया कि बहुत कम ग़ज़लकार ऐसे हुए जिनमें मौलिक चिन्तन, विषयवस्तु की सही पहचान और छन्दों की अच्छी समझ दिखाई पड़ती है। वैसे तो पत्र-पत्रिकाओं में ग़ज़लकारों की भरमार है लेकिन दुष्यन्त कुमार, सूर्यभानु गुप्त, शेरजंग गर्ग, नीरज, कमल किशोर श्रमिक, अदम गोण्डवी, ज़हीर कुरैशी, रामदरश मिश्र, कुंअर बेचैन, माधव कौशिक और वशिष्ठ अनूप जैसे थोड़े से लोग हैं जिन्हें हिन्दी ग़ज़ल में मानक के रूप में रखा जा सकता है।

एक पाठक के रूप में प्रो0 वशिष्ठ अनूप की ग़ज़लों में विषयवस्तु की ताज़गी और साफ़गोई हमें बहुत प्रभावित करती है। मुझे लगता है कि महान ग़ज़लकार दुष्यन्त कुमार शहरी और राजनीतिक चेतना के कवि थे तथा जनकवि अदम गोण्डवी मूलतः ग्रामीण चेतना के प्रखर कवि थे। वशिष्ठ अनूप गाँव और शहर दोनों का प्रतिनिधित्व करते हैं। उनमें दुष्यन्त और अदम दोनों की खूबियाँ देखी जा सकती हैं। वह जितने गाँव के हैं, उतने ही शहर के भी। वह कहते भी हैं

डालियाँ दूर शहरों में फैलें भले,
पर जड़ों के लिए गाँव-घर चाहिए।

हालांकि गाँव और शहर की बात करते हुए उनका झुकाव गाँव की ओर ज़्यादा दिखाई पड़ता है। माटी की खुशबू उन्हें जीवन्त करती है और गाँव का परिवेश उन्हें रीचार्ज करता है

हमारे गाँव की माटी में जैसी खुशबू है,
तुम्हारे शहर के परफ्यूम में वो बात कहाँ?
इसी माटी की खुशबू से महक आती है जीवन में
इन्हीं लम्हों की गर्मी से खुशी रीचार्ज होती है।

गाँव-घर के नज़ारे उन्हें बहुत आकर्षित करते हैं। नमक-तेल के साथ बचपन में खायी गई गर्म रोटी और अम्माँ का दुलार उन्हें नहीं भूलता। इसीलिए वेद और शास्त्र की समझ होने के बावजूद वह लोक की थाती को सहेजना अधिक महत्वपूर्ण समझते हैं

रचा था लोक ने जिसको वो परिपाटी महकती है,
बुज़ुर्गों के पसीने से मिली थाती महकती है।
जरा झुककर, बड़े सम्मान से इसके निकट आना,
मेरी कविता में मेरे गाँव की माटी महकती है।

हर श्रेष्ठ कवि और भले इंसान की तरह प्रो0 अनूप भी अपनी परम्परा और अपनी संस्कृति की अच्छाइयों और आदर्श-मूल्यों को [illegible] लेकर आगे बढ़ना चाहते हैं। जब वह एक क़दम भविष्य की ओर बढ़ाते [illegible] ज़मीन और परम्परा में जमाये रखते हैं। वह कहते हैं- मिलें [illegible] की बुलंदियाँ तो ज़मीं से पाँव जुड़े रहें। इसीलिए कविता में भी वे [illegible] और प्रेरक कवियों की तलाश करते हैं, उनमें डूबते हैं और [illegible]त्मकता को लेकर आगे बढ़ना चाहते हैं–

तुलसी के, जायसी के, रसखान के वारिस हैं,
कविता में हम कबीर के ऐलान के वारिस हैं।
हम सीकरी के आगे माथा नहीं झुकाते,
कुम्भन की फ़क़ीरी के, अभिमान के वारिस हैं।
हम शब्द-सारथी हैं हर वक्त इक समर में,
हम पाश व सफ़दर के अरमान के वारिस हैं।...

आज एक तरफ़ बहुत सारे बनावटी कवियों के काव्य-परिदृश्य से किसान ग़ायब हैं, दूसरी तरफ़ वशिष्ठ अनूप की ग़ज़लों में किसान-जीवन लगातार उपस्थित है। हम सभी जानते हैं कि आज मध्यम और छोटी जोत की किसानी घाटे का सौदा है लेकिन किसान उसे छोड़ भी नहीं सकते। कभी वह 'इज्ज़त' लगती है और कभी मज़बूरी। कम ज़मीन, बेरोज़गारी और मँहगी खाद, बीज, डीजल, बिजली और कृषि उपकरणों के कारण बहुत सारे किसानों के लिए कृषि-कर्म चुनौती-भरा हो गया है। इन किसानों के दर्द और उनकी मुश्किलों की अभिव्यक्ति अनूप जी अपनी कई ग़ज़लों में करते हैं। एक उदाहरण देखें–

रात-दिन हैं किसान खेतों में,
उनका सारा जहान खेतों में।
ज़िन्दगानी यहीं समर्पित है,
सारी पूजा-अज़ान खेतों में।

अक्सर प्रकृति की मार भी किसानों को तबाह करती रहती है–

बाढ़ में बह गई फसल सारी
खेत कुछ बिक गए लगानों में।

वह किसानों के श्रम और उस श्रम की उपज अन्न के महत्व का गान करते हैं जिसके बिना सारा ज्ञान भूल जाता है और भजन नहीं हो पाता–

बिना अन्न के है नहीं कुछ भी मुमकिन,
सृजन के तो हथियार हल-फावड़े हैं।

भाइयों के आपसी बँटवारे में एक तो खेती का आकार घटता गया है, दूसरी ओर बाढ़, सूखा, टैक्स, कर्ज़ आदि समस्याओं ने कृषक समुदाय को फटेहाल कर डाला है। सरकारों का व्यवहार भी इनके प्रति निर्ममता का ही होता है। परेशानियों से तंग आकर लाखों किसान आत्महत्या कर चुके हैं। सरकारें उनकी समस्याओं पर ध्यान नहीं देतीं। ऐसे में किसान 'गोदान' के होरी की तरह मज़दूर बनने और शहरों में पलायन करने तथा अपमानित होने के लिए विवश हो रहे हैं–

था कहाँ तैयार झुकने को किसी दरबार में,
पर ग़रीबी ले गई अपमान के संसार में।
छोड़कर घर चल पड़ा हल्कू मजूरी के लिए,
पेट तक भरता नहीं खेती के कारोबार में।
फिर किसी बुधिया की काया बेक़फ़न रखी रही,
फिर किसी होरी की बेटी बिक गई बाज़ार में।

बात इतनी ही नहीं है। गाँवों का परिवेश पहले-सा सौहार्दपूर्ण नहीं रह गया है। वहाँ नये ढंग के सामंत, दबंग, गुण्डे और बदमाश पनपे हैं। सांसदी, विधायकी और प्रधानी तक की राजनीति करने वाले गुण्डों के कारण आमजन का जीवन मुश्किल हो गया है। इस भयावह और क्रूर यथार्थ को इन शेरों में देखा जा सकता है–

हमारे गाँव में चलकर कभी देखें नज़ारा यह,
मगर के साथ कैसे आदमी पानी में रहता है।
ग़रीबों के लिए [illegible] बचाना है बहुत मुश्किल
अभी भी [illegible] परेशानी में रहता है।
यहाँ अ[illegible] बनती जा रहीं लेकिन,
बनाने वा[illegible] [illegible]ाथ या छानी में रहता है?

शहरों में [illegible] काम करने वाले किसानों के बेटों की दुर्दशा पिछले दिनों हर [illegible] दिखायी पड़ी जब उन्हें काम से हटा दिया गया और उन्हें भगा[illegible] जा[illegible]ा। पत्नी-बच्चों के साथ सामान लादे भूखे-प्यासे पैदल लौट रहे [illegible] लोगों को अनेक परेशानियों के साथ ही लाठी-डन्डे भी खाने पड़े। कितने रास्ते में ही मर गए। इस विषय पर उनकी यह ग़ज़ल मार्मिक तो है ही, इससे अनेक सवाल भी पैदा होते हैं

हर ओर खट रहे हैं, यूपी-बिहार हैं हम,
हर रोज़ पिट रहे हैं, सबके शिकार हैं हम।
घर में जो मिलती रोज़ी, क्यों कर भटकते दर-दर,
ललकार की है क्षमता, फिर भी गुहार हैं हम।

यह हमारे देश के करोड़ों नौजवानों-मज़दूरों के जीवन की वास्तविक दास्तान है जिन्हें हमारे देश के नेता-अधिकारी देखना-समझना नहीं चाहते। अपार ताक़त से भरी नौजवानी पिटने को अभिशप्त है, यह बहुत बड़ा दुर्भाग्य है।

अनूप जी की ग़ज़लों में श्रमिक-समाज के प्रति सम्मान और सहानुभूति भरी हुई है। वह जानते हैं कि हर वस्तु का उत्पादन और सृजन करने वाला यही समुदाय है। हर छोटी से बड़ी वस्तु वह अनाज हो, मशीनें हों, या महल और किले; यही मेहनत करने वाला वर्ग बनाता है। सारी धरती का बोझ इसी के कन्धों पर टिका है। इसीलिए प्रचलित मान्यताओं के विपरीत वैज्ञानिक और तार्किक दृष्टि का परिचय देते हुए वह कहते हैं कि–

कछुए की पीठ पर न शेष-फन पे टिकी है,
धरती श्रमिक के हाथ पर, गर्दन पे टिकी है।
महलों के ऐशबाग में महके हैं जो भी फूल,
उनकी महक अवाम के जीवन पे टिकी है।

लेकिन वह इस बात से दुखी हैं कि अनाज उपजाने वाले और सारे कार्य करने वाले लोगों का समाज में सम्मान नहीं है। रोटी, कपड़ा और मकान भी सुलभ नहीं है। प्रत्येक दिन कोई न कोई 'दिवस' मनाने के अभ्यस्त हम बौद्धिक समाज के लोग शब्द मात्र से 'मजदूर-दिवस' भी मनाकर औपचारिकता पूरी कर लेते हैं किन्तु सचमुच मज़दूरों के लिए करते हैं क्या? इस विषय पर प्रोफेसर अनूप के ये शेर द्रष्टव्य हैं–

जो बहाते खूँ-पसीना उनका आदर है कहाँ ?
घर बनाने वालों का अपना कोई घर है कहाँ ?
अन्न उपजाते हैं जो, सारे सृजन करते हैं जो,
भूख भर भोजन अभी उनको मयस्सर है कहाँ ?

हर दिन बढ़ती मँहगाई, बेरोज़गारी, मज़दूरों की छंटनी और कम मज़दूरी से परेशान एक बहुत बड़ा समुदाय परिवार की गाड़ी खींचते हुए हॉफ रहा है। बुनकर समाज की भी यही स्थिति है। वह दलालों और साहूकारों के शोषण का शिकार होता है। कई बार इन्हें आटा-चावल खरीदने के लिए अपना खून तक बेचना पड़ता है। ये खबरें एक संवेदनशील कवि को बेचैन करती हैं–

लहू जब बेचता है, तब कहीं वह घर चलाता है,
दुखी हैं आज वे करघे जिन्हें बुनकर चलाता है।

श्रमिक समुदाय के लिए अच्छा और भरपेट भोजन आज भी एक सपना है, यह एक सभ्य, स्वाधीन और आधुनिक समाज के लिए कलंक और शर्म की बात है। श्रमिक यदि बीमार न पड़े तो उसे आराम नहीं मिलता। अस्पताल में बीमार एक ऐसे ही व्यक्ति को देखकर उन्होंने मूल समस्या को उठाते हुए व्यंग्यात्मक शैली में लिखा है–

उस तड़पते व्यक्ति को भरपेट भोजन चाहिए,
एक दिन ग्लूकोज चढ़वाने से कुछ होगा नहीं।
दो क़दम व्यवहार की धरती पे चलकर देखिए
बैठकर सिद्धान्त पगुराने से कुछ होगा नहीं।

सुबह होते ही गाँवों के बहुत सारे मज़दूर काम की तलाश में शहर का रुख करते हैं। जिन्हें काम मिल जाता है, उनका तो काम चल जाता है लेकिन तमाम मजदूर दिनभर ग्राहक की प्रतीक्षा करके खाली हाथ वापस लौट जाते हैं। इसका बहुत मार्मिक और बेचैन कर देने वाला चित्रण इस शेर में देखें–

बच्चे खुश हैं, पापा आये, पत्नी गुमसुम देख रही,
भारी मन सोचे मजदूरा क्या कहकर समझाये वह।

इन सारी समस्याओं को सुलझाने का दायित्व जिन चुनी हुई सरकारों और उनके मंत्रियों, नेताओं, अधिकारियों पर होता है, दुर्भाग्य से वे इन पर कभी ध्यान नहीं देते। अनूप जी की एक ग़ज़ल देखें–

चुनावों में हमारे घर वो सुबहो-शाम आते हैं,
खयालों में कभी घुरहू, कभी मुखराम आते हैं।

बुद्धिजीवी समाज, चिन्तक, कलाकार, साहित्यकार और संस्कृतिकर्मी हमेशा से सरकारों के ग़लत निर्णयों और जनविरोधी कार्यों का विरोध करते आ रहे हैं, आज भी कर रहे हैं। सरकारें कभी उनका दमन करती हैं और कभी उन्हें पुरस्कारों-सम्मानों के माध्यम से फुसलाने, खरीदने और निर्जीव करने की कोशिश करती हैं। प्रो0 अनूप की बहुचर्चित ग़ज़ल में इसका बेहतरीन चित्रण है–

क़लम को थपथपाती है हकूमत,
क़लम से थरथराती है हुकूमत।
क़लम की रीढ़ रह जाये न क़ायम,
गले हँसकर लगाती है हुकूमत।
लपट जब फेंकने लगती कभी तो,
कलम से कॉप जाती है हुकूमत।
क़लम को कुन्द करने के हजारों,
तरीके आज़माती है हुकूमत।
फ़तह कर ले भले ही मोरचे, पर
क़लम से हार जाती है हुकूमत ।

प्रो0 वशिष्ठ अनूप की ग़ज़लों का यह एक पक्ष है जिसमें वह सामाजिक चेतना और जनचेतना से भरे प्रतिरोध के स्वर उठाते नज़र आते हैं। इनके अलावा उनका दूसरा पक्ष भी है जहाँ उनके हृदय के कोमल भावों की अभिव्यक्ति हुई है। सौन्दर्य-वर्णन में उन्हें कमाल की महारत हासिल है। बोलती हुई आँखों की भाषा उन्हें बहुत प्रभावित करती है–

ये मन का भेद सारा एक पल में खोल देती हैं,
तुम्हारे होठ चुप रहते, तो आँखें बोल देती हैं।

और जब वह नारी-रूप का चित्रण करते हैं तो एक से एक खूबसूरत बिम्बों, प्रतीकों और उपमानों की झड़ी लगा देते हैं जिनमें नये और पुराने हर प्रकार के उपमान शामिल होते हैं। उन्होंने तमाम पारम्परिक उपमानों को भी नई ज़िन्दगी दी है। यह रूपवर्णन कभी अत्यन्त सूक्ष्म और अशरीरी-सा होकर आध्यात्मिकता का स्पर्श करने लगता है और कभी धरती पर चलती-फिरती

रूप-राशि का जीवन्त वर्णन लगता है। कुछ उदाहरण देखें–

ख़्वाबों को जैसे सच में बदलते हुए देखा,
मैंने ज़मीं पे चाँद उतरते हुए देखा।
देखा कि एक फूल बोलता है किस तरह,
होठों से हर सिंगार को झरते हुए देखा।

क्रान्ति की ग़ज़लों के लिए जाने जाने वाले डॉ0 वशिष्ठ अनूप जब तन्मय होकर प्रेम की ग़ज़लें लिखते हैं तो उन्हें पढ़कर लगता है कि वह सिर्फ प्रेम के ही कवि हैं। यह आश्चर्य का विषय है लेकिन आश्चर्य क्यों हो? सारी क्रान्ति और सारा संघर्ष इसी प्रेममय संसार के निर्माण के लिए ही तो है! उनकी ग़ज़लों में एक प्रेमी मन की अनेकानेक मनोदशाओं की खूबसूरत अभिव्यक्ति हुई है–

कुछ सकुचाना, कुछ घबराना अच्छा लगता है,
तेरा हँसना, फिर शरमाना अच्छा लगता है।
तेरी एक झलक पाने को, तुझसे मिलने को,
हर दिन कोई नया बहाना अच्छा लगता है।

प्रो0 वशिष्ठ अनूप ने अपनी लम्बी रचना-यात्रा और व्यापक व बहुआयामी सृजन के दौरान कई कालजयी ग़ज़लें कही हैं। हमारे समय की मुश्किलें, रोज़मर्रा की उलझनें, पारिवारिक और सामाजिक जीवन की खींचतान, राजनीतिक अधोपतन, सम्बन्धों का बिखराव और विश्वासहीनता, महापुरुषों और महात्माओं का पतन व कथनी-करनी का अन्तर, इन सबके बीच पिसते व घुटते हुए आदमी का जीवन-संघर्ष, प्रकृति की चिन्ताएँ और इन सबके साथ एक स्वस्थ समाज व बेहतर संसार के निर्माण की कोशिशें उनकी ग़ज़लों का केन्द्रीय कथ्य हैं। माँ, पिता, बेटी, बच्चे, नदी, पेड़, पहाड़, पक्षी, पर्व आदि पर भी उन्होंने बेमिसाल शेर लिखे हैं। उनकी तमाम ग़ज़लों के साक्ष्य के आधार पर हम कह सकते हैं कि इस दौर में प्रो0 वशिष्ठ अनूप की ग़ज़लें हिन्दी की प्रतिनिधि ग़ज़लें हैं। अपनी बात कहने के लिए वह कोई दूर की कौड़ी नहीं लाते, न ही समझ में न आने वाली कल्पनाएँ करते हैं और न ही किसी चमत्कार के चक्कर में पड़ते हैं। उनकी भाषा आम जनजीवन की बहती और बोलती-बतियाती हुई भाषा है जिसमें बोलचाल में घुले मिले अरबी-फारसी के शब्द भी हैं, संस्कृत और भोजपुरी के शब्द भी, लोक में बसे अन्य भाषाओं-बोलियों के शब्द भी शामिल हैं। 'मेरी भाषा फुटपाथों, खेतों-खलिहानों की' की घोषणा करने वाले अनूप जी की सादगी और सहजता ही उनकी ग़ज़लों की शक्ति और सौन्दर्य है। अपनी एक ग़ज़ल में वह अपनी आदर्श भाषा का ज़िक्र इस प्रकार करते हैं–

बेड़ी औ ज़ंजीर की भाषा,
सन-सन चलते तीर की भाषा।
मुझे नहीं अच्छी लगती है,
सत्ता की, शमशीर की भाषा।
सीख रहा हूँ धीरे-धीरे,
तुलसी और कबीर की भाषा।
काश! मुझे भी मिल जाती वह,
शहद-सी मीठी मीर की भाषा।
मन होता है जाकर सीखूँ,
सन्तों, पीर-फ़कीर की भाषा।

अपने आलेख का अन्त मैं उनकी एक प्रसिद्ध और कालजयी ग़ज़ल के दो शेरों के माध्यम से करना चाहूँगी–

हमेशा रंग बदलने की, कलाकारी नहीं आती,
बदलते दौर की मुझको, अदाकारी नहीं आती।
जिसे तहज़ीब कहते हैं, वो आते-आते आती है,
फ़क़त दौलत के बलबूते, रवाँदारी नहीं आती।

• 57 फाइन एवेन्यू, फेस-2, संस्कार उपवन के पीछे, कोलार रोड
भोपाल (म.प्र.) 462042 । सम्पर्क - 9826469280
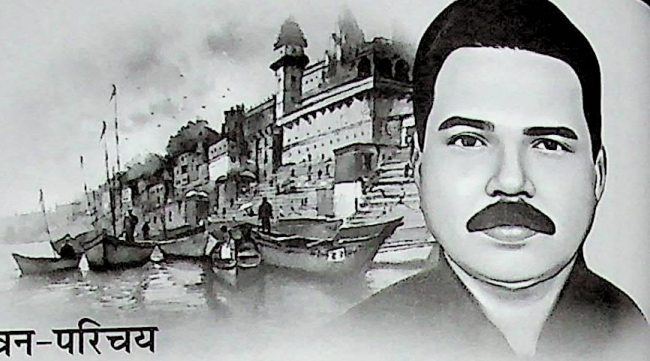
जीवन-परिचय

प्रो. वशिष्ठ अनूप

जन्म स्थान – ग्राम सहड़ौली, पो. फरसाड़–साऊँखोर (बड़हलगंज) गोरखपुर, उ.प्र.।

पिता व माता – स्व. लीलाधर द्विवेदी, स्व. परमज्योति

प्रकाशित साहित्य – कविता, गीत, ग़ज़ल, समालोच[illegible] और [illegible]पादन सहित कुल 50 पुस्तकें प्रकाशित।

ग़ज़ल और गीत संग्रह – स्वप्न के बाद, बंजारे [illegible] खतरे में है, बेटियों के पक्ष में, रोशनी की कोपलें, अच्छा लग[illegible] फिर जलाने का समय है, तेरी आँखें बहुत बोलती है, इसलिए, [illegible] मड़राने लगे हैं, बारूद के बिस्तर पर, गर्म रोटी के ऊपर नमक-[illegible]।

आलोचना/पुस्तकें – समकालीन कविता के प्र[illegible] [illegible]ुनिक हिन्दी कविता की वैचारिक पृष्ठभूमि और सृजन, क[illegible] के [illegible]नवादी स्वर, जगदीश गुप्त का काव्य–संसार, समकालीन हिन्दी [illegible]ल, [illegible]दी गज़ल का स्वरूप और महत्वपूर्ण हस्ताक्षर, हिंदी ग़ज़ल की प्रवृत्तियाँ, हिंदी गीत का विकास और प्रमुख गीतकार, हिन्दी साहित्य का अभिनव इतिहास, गीत का आकाश, हिंदी भाषा, साहित्य एवं पत्रकारिता का इतिहास, हिन्दी की जनवादी कविता, व्यावहारिक एवं प्रयोजनमूलक हिंदी तथा साहित्यशास्त्र, अँधेरे मेंः एक पुनर्विचार, असाध्यवीणा की साधना, उर्दू के प्रतिनिधि शायर और उनकी शायरी। लगभग डेढ़ दर्जन पुस्तकों का संपादन।

सम्मान एवं पुरस्कार – पेशवा माधव राव स्मृति राष्ट्रीय सम्मान–2021, विश्व शोध–संवर्धन अंतरराष्ट्रीय सम्मान–2020, पंडित विद्यानिवास मिश्र स्मृति लोककवि राष्ट्रीय सम्मान–2019, कृति सम्मान, गोरखपुर महोत्सव–2019, साहित्य चेतना सम्मान, गाज़ीपुर–2017, डॉ. जगदीश गुप्त अकादमिक सम्मान, लखनऊ–2016, डॉ. प्रमिला मिश्र रत्न अलंकरण एकेडमी सम्मान, वाराणसी–2016, हल्दीघाटी सम्मान, मऊनाथभंजन, उत्तर प्रदेश–2016, विश्वविद्यालय–स्तरीय सम्मान, उत्तर प्रदेश हिन्दी संस्थान लखनऊ–2015, कर्मयोगी सम्मान, भोजपुरी स्पीकिंग यूनियन मारीशस–5 नवंबर 2014, नागरीरत्न सम्मान, नागरी प्रचारिणी सभा–2012, अमृत कलश सम्मान, 1999 इत्यादि। साहित्यिक पत्रिका शब्दार्थ का संपादन।

कुछ गीत फ़िल्मों और धारावाहिकों में : कुछ गीत और ग़ज़लें कई विश्वविद्यालयों के पाठ्यक्रमों में शामिल। कुछ कविताओं का अन्य भाषाओं में अनुवाद।

लगभग 50 विद्यार्थियों का शोध–निर्देशन।

हिंदी ग़ज़ल पर डी.लिट्.

ग़ज़लों और गीतों पर कई विश्वविद्यालयों में पी–एचडी और एम.फिल कार्य।

अध्यापन – नेशनल पी.जी.कॉलेज, बड़हलगंज–1988–89, गोरखपुर वि. वि.–1990–93, राजा श्रीकृष्णदत्त पी.जी. कॉलेज, जौनपुर–1994–2007, 30 अक्टूबर 2007 से काशी हिन्दी वि.वि. वाराणसी में प्रोफेसर।

सम्पर्क – 204/11, राजेन्द्र अपार्टमेंट, रोहितनगर (नरिया) वाराणसी–221005

मो.नं. – 9415895812

ई–मेल vanoopbhu09@gmail.com

अनूप वशिष्ठ की रचनाएँ

(1) गीत

शिवनगरी काशी

शिव की [illegible] ज्ञानियों का शहर,
सारे धर्मों [illegible] यों का शहर।
सर्व वि[illegible] राजधानी यहाँ,
हर गली [illegible] कहानी यहाँ,
मंदिरों में [illegible] कीर्तन-भजन;
है हवाओं [illegible] बानी यहाँ।
योग-वैरा[illegible] है, [illegible] है, मुक्ति है,
मस्तमौला [illegible] यों कि शहर।
शिव की नगरी है यह, ज्ञानियों का शहर।
सारे धर्मों,सभी जातियों का शहर।

दिव्य गंगा की पावन धवल धार है,
भव्य घाटों पे सुषमा की बौछार है,
आरती .के हज़ारों दिये देखकर;
जैसे लगता दमकता सुघर हार है।
और सुबहे-बनारस की क्या बात है,
यह गृहस्थों का,वैरागियों का शहर।
शिव की नगरी है यह ज्ञानियों का शहर।
सारे धर्मों, सभी जातियों का शहर।

यह कबीरा की, रैदास की है धरा,
भक्त तुलसी के विश्वास की है धरा,
यह कलाओं की,साहित्य की भूमि है;
प्रेम की यह धरा, रास की है धरा।
वेद - मंत्रों का गुंजार होता सदा,
साधु-संतों का, संन्यासियों का शहर।
शिव की नगरी है यह,ज्ञानियों का शहर।
सारे धर्मों, सभी जातियों का शहर।

लोकगीतों के मोहक - मधुर बोल हैं,
ख्याल-ठुमरी के आलाप अनमोल हैं,
विश्व-विख्यात तबला - घराना यहाँ;
नृत्य का, गीत का ताना-बाना यहाँ।
बाँसुरी, ढोल, कजरी, पखावज भी है,
स्वर-लहरियों का,शहनाइयों का शहर।
शिव की नगरी है यह,ज्ञानियों का शहर।
सारे धर्मों, सभी जातियों का शहर।

(2)

दरवाज़े के पीपल जैसे सब सहते थे बाबूजी

हमें देखकर पढ़ते-लिखते, खुश दिखते थे बाबूजी।
अम्मा तो कह भी देती थीं, कभी-कभी मन की बातें,
कम खाते थे, ग़म खाते थे, चुप रहते थे बाबूजी।
पैरों में चप्पलें पुरानी, हर मौसम धोती-कुर्ता,
दुबले तन पर मज़बूती से,सब सहते थे बाबूजी।
फीस, क़िताबें, होली-खिचड़ी, तीज,रजाई, मेला, हाट,
बुनकर के ताने-बाने-सा, सब बुनते थे बाबूजी।
घर भर की सारी ज़रूरतें गुप-चुप वह पढ़ लेते थे,
अपनी कोई भी अभिलाषा कब कहते थे बाबूजी।
नाती-पोतों की ख़ातिर वह कविता और कहानी थे,
शाम ढले तो अक्सर यादों में बहते थे बाबूजी।

(3)

नदी है बंधनों में,मुक्त होकर बह नहीं पाती,
कोई दीवार है सदियों पुरानी ढह नहीं पाती।
जुबाँ भी है, बहुत बातें भी हैं, पर मौन रहती है,
सभी दिन भर सुनाते फिर भी माँ कुछ कह नहीं पाती।
हज़ारों दुख सहे हैं उम्र भर औलाद की ख़ातिर,
बुढ़ापे में वो बच्चों की रुखाई सह नहीं पाती।
रहा करते थे बच्चे जिस तरह माँ-बाप के घर में,
उसी अधिकार से माँ उनके घर क्यों रह नहीं पाती?
भले ही बर्तनों की भाँति लड़कर झनझनाएगा,
फिसलकर जब गिरोगे तब पड़ोसी ही उठाएगा।

(4)

कभी आँखें तरेरेगा, कभी पोंछेगा आँसू भी,
रहेगा वक्त पर जो पास,वो ही काम आयेगा।
हँसी के छोर पर दो बूँद आँसू की जगह रखना,
नहीं तो वेदना का स्वर घुमड़कर लौट जाएगा।
मैं अक्सर सोचता हूँ दर्द बंजारा न हो जाये,
नहीं होऊँगा मैं तो द्वार किसके खटखटाएगा।
हृदय के देश में बंजर इलाका गर बढ़ा यूँ ही,
तो यह भी सोच ले कल किस जगह सपने उगाएगा!
गये मिट्टी के घर,होता है क़त्लेआम पेड़ों का,
परिंदा सोच में डूबा, कहाँ अब घर बनाएगा।

(5)

अड़े हैं तो मंज़िल की ज़िद में अड़े हैं
बहुत छोड़ कर ही हम आगे बढ़े हैं।
अदब से उठाना ज़रा उन दियों को
अमावस में जो तीरगी से लड़े हैं।
झुके हैं फलों से लदे ये शजर जो
यकीनन ये हमसे बहुत ही बड़े हैं।
बिना अन्न के है नहीं कुछ भी मुमकिन
सृजन के तो हथियार हल -फावड़े हैं।
तपन में जो शीतल बनाते हैं जल को
वे मिट्टी के अनमोल सुन्दर घड़े हैं।
बड़े दिख रहे हैं वे कंधों पे चढ़के
जो सचमुच बड़े हैं,वे झुककर खड़े हैं।

(6)

नेह - नाता निभाना तुम्हें आ गया,
यानी ख़्वाबों में आना तुम्हें आ गया।
जो बताने में अल्फ़ाज़ बेबस लगे,
आँखों-आँखों बताना तुम्हें आ गया।
थोड़ा कहना, ज़रा अनकहा छोड़ना,
ढंग यह शायराना तुम्हें .आ गया।
पंखुड़ी - पंखुड़ी पर तुम्हारी हँसी,
बेसबब खिलखिलाना तुम्हें आ गया।
सादगी में क़यामत की जादूगरी,
और दिल में समाना तुम्हें आ गया।
भोर की चहचहाती किरन की तरह,
गंध बन गुनगुनाना तुम्हें आ गया।
याद रहते हुए भूलने की अदा,
ख़ूबसूरत बहाना तुम्हें आ गया।
आ गया मौन रह बोलने का हुनर,
फिर निगाहें झुकाना तुम्हें आ गया।
धीरे-धीरे हुआ इश्क़ का यह असर,
मुस्कराकर लजाना तुम्हें आ गया।
देखकर भी नहीं देखने की अदा,
और दिल में समाना तुम्हें आ गया।
मेरे घर का पता तुमको किसने दिया,
बेझिझक आना- जाना तुम्हें आ गया।

ग़ज़ल

बनारस

बनारस में माना मसाइल बहुत हैं,
मगर लोग सुख-दुख में शामिल बहुत हैं।
बढ़े बाल, गमछे से भ्रम में न पड़ना,
यहाँ गमछे वाले भी क़ाबिल बहुत हैं।
यहाँ लोक और वेद हैं साथ चलते,
जो हैं आम दरवेश आक़िल बहुत हैं।
भरी भीड़ सड़कें हैं गलियों में गलियाँ,
धड़कते मगर प्यार से दिल बहुत हैं।
सरेआम घाटों पे सब लूट लेंगे,
यहाँ रामनामी में क़ातिल बहुत हैं।
बहुत हैं यहाँ डूब जाने के खतरे,
मगर थामने वाले साहिल बहुत हैं।
यहाँ मृत्यु को भी समझते हैं मंगल,
यहाँ दर्दोग़म की महाफ़िल बहुत हैं।
कबीरा के करघे के उलझे हैं धागे,
मगर ज़िन्दगी के वसाइल बहुत हैं।
अँधेरों को देते रहेंगे चुनौती,
दिये आँधियों के मुक़ाबिल बहुत हैं।

● प्रोफेसर, हिन्दी विभाग, काशी हिन्दू विश्वविद्यालय । सम्पर्क - 4515895812
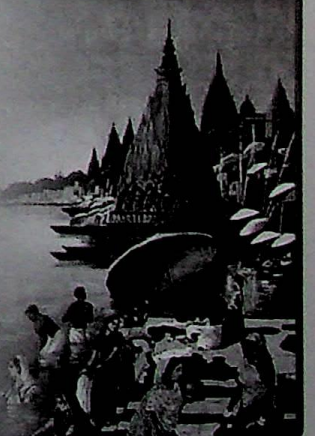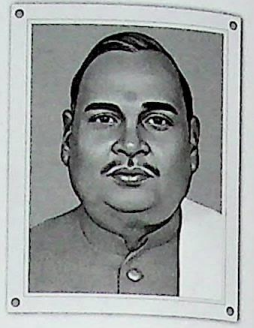
काशी विद्वन्मणिमाला के भास्वर रत्न महामहोपाध्याय

प्रो. भागीरथप्रसाद त्रिपाठी 'वागीश शास्त्री'

पवनकुमार शास्त्री

सर्वविद्याधिपति भगवान् विश्वनाथ की नगरी काशी में निवास करने वाले ज्ञान-विज्ञान की प्रतिमूर्ति सारस्वत साधकों की कठोर तपश्चर्या से उपजने वाले नित्य नवीन रत्नाकल्प उद्भावनाओं को लक्ष्य करके ही गोस्वामी तुलसीदास ने काशी को ज्ञान की खान कहा है-'...ज्ञान खानि अघ हानि कर(मा.4/01सो.)'। माँ भारती के अनन्य उपासकों में महामहोपाध्याय प्रो0 भागीरथप्रसाद त्रिपाठी 'वागीश शास्त्री' का नाम प्रमुख है।

प्रस्तुत है काशी-विद्वन्मणिमाला की अनन्त श्रृंखला के भास्वर रत्न और विविध विद्याओं के तलस्पर्शी विद्वान् प्रो. त्रिपाठीके महान् व्यक्तित्व और उनके द्वारा संस्कृत वाङ्मय के कोश में दिये गए विपुल अवदानों का विनम्र संस्मरण–

'डॉ. वागीश शास्त्री' उपनाम से विख्यात अन्तर्राष्ट्रीय ख्याति प्राप्त विद्वान् महामहोपाध्याय भागीरथ प्रसाद त्रिपाठी का जन्म मध्यप्रदेश के सागर मण्डलान्तर्गत बिलइया(खुरई)नामक ग्राम में सं. 1991में आषाढ़ शुक्ल त्रयोदशी तदनुसार 24 जुलाई 1934 ई. को हुआ था। आपके पिता पं0यमुना प्रसाद त्रिपाठी अत्यन्त तेजस्वी विद्वान् थे एवं आपकी माता श्रीमती पार्वती देवी एक कुशल गृहणी थीं। आदरणीय श्रीत्रिपाठी जी के जन्म के सन्दर्भ में संस्कृतकी निम्नलिखित गद्य/पद्य पंक्तियाँ प्राप्त होती हैं

'अथ श्रीवैक्रमसंवत्सरे 1991, शाके 1856। आषाढशुक्लत्रयोदश्यां भौमवासरे..घाटमपुरसमीपे जहाँगीराबादाभिजनस्य पण्डितयमुनाप्रसाद-त्रिपाठिनो गृहे तृतीय पुत्रस्य वागीशशास्त्रीत्युपनामधेयस्य पण्डितश्रीभागीरथप्रसादत्रिपाठिनो जन्म। आङ्गलतिथ्यनुसारेण 24.7.1934 ई.।

...श्रीयमुनाप्रसादस्तु तेजस्वी तस्य चात्मजः।
पार्वत्यां धर्मपन्यां स पुत्रषट्कमभावयत् ।
तृतीयस्त्वतितेजस्वी बृहस्पतिरिवापरः।
वृन्दारण्येऽर्जयद् विद्यां काश्यां प्रामार्जयत् सुधीः।।
विद्वच्छिरोमणिर्जातो वेदवेदाङ्गपारगः।
भागीरथप्रसादोऽसौ कृतभूरिपरिश्रमः।।
प्रसिद्धिम-भजल्लोके वागीशशास्त्र्युपाख्यया।
झोपाख्यशुकदेवाद् यो महाभाष्यमधीतवान्।
शेखरान्तान् समान् ग्रन्थानपि वाक्यपदीयकम्।।...

भृगुसंहिता के ज्योतिषियों ने श्री त्रिपाठीजी की जन्मपत्री में लग्नस्थ कन्या राशि और वहाँ विराजमान गुरु, स्वराशिके शनि-बुध तथा धनु राशिस्थ चन्द्रमाको देखते हुए श्रीत्रिपाठीजी के भविष्यके सन्दर्भ में 'प्रज्ञाराजविक्रम' नामक योग की भविष्यवाणी की थी जो अक्षरशः सत्य सिद्ध हुई। आपके नाम और काम में संगति बिठाते हुए डॉ. भानुशंकर मेहता ने बड़ी मार्मिक उद्भावना की थी। उन्होंने लिखा था कि-'आपको भागीरथप्रसाद नाम दिया गया है। आपके आगम ज्ञानी ऋषिकल्प पिताजी पुत्र के नाम में उसके जीवन की संभावनाएँ देख रहे थे। जैसे कभी भगीरथ अपने तपोबल से देवनदी गंगा को धरती पर उतार लाए थे; उसी प्रकार भागीरथ भी धरती पर ज्ञानगंगा का अवतरण कराएँगे। वे देख रहे थे कि यह बालक सागर (जिला) में जन्मा है; यह निश्चय ही जीवन सागर का मन्थन कर चौदह रत्न प्राप्त करेगा।'

श्रीत्रिपाठीजी की प्रारम्भिक शिक्षा सागर नगर में सम्पन्न हुई थी। सन् 1948 में आप वृन्दावन पहुँचे, वहाँ आपने ब्रज भाषा, पाणिनीय व्याकरण, साहित्य, वेदान्त, संगीत और अंग्रेजी का अध्ययन किया। सन् 1954 में वाराणसी में निवास करते हुए आपने शास्त्रों का अतलस्पर्शी ज्ञान प्राप्त किया। यहाँ आपने भाषाशास्त्र, व्याकरण, सर्वदर्शन, आयुर्वेद, योग तंत्र का गम्भीर अनुशीलन किया। आपने पण्डित शुकदेव झा एवं रघुनाथ शर्मा से पाणिनीय नव्यव्याकरण, दर्शन, साहित्य और वेदान्त में निपुणता प्राप्त की और पं. दुण्ढिराज शास्त्री से न्याय तथा सांख्य शास्त्र का अनुशीलन किया। 1956 में आपने हिन्दी साहित्य का अध्ययन करने के साथ ही साथ तुलसी पर विशेष अनुसंधान किया और हिन्दी साहित्यरत्न परीक्षा उत्तीर्ण की। उस समय वाराणसी के 'आज' साप्ताहिक में काशी के मूर्धन्य विद्वानों के लेख प्रकाशित हो रहे थे। 'आज' ने 'शब्दलोक की सैर' स्तम्भ में श्रीत्रिपाठीजी के निबन्धों को 'वागीश शास्त्री' उपनाम से प्रकाशित करना आरम्भ कर दिया। इन निबन्धों में 'साढ़ा एक साढ़े दो', 'संस्कृत साहित्य में तकिया कलाम', 'नये नये सब रंग बिरंगे', 'अभ्यासवाद' आदि निबन्ध

प्रमुख थे। सन्त तुलसीदास की स्तुतियों को विद्वान् संस्कृतमय मानते थे किन्तु आपने उन्हें संस्कृत का न मानकर गाथा शैली में निबद्ध माना और गाथा की सुदीर्घ परम्परा का परिचय प्रस्तुत किया।

डॉ. वागीश शास्त्री आचार्य परीक्षा उत्तीर्ण करने के पश्चात् सन् 1959 से 1964 के मध्य तक वाराणसी के टीकमणि संस्कृत कॉलेज में प्राध्यापक रहे। इसी अवधि में आपने पं. क्षेत्रेशचन्द्र चट्टोपाध्याय के निर्देशन में प्रामाणिक अनुसंधान कार्य किया। जिस पर आपको सन् 1964 ई. में विद्यावारिधि (पी-एच्.डी.) की उपाधि प्राप्त हुई। आपके थीसिस की विशिष्टता का ऑकलन करके यू.जी.सी. ने इसी वर्ष आपके शोधप्रबन्ध के प्रकाशनार्थ अनुदान दिया तथा आपको सीनियर रिसर्च फेलोशिप प्रदान की। सन् 1969 में आपने डॉ. गौरीनाथ शास्त्री के निर्देशन में विद्या वाचस्पति(डी. लिट.)की उपाधि अर्जित की।

टीकमणि संस्कृत विद्यालय में अध्यापकीय जीवन का शुभारम्भ करने के पश्चात् आप सन् [illegible] ई. में सम्पूर्णानन्दसंस्कृत विश्वविद्यालय में अनुसंधान संस्थानके निदेशक और प्रोफेसर के पद पर नियुक्त होकर सन् 1996ई. तक कार्यरत रहे। आपने इस शैक्षणिक पद पर प्रायः तीन दशक तक उल्लेखनीय [illegible] यहाँ सारस्वती सुषमा नामक अनुसन्धान प्रधान जर्नल के 3[illegible] 28 [illegible] तक सम्पादक रहे। इस अवधि में आप विद्या परिषद्, कार्य परिषद् एवं [illegible]सभा के भी पदेन सदस्य रहे। आपके निर्देशन में देश विदेश के 4[illegible] विद्वानों [illegible] शोधकार्य पूर्ण किया।

प्रो.वागीश शास्त्री जहाँ एक उच्चकोटि के चिन्तक, विचारक और अनुसन्धाता थे वहीं वे एक मनस्वी श्रोता भी थे। एक सेमिनार की अध्यक्षता करते हुए श्रीशास्त्रीजी ने मेरे 42 मिनट लम्बे शोधपत्र को साधु-साधु कहते हुए जिस तन्मयता से सुना वह दृश्य मुझे आज भी रोमांचित कर देता है। आपके व्यक्तित्त्व की एक दुर्लभ विशेषता यह रही है कि आपने किसी को मौखिक शास्त्रार्थ हेतु नहीं ललकारा। मतवैभिन्य होने पर आप प्रतिद्वन्द्वी विद्वान् से निवेदन करते थे कि वे अपना मत लिख कर उन्हें दे दें; उसे वे 'सारस्वती-सुषमा' में अपने उत्तर के साथ प्रकाशित कर देंगे। इस प्रकार आपने जो लिखित शास्त्रार्थ किये हैं वे मौखिक शास्त्रार्थों की अपेक्षा अधिक महत्वपूर्ण और मूल्यवान् हैं। आपके कर्तृत्व की यह एक विशेषता थी कि आपने विविध विषयों के प्रकाण्ड पंडितों के लिए भी लिखा और सामान्य पाठकों के लिए भी लिखा। आपके समस्त शैक्षणिक अभिलेख और अर्हताएँ उच्चकोटि की रही हैं। आपने भाषा-विज्ञान, इतिहास और पुरातत्व विषयक अनेक मौलिक मान्यताओं की स्थापना की। अमेरिकी संस्कृत विद्वान् विलियम ड्वाइट ह्विटनी(सन् 1884ई.)ने महामुनि पाणिनि के धातुपाठ में भ्रान्त्या दोष निकाले थे। डॉ.शास्त्री ने 'पाणिनीयधातुपाठसमीक्षा' (1965) नामक ग्रन्थ लिखकर भाषा शास्त्री ह्विटनी के भ्रम तरु को समूल उखाड़ फेंका था।

प्रो.वागीश शास्त्री विश्व संस्कृत प्रतिष्ठानम् सहित अनेक संस्थाओं के संस्थापक रहे। आपने सन् 1983 ई. में 'वाग्योगचेतनापीठम्' नामक संस्था की स्थापना की और बिना रटे संस्कृत सीखने की सरल तथा वैज्ञानिक विधि का आविष्कार किया। इस विधि का नाम आपने सरल वाग्योग (निमानिक) विधि रखा। आप इस विधि से बिना रटे पाणिनीय व्याकरण का ज्ञान देते थे। इस विधि के बारे में आपने लिखा है कि 'संस्कृत वाङ्मय ज्ञान निधि का अपार पारावार है। वाग्योगविधि उस अपार पारावार का प्रवेश द्वार है। वाग्योग विधि व्याकरण नहीं अपितु विधि है। जिस प्रकार हठयोग से दैहिक नियंत्रण और राजयोग से मनोनियंत्रण होता है, उसी प्रकार वाग्योग से वाणी नियंत्रण सिद्ध होता है।' हजारों देशी-विदेशी विद्वानों ने इस शिक्षण विधि से भरपूर लाभ उठाया। प्रो. त्रिपाठी ने 'हैप्पी बर्थ डे टू यू' के स्थान पर वाग्योग विधि पर आधारित संस्कृत की निम्नलिखित सांगीतिक मंगलाशंसा प्रचलित की थी–

भव्यं, भव्यं, भव्यं, भव्यम्।
भव्यं जन्मदिनं भूयात्।
चिरं जीव्यात्, चिरं जीव्यात्, चिरं जीव्यात्।
शुभं भूयात्, शुभं भूयात्, शुभं भूयात्।

प्रो. त्रिपाठी के प्रायः 400 से भी अधिक शोध आलेख अनेक प्रतिष्ठित पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित हुए थे। आपने संस्कृत, हिन्दी, तथा अंग्रजी भाषा में 60 से अधिक मौलिक ग्रन्थों का प्रणयन और सम्पादन किया था। आपके विश्व प्रसिद्ध ग्रन्थों में संस्कृतवाङ्मय मन्थनम्', 'धात्वर्थ विज्ञानम् ' पाणिनीय धातुपाठ समीक्षा, तद्धितान्ताःकेचनशब्दः, अनुसंधानपद्धतिः, कृषकाणां नागपाशः, त्र्यंबकं यजामहे, टालस्टाय कथासप्तकम्, संज्ञाक्रियासंश्लेषिकावाक्रिया, नर्मसप्तशती, आतंकवाद-शतकम्, निसर्गसरसांजलिः, वाग्योगतन्त्रम् नादशाब्दिकम्, भारत में संस्कृत की अनिवार्यता क्यों?, नदिया एक घाट बहुतेरे, जिप्सी भाषा, संस्कृत सीखने की सरल एवं वैज्ञानिक विधि, आदि प्रमुख हैं। आपके शोध आलेख एवं आविष्कारों से युक्त ग्रन्थों में मुद्रित प्रचुर एवं प्रखर वैदुष्य निश्चय ही अभिनन्दनीय है। आपने संस्कृत शिक्षण के क्रम में फ्रांस, जर्मनी, स्विट्जरलैण्ड, ब्राजील, और रूस (मास्को) की यात्राएँ की थीं। इसके अतिरिक्त जर्मनी, कनाडा, अमेरिका, जापान तथा आस्ट्रेलिया, आदि अनेक देशों के हजारों जिज्ञासु शिष्य भी आपके चरणों में बैठकर संस्कृतज्ञ हुए हैं।

प्रो. भागीरथ प्रसाद त्रिपाठी 'वागीश शास्त्री' ने अपनी सारस्वत साधना से समस्त विश्व में भारतराष्ट्र का यशोवर्धन किया। आपको पद्मश्री सम्मान, राष्ट्रपति सम्मान, यशभारती सम्मान, विश्वभारती सम्मान, सौहार्द सम्मान, कविकुलगुरुकालिदास संस्कृत व्रती सम्मान, महर्षि व्यास सम्मान, बाणभट्ट सम्मान और 'जगद्गुरु विश्वाराध्य विश्वभारती सम्मान' सहित अनेक सम्मानों से विभूषित किया गया था। बहुमुखी प्रतिभा के धनी प्रो. त्रिपाठी आजीवन सारस्वत साधना में निरत रहे।

प्रो. भागीरथ प्रसाद त्रिपाठी ने काशी के केदारेश्वर क्षेत्र में स्थित शिवाला नामक मुहल्ले में आवास बनाया और धर्मपत्नी श्रीमती रेखा त्रिपाठी के साथ यहीं सफल गार्हस्थ्य जीवन व्यतीत किया। प्रो. त्रिपाठी कम्प्यूटर-संचालन, बाँसुरी-वादन, गंगास्नान, नौकायन, तथा देव-दर्शन आदि में भी रुचि लेते थे। आप प्रतिवर्ष अपनी जन्मतिथि आषाढ़ शुक्ल त्रयोदशी को विद्वानों, कुटुम्बियों और शिष्यवृन्द के साथ अपना जन्मोत्सव मनाते थे। आपके तीन यशस्वी सुपुत्र सर्वश्री वाचस्पति त्रिपाठी, वास्तोषपति त्रिपाठी और आशापति त्रिपाठी विभिन्न महत्वपूर्ण क्षेत्रों में कार्यरत हैं।

आपके जीवन पर कई डाक्यूमेन्ट्री फिल्में बनी हैं। आपके सम्मान में 'वाग्योग वैभवम्' नामक एक (एक हजार पृष्ठों का) अभिनन्दन ग्रन्थ विगत 12 दिसम्बर 2020 को काशीस्थ पार्श्वनाथ विद्यापीठ के भव्य सभा कक्ष में लोकार्पित हुआ था। वाग्योग चेतना प्रकाशनः शिवाला वाराणसी द्वारा प्रकाशित इस अभिनन्दन ग्रन्थ में प्रो. त्रिपाठी के अनेक महत्त्वपूर्ण शोध आलेखों के साथ लगभग सवा दो सौ विश्व-विश्रुत विद्वानों के आलेख और प्रो. त्रिपाठी के जीवन से सम्बन्धित रंगीन चित्र संकलित हैं। प्रो. त्रिपाठी का लेखन जीवन के अन्तिम कुछ दिनों को छोड़ कर प्रायः अन्त तक चलता रहा। वे डायरी भी लिखते रहे थे। आपके अनेक अप्रकाशित ग्रन्थों के साथ ही आपकी इस डायरी के भी शीघ्र प्रकाशन की योजना है।

विगत 11 मई 2022 को रात्रि में 10-13 बजे काशी में पूज्य गुरुवर पद्मश्री सम्मानित महामहोपाध्याय प्रो0 भागीरथप्रसाद त्रिपाठी 'वागीश शास्त्री' इस नश्वर शरीर को छोड़कर देवलोक की यात्रा पर निकल गए। पृथ्वी पर अनेक महामनीषी अवतीर्ण हुए हैं और आगे भी होते रहेंगे किन्तु विविध विद्याओं में डॉ. वागीश शास्त्री के जैसा वैदुष्य अन्यत्र दुर्लभ है। आपके विषय में कुछ भी लिखना सूर्य को दीपदर्शन के समान है।

• के.56/29 औसानगंज, वाराणसी । सम्पर्क - 9580127157
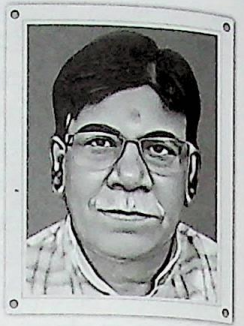
गृहस्थ संन्यासी पं. चन्द्रशेखर शुक्ल

वासुदेव उबेराय

काशी से गंगा यूँ ही नहीं बहती रहती गंगा को आकर्षण में बाँधने वाली यहाँ की तटीय शक्ति की धारा उसे अपने अंकपाश में बाँधे रहती है। यहाँ के मंदिरों, घाटों, जलाशयों और घर के आँगन से लेकर अगल-बगल के छोटे-छोटे प्रांगणों में सदा बहने वाली श्रद्धा और भक्ति के तटों के बीच जो मानस बहता है– गंगा उसका मोह नहीं छोड़ पाती। तमाम विपरीत परिस्थितियों में नाना प्रकार के दोहन, शोषण और अपमान सहती गंगा को यहाँ की भक्ति ही काशी से जोड़ रखती है। पंडितराज जगन्नाथ की भक्ति से तो यह सीढ़ियाँ चढ़कर उनका अभिनंदन करने पहुँच गई थी। वास्तव में काशी की अमूर्त प्रकाशबिम्ब स्वरूप यहाँ के अध्यात्म को जीवंत बनाए रखता है। यह शिव का ही प्रकल्प है। विभिन्न युगों में अपना आकार बदलने वाली काशी शिव पर ही अवलंबित है। यहाँ के भक्तों की शिव से सीधे रिश्ते नातेदारी है। बाबा तो सबके ही हैं। शिव के सायुज्य में गंगा के समानांतर यह भक्ति धारा भी काशी में युगों से विद्यमान है। शिव भी तो यही चाहते हैं। निर्मलता से गंगा जल का अभिषेक उन्हें प्रसन्न करता है। आडंबर युक्त पूजन उन्हें स्वीकार ही नहीं। अगर कुछ विशेष पूजन करना है तो भाव ही शिव स्वीकार करते हैं। यहाँ तक कि गंगोट से बने अंगुष्ठ भर के शिवलिंग पर हथेलियों में विराजमान होकर वे षोडषोपचार पूजन सामग्री स्वीकार करते हैं। ऐसे भोले बाबा के भक्त भी तो एक से बढ़कर एक काशी में रहते आए हैं। उन्हीं भक्तों में एक थे पण्डित चंद्रशेखर शुक्ल। आपका जन्म मिर्जापुर शहर में हुआ था। आपके पिता पं. वंशीधर शुक्ल स्वयं शिव भक्त थे और नित्य नियमित 108 पार्थिव पूजन किया करते थे। उन्हीं के घर संवत् 1953 में देवोत्थान एकादशी के दिन चन्द्रशेखर जी का जन्म हुआ

था। बचपन से पठन-पाठन में उनका मन नहीं लगता था। सप्रयास कक्षा एक दो के बाद स्कूल छूट गया तो जीविकोपार्जन के लिए मुनीबी सिखाने का उद्यम किया गया। वहीं किसी आढ़ती के यहाँ वे मुनीबी करने लगे। 12 वर्ष की अल्पायु में आपका विवाह भी कर दिया गया। विवाहोपरांत आपको आपके चचेरे भाई कलकत्ता ले गए। वहाँ वे एक [illegible] मुनीबी करने लगे परंतु लगभग तीन वर्ष बाद इनकी पत्नी का वहीं [illegible]। चन्द्रशेखर जी का मन भी उचट गया और वे वहाँ से जिद करके अकेले काशी आ गए। काशी आकर आप गायघाट के निकट त्रिलोचन [illegible] मंदिर में दर्शन-पूजन करने लगे और उन्हें अपना इष्टदेव मान लिया। मुकीमगंज में अपने मामा के यहाँ रहते थे पर अधिकांश समय गंगा-[illegible] और त्रिलोचनेश्वर महादेव की सेवा में बिताते थे। उन दिनों त्रिलोचनेश्वर मंदिर की व्यवस्था बिगड़ी हुई थी। बाबा का अर्घा यों तो पीतल का था पर काला पड़ गया था। न ठीक से शृंगार होता न आरती भोग का कुछ विशेष प्रबंध था। चन्द्रशेखर जी यहाँ बाबा के मंदिर की सफाई, व्यवस्था को ठीक करने में लग गए। कई दिन प्रयास के बाद अर्घे का पीतल दिखने लगा। धीरे-धीरे मुहल्ले के अन्य लोग भी परिचित होते गए। चन्द्रशेखर जी स्वरचित भजन गाते। बिल्वपत्र तोड़ते और बाबा पर चढ़ा देते। एक दिन इन्हें इनके परिचित भगवानदास जायसवाल इन्हें सिंधियाघाट के एक मंदिर में ले गए। वहाँ का शृंगार पूजन देखकर ये अभिभूत हो गए। अब ये त्रिलोचन के शृंगार के लिए फूल बेलपत्र द्वारा टेढ़ा-मेढ़ा माला बनाने लगे। इनके किशोरमित्र शंभुनाथ धवन अपने नाश्ते के पैसे से इन्हें कुछ फूल दिला देते थे और शृंगार पूजन में सहयोग देते थे। कुछ समय बाद वे स्थानीय विश्वेश्वर गंज में एक आढ़तिया के यहाँ मुनीबी भी करने लगे। कुछ समय मुनीबी करते पर अधिकांश समय बाबा की सेवा में बिताते।

धीरे-धीरे इनकी सहज शैली और भक्ति की धारा का प्रभाव स्थानीय लोगों पर पड़ने लगा। इनके प्रति स्थानीय लोगों में सम्मान बढ़ता ही गया। अब त्रिलोचन महादेव मंदिर का जीर्णोद्धार होने लगा। गायघाट के तमाम लोग इनके अनुगामी हो गए परन्तु ये तो अपने भक्ति भाव में ही लीन रहते थे। अपने जीवनयापन के लिए कभी किसी से याचना नहीं की और किसी ने देने की कोशिश की तो उसे झिड़क भी दिया। कालांतर में इनका एक गरीब कान्यकुब्ज कन्या से विवाह भी हो गया। परंतु जीविकोपार्जन का इनका संकल्प यथावत् बना रहा।

हाँ मंदिर और बाबा के शृंगार इत्यादि में जो सहयोग मिलता उसका व्यय वे उसी कार्य में करते रहे। बाबा की शयन का पलंग, पीतल का नक्काशीदार कटघरा, मुकुट सिल्वर व चाँदी की मूर्तियाँ सब मंदिर के भण्डार की वृद्धि ही करती गईं।

इनके भजनों का संकलन लोग करने लगे। सबसे पहले "शैव प्रमोद" के नाम से गोपाल दास खन्ना के प्रयास से एक ग्रंथ 1921 में प्रकाशित हुआ। यह पुस्तक अब अप्राप्य है। इसे इन्होंने मैथिली शरण गुप्त को भेंट भी किया था। काशी के भक्तों, संतों में आपकी भावभूमि को बराबर सम्मान की दृष्टि से देखा गया।

त्रिलोचनेश्वर महादेव ही आपके इष्ट थे और जो भजन रचे जाते थे उसे यह उन्हीं का कृपा प्रसाद मानते थे। वे कहा करते थे– यह महामंत्र है। सीधी सरल भाषा में उनका निवेदन ऐसा ही था।

"चढ़ते उपहार हैं चरणों में दिन रैन दयामय लाखों के
हम लाए हैं स्वीकृत करिए दो बूँद विमल जल आँखों के।

इसी भजन के अंत में है–

नहिं तुष्ट आप होते उन वेद संहिता पाठों से
जितने बेढब-बेतुक-विनीत सुनकर शशिशेखर भाखों से

उनके तीन पुत्र और एक पुत्री थी। बड़े पुत्र का विवाह हुआ और कुछ ही माह बाद वो बीमार हो गया। परिवार के अन्य सदस्य उसकी कलकत्ता में चिकित्सा में लीन थे परंतु ये उसे छोड़कर नवद्वीप चले गए और संकीर्तन में ही लगे रहे। कुछ ही दिनों में उसकी इहलीला समाप्त हो गई। अस्थि अवशेष लेकर परिजन काशी आए।

दूसरा पुत्र तो आठ [illegible] का ही था कि वह शेष हो गया। उस दिन शुक्रवार था। उनके घर पर [illegible] होता था। उसकी उखड़ी साँसें चल रही थीं। उसे जमीन पर [illegible] जी मंडली के साथ भजन करते रहे। भजन समाप्ति के [illegible] प्राण पखेरू उड़ गए।

सबसे छोटे राम शरण जब 9 वर्ष के हुए इनके विवाह की तैयारियाँ हो रहीं थी। स्वयम् उन्होंने सभी को निमंत्रण भी दिया।

निमंत्रण देने के लिए वे मीरजापुर से काशी आए उस दिन भी शुक्रवार ही था। परिवार के अन्य लोग तो वापस चले गए पर ये काशी में रुक गए क्योंकि भजन होना था। उस दिन भजन में उन्होंने गाया–

तेरी माया ने ए भाई बसाई खूब बस्ती है
दिखाई स्वप्न के संसार में मैं तू कि हस्ती है
अभी सेहरा बँधा वर था बनी बारात भी संग थी
अभी ही आ गया यमराज का वारंट दस्ती है।

इस लाइन को सुन कर मंडली ठिठक गई। बात आई गई हो गई। मीरजापुर में शादी की तैयारियाँ हो रही थीं, मड़वा गड़ गया था तीसरे दिन बारात जाना था, उसी दिन राम शरण को तेज बुखार आया, चिकित्सा शुरू हुई। कुछ ही क्षणों में माता के दर्शन लक्षण में आ गए। उपचार होता रहा और हालत बिगड़ती गई। एक सप्ताह में वह भी शिवलोक चला गया। ये सब साधारण घटनाएँ नहीं हैं परन्तु शुक्ल जी के चेहरे पर शिकन नहीं थी। घाट से लौटकर बड़े ही उमंग के साथ शिवकीर्तन में लग गए। उस समय का भजन भी बानगी ही है।

कोई घर जाए तो बाबा मैं क्या करूँ
कोई हर जाए तो बाबा मैं क्या करूँ?
ऐसे मौके पे देके दगा बेतरह
कोई टर जाए तो बाबा मैं क्या करूँ?
करके शादी की पूरी तैयारी भली
कोई मर जाए तो बाबा मैं क्या करूँ?

एक बार इसी विषय में वे महामृत्युंजय मंदिर के बड़े महंत जी (पं. त्र्यंबक नाथ के दादा जी) से वार्ता छिड़ी थी तो उन्होंने इनको मनुष्य कोटि से इतर बताया था। काशी के अन्य धार्मिक और संत भी इन्हें श्रद्धा की दृष्टि से देखते थे। महामृत्युंजय मंदिर में उनके भजनों को संगमरमर पर मढ़वा कर लगाया गया है जो आज भी दर्शनीय है। स्वयं त्र्यंबक नाथ शास्त्री जी इनकी मणिमाला के भजनों को रोज मंदिर में बैठकर पाठ किया करते हैं। इनके भजनों के संग्रह भार्गवभूषण प्रेस द्वारा 11 खण्डों में प्रकाशित हैं। मणिमाला एक से लेकर ग्यारह शीर्षक में इनके अधिकांश भजन संकलित हैं।

गृहस्थ होते हुए वैरागी और संन्यासी सा व्यवहार और निरंतर शिवनाम में रमे रहना इनकी जीवन शैली बनी रही।

• सी-8/155, गढ़वासी टोला, वाराणसी । सम्पर्क - 9452207888

कविता में बनारस

संपादक : राजीव सिंह
प्रकाशक : राजकमल प्रकाशन प्रा. लि., 1-बी, नेताजी सुभाष मार्ग, दरियागंज, नई दिल्ली-110002, मूल्य रु. 229/-

काशी विश्वप्रसिद्ध सांस्कृतिक नगरी होने के साथ साहित्य की साधना भूमि भी रही है। कबीर से लेकर आज तक न जाने कितनी धारायें प्रवाहित होती रही हैं जिन्होंने साहित्य को नई दिशा प्रदान की है। प्रतिष्ठित पत्रिका 'कल्पना' तथा 'उत्तर प्रदेश' के काशी अंक सहित तमाम पत्रिकाओं ने काशी को केन्द्र में रखकर विशेषांक प्रकाशित किये हैं। बनारस से प्रकाशित मासिक पत्रिका 'सोच विचार' अपने प्रवेशांक से लेकर आज तक प्रति वर्ष एक महत्त्वपूर्ण काशी अंक देती रही है। इस वर्ष जुलाई में इस पत्रिका का 13वाँ काशी अंक प्रकाशित हो रहा है। इन विशेषांकों में काशी के पौराणिक, आध्यात्मिक एवं ऐतिहासिक महत्त्व के साथ बनारस से जुड़ी कविता, कहानी, उपन्यास, संस्मरण डायरी, नाटक भी पाठक को प्राप्त होते रहे हैं। हिन्दी के साथ अन्य भारतीय भाषाओं तथा विदेशी कवियों एवं शायरों को यह नगरी हमेशा लुभाती रही है। जो भी यहाँ आया, उसके कविता संसार को यहाँ की शोभा ने कुछ समृद्ध अवश्य किया है। साहित्य का गहरा संस्कार लिए, बनारस को अच्छी तरह जान-समझ चुके राजीव सिंह ने बनारस पर लिखी कविताओं का एक साथ संपादन कर स्तुत्य कार्य किया है। इस कार्य को करने का विचार अन्य लोगों में भी आता रहा है और कुछ लोग तो इस दिशा में आगे भी बढ़ गये हैं पर इसकी सार्थक पहल राजीव जी ने की है, अतएव उन्हें बनारस की ओर से बहुत-बहुत बधाई।
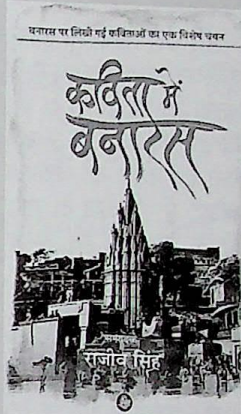
संकलन में कबीर से लेकर गार्गी मिश्र तक कुल 39 कवियों की कविताओं के साथ 15 उर्दू के, दो बांग्ला के और एक स्पेनिश कवि की कविताएँ संकलित की गई हैं। हिन्दी के भक्तिकाल के कवियों में कबीर, रैदास और तुलसी की कविताएँ दी गई हैं। नवजागरण के अग्रदूत काशी के भारतेन्दु हरिश्चन्द्र का गंगावर्णन और देखी तुमरी काशी जैसी प्रसिद्ध कविताएँ हैं। जयशंकर प्रसाद की 'अरी वरुणा की शांत कछार' से लेकर शमशेर बहादुर सिंह, त्रिलोचन, केदारनाथ सिंह, राजेश जोशी जैसे नई कविता के कवियों की प्रतिष्ठित कविताएँ संकलित हैं। प्रायः प्रत्येक कवि की एक या दो प्रतिनिधि कविताएं ही दी गई हैं किन्तु ज्ञानेन्द्रपति की कुल चार कविताएँ संकलित हैं। ज्ञानेन्द्रपति की 'गंगातट' और गंगा बीती' संग्रह की सभी कविताएँ बनारस से सन्दर्भित हैं। उर्दू कवियों में 17वीं शताब्दी के कवि वली दकनी के साथ शेख अली हज़ी, गालिब, हातिम अली मेहर, वाजिद अली शाह 'अख्तर', अकबर इलाहाबादी, वामिक जौनपुरी, नज़ीर बनारसी और वर्तमान के रियाज़ लतीफ एवं रविश बनारसी की कविताएँ बनारस की अलग-अलग छटा को प्रस्तुत कर रही हैं। बांग्ला मंगल एवं मणिकर्णिका शीर्षक कविताएँ भी संकलित की गई हैं। एक अच्छी कविता स्पेनिश कवि होर्हे लुईस बोर्हेस की बनारस है। प्रस्तुत संग्रह में बनारस पर लिखी ढेर सारी कविताएँ संकलित की गई हैं फिर भी अभी बहुत कुछ बचा हुआ है। गंगा की लहरों की तरह कविता की यह धारा भी निरन्तर प्रवाहित है।

• डॉ. रामसुधार सिंह
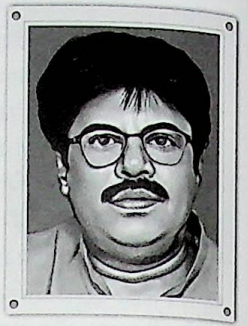
उत्तर प्रदेश : बजट एवं काशी

(वर्ष 2022-23)

अनूप कुमार मिश्र

उत्तर प्रदेश के वर्ष 2022-23 के बजट के लिये छह लाख 15 हजार 518 करोड़ का आवंटन किया गया। 1 ट्रिलियन डालर इकॉनोमी के लक्ष्य के साथ बजट का यह आकार अबतक का सर्वाधिक है। 94 हजार 830 करोड के प्रावधान पूर्व के संकल्प पत्र को पूर्ण करने के अलावा 44 नये संकल्पों को पूर्ण करने की भी परिकल्पना इस बजट की विशेषता है। योगी सरकार के दूसरे कार्यकाल के इस बजट में विकास के साथ साथ किसानों, गरीबों, महिलाओं और वंचितों के कल्याण हेतु अनेक योजनाओं के मदों में वृद्धि की गयी है। धर्म, संस्कृति, शिक्षा, स्वास्थ्य, परिवहन और पर्यटन के क्षेत्रों पर ध्यान केंद्रित करने वाला यह बजट दिखाई पड़ रहा है। शिक्षा, स्वास्थ्य और कृषि क्षेत्र में पीपीपी माडल के प्रवेश का रास्ता साफ करते हुए इस बजट में गुणवत्ता और रोजगार के नये अवसर पैदा करने पर जोर दिया गया है। बजट मे 5 एक्सप्रेस-वे वाला देश का पहला प्रदेश बन जाने का ऐलान और लखनऊ एवं वाराणसी में वर्तमान अन्तर्राष्ट्रीय हवाई अड्डों तथा कुशीनगर में नवीन अन्तर्राष्ट्रीय हवाई अड्डे के साथ ही जेवर में नोएडा ग्रीन फील्ड अन्तर्राष्ट्रीय हवाई अड्डा और अयोध्या में मर्यादा पुरुषोत्तम श्रीराम अन्तर्राष्ट्रीय हवाई अड्डे के साथ उत्तर प्रदेश में 5 अन्तर्राष्ट्रीय एयरपोर्ट वाला देश का पहला प्रदेश बन जाने की आकांक्षा सरकार की विकास के प्रति प्रतिबद्धता दर्शाता है। हालाँकि बजट मे केंद्र की योजनाओं पर ज्यादा आश्रितता दिखाई पड़ रही है और इतने बडे बजट के लिए आय के सृजन पर कोई खास स्पष्टता नहीं है। कुल मिलाकर कहा जा सकता है कि उत्तर प्रदेश सरकार केंद्र के साथ तालमेल करते हुए प्रदेश में आर्थिक सुधारों को लागू करते हुये सबका साथ लेते हुये सबका विकास करते हुये सबका विश्वास जीतना चाहती है।

बजट में पूर्वांचल और काशी

वर्ष 2022-23 के प्रदेश के बजट में वाराणसी के हिस्से विकास और कल्याण हेतु लगभग 1200 करोड़ का प्रत्यक्ष मद आवंटित हैं और साथ ही अन्य योजनाओं का भी अप्रत्यक्ष लाभ वाराणसी को मिलने की संभावना है। काशी की महत्ता एवं बदलते स्वरूप के मद्देनजर यहाँ की सुविधाओं के विस्तार पर यह बजट गंभीर दिखाई पड़ रहा है। काशी [illegible] और गंगा दर्शन की सुगमता के लिए राजमार्ग बनाने के लिए [illegible] करोड़ रुपए का प्रस्तावित बजट इसका प्रत्यक्ष उदहारण है। यह फोर लेन राजमार्ग गंगा घाट के विपरीत राजघाट पुल से रामनगर तक बनाया जाएगा। यही नहीं केंद्र सरकार के स्मार्ट सिटी प्रोजेक्ट के लिए भी वाराणसी को लगभग 200 करोड़ रुपए का बजट राज्य सरकार देगी। साथ ही श्रद्धालुओं एवं पर्यटकों के सुविधा हेतु वाराणसी में रोप-वे परियोजना के लिए 82 करोड़ रुपए के प्रोजेक्ट का भी बजट में प्रस्ताव है। वाराणसी में पर्यटन सुविधाओं के विकास और सौंदर्यीकरण के लिए 100 करोड़ रुपए का बजट प्रस्तावित है और सारनाथ डीयर पार्क में वन्य जीवों के प्रबंधन और पर्यटक सुविधाओं का विकास किया जाएगा। वाराणसी को आध्यात्मिक नगरी के साथ आधुनिक स्वरूप प्रदान करने के लिए भी बजट तत्पर दिखाई पड़ रहा है। इसके लिए वाराणसी और गोरखपुर में लाइट मेट्रो परियोजना के लिए 100 करोड़ रुपए का बजट प्रस्तावित किया गया है। काशी में माँ गंगा के निर्मलीकरण के सतत प्रयास में जुटी सरकार ने नमामि गंगे परियोजना के 97.42 करोड़ रुपए के बजट से काशी में भी गंगा निर्मलीकरण के लिए आवंटित किया।

वाराणसी को इस बजट में मात्र धर्म, अध्यात्म और पर्यटन की दृष्टि से ही नहीं आंका गया है बल्कि वाराणसी के गावों, किसानों, महिलाओं एवं युवाओं के लिए भी कुछ न कुछ उत्तर प्रदेश की सरकार करती हुई दिखाई पड़ रही है। वाराणसी और मेरठ में निर्माणाधीन ग्रीन फील्ड डेयरी परियोजना के लिए 79.82 करोड़ रुपए की व्यवस्था प्रस्तावित की गई है।महिलाओं की सुरक्षा के लिए वाराणसी में सेफ सिटी योजना पर काम होगा तथा वाराणसी में अंतरराष्ट्रीय स्तर का क्रिकेट स्टेडियम बनाया जाएगा जिसके लिए जमीन खरीदने के लिए 95 करोड़ रुपए खर्च किए जाएंगे। खेलो इंडिया एक जनपद-एक खेल योजना के तहत वाराणसी में खेलो इंडिया सेंटर की स्थापना की जाएगी। मुख्यमंत्री बुनकर योजना के तहत जिले के हथकरघा और पॉवरलूम बुनकरों को सोलर इनवर्टर दिए जाएंगे। संपूर्णानंद संस्कृत विश्वविद्यालय में मुफ्त ऑनलाइन संस्कृत प्रशिक्षण देने के लिए ऑनलाइन संस्कृत प्रशिक्षण केंद्र खोला जाएगा। इसके लिए 1.16 करोड़ रुपए का बजट प्रस्तावित है। वाराणसी में संत रविदास संग्रहालय एवं सांस्कृतिक केंद्र और संत कबीर संग्रहालय के लिए 50 करोड़ रुपए का बजट प्रस्तावित है। बुजुर्ग पुजारियों, संतों और पुरोहितों के समग्र कल्याण की योजनाओं के क्रियान्वयन हेतु बोर्ड के गठन का प्रस्ताव है। इसका लाभ वाराणसी के पुजारियों, संतों और पुरोहितों को भी मिलेगा।

ओडीओपी स्कीम से भी वाराणसी को होगा लाभ

इसके अलावा प्रदेश सरकार अपनी वन डिस्ट्रिक्ट वन प्रोडक्ट स्कीम का भी तेजी से दायरा बढ़ा रही है। इसी के तहत सरकार ई-कॉमर्स पोर्टल लांच

करने जा रही है। जहां पर ओडीओपी से जुड़े कारीगर अपने उत्पादों की ऑनलाइन बिक्री कर सकेंगे। इस समय अमेजन, फ्लिपकार्ट, ईबे जैसे ई-कॉमर्स पोर्टल पर ओडीओपी के 11 हजार उत्पाद जुड़े हुए हैं। जिनके तहत उत्तर प्रदेश के 2022-23 के बजट के विभिन्न योजनाओं पर प्रस्तावित व्यय एवं अपेक्षित निवेश धरातल पर उतर जाये तो निश्चित तौर पर प्रदेश में व्याप्त बेरोजगारी की दर में व्यापक कमी आएगी, क्षेत्रीय विषमताएं कम होंगी, पूर्वांचल एवं बुंदेलखंड इलाकों में भी औद्योगिक विकास का रास्ता खुलेगा और उत्तर प्रदेश भारत की अर्थव्यवस्था के इंजन के रूप में अपनी श्रेष्ठता सिद्ध करने में सफल होगा। वर्ष 2022-23 के बजट में विभिन्न औद्योगिक परियोजनाओं पर मद बढ़ाये गये हैं यथा मेगा फूड पार्क, ट्रांस गंगा सिटी, प्लास्टिक सिटी, गारमेन्ट पार्क, लॉजिस्टिक्स हब, अप्रैरेल पार्क, टॉय पार्क, हस्तशिल्प पार्क, फ्लैटेड फैक्टरियां आदि पर जोर देना और प्रदेश के सभी जनपदों के उत्पादों एवं पारम्परिक शिल्पों के समग्र विकास हेतु संचालित एक जनपद- एक उत्पाद के प्रभावी क्रियान्वयन करने की [illegible] बजट के सर्वांगीण स्वरूप को दर्शाता है। इन सबका सीधा लाभ वाराणसी को भी मिलेगा।

उत्तर प्रदेश के वर्ष 2022-23 के बजट आने के तुरंत बाद प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी ने तीसरी ग्राउंड ब्रेकिंग सेरेमनी में 80 हजार करोड़ से [illegible] के निवेश वाली 1406 परियोजनाओं का शिलान्यास कर उत्तर प्रदेश को विकसित राज्य बनाने का पंख लगा दिया ।अब तीसरे ग्राउंड ब्रेकिंग सेरेमनी के जरिए प्रदेश में डेटा सेंटर से लेकर यूनिवर्सिटी व डेयरी प्लांट तक लगने जा रहे हैं। सर्वाधिक 805 एमएसएमई के प्रोजेक्ट स्थापित होंगे। इसके बाद कृषि, फार्मास्यूटिकल्स और मेडिकल सप्लाई, शिक्षा, डेयरी व पशुपालन के प्रोजेक्ट शामिल हैं। इन प्रोजेक्टों के धरातल पर उतरने पर प्रदेश में पांच लाख रोजगार के नए अवसर सृजित होने की उम्मीद जताई जा रही है। हाँलाकि तीसरे ग्राउंड ब्रेकिंग सेरेमनी में एक बार फिर निवेशकों ने पश्चिमी उत्तर प्रदेश को ही अपना फेवरेट डेस्टिनेशन माना और कुल प्रस्तावित निवेश का लगभग 74 प्रतिशत उसी के हिस्से जाता दिखाई पड़ रहा है परंतु फिर भी पूर्वांचल के हिस्से कुल प्रस्तावित निवेश का लगभग 12 प्रतिशत आना एक उत्साहवर्धक संकेत है। निश्चित तौर पर निवेश का कुछ हिस्सा वाराणसी में होगा जिससे वाराणसी के युवाओं को रोजगार मिलने की संभावना है और साथ ही उद्यमिता विकास को भी बल मिल सकता है। उत्तर प्रदेश में क्षेत्रीय विषमता को दूर करने हेतु औद्योगिक विकास में समानता जरूरी है। विगत 5 वर्षों में पूर्वांचल में अवस्थापना सुविधाओं में विस्तार ने ही इस वर्ष निवेशकों का ध्यान खींचा है और अनेक सेक्टर्स में निवेश करने के लिए निवेशक आगे आये हैं। हम कह सकते हैं कि डेमोग्राफिक स्थिति को देखते हुये जिस प्रकार भारत के विकास हेतु उत्तर प्रदेश का विकसित होना जरूरी है उसी प्रकार यदि उत्तर प्रदेश को विकसित करना है तो पूर्वांचल को विकसित करना नितांत आवश्यक है। सड़कों, हवाई अड्डों और अन्य बुनियादी सुविधाओं के साथ साथ पूर्वांचल में शिक्षा, स्वास्थ्य, कृषि, उद्यमिता और ग्रामीण विकास पर ध्यान केंद्रित करना होगा ताकि अगले ग्राउंड ब्रेकिंग सेरेमनी मे पूर्वांचल प्रभावी ढ़ग से निवेशकों का ध्यान आकर्षित कर पाये। हम कह सकते हैं कि उत्तर प्रदेश का वर्ष 2022-23 का बजट एवं तीसरा ग्राउंड ब्रेकिंग सेरेमनी दोनों मिलकर प्रदेश के आर्थिक विकास के लिए डबल बूस्टर का कार्य करेगी और उत्तर प्रदेश भारत के विकास का इंजन बनकर विकास दर एवं रोजगार सृजन में अपना अहम् योगदान देगा।

● प्रोफेसर एवं अध्यक्ष अर्थशास्त्र विभाग
डीएवी पीजी कॉलेज, काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी
सम्पर्क 9415372059

महाश्मशान

सुरेन्द्र वाजपेयी

1

जग की माया,
कंचन काया,
जरि जाई संसारा,
साधो! राम-नाम आधारा।

चार कहार ले चले पालकी
नइहर छाई उदासी रे!
संगी-साथी दुनिया छूटी
पिया मिलन की प्यासी रे!
रिश्ता-नाता,
सगा न कोई,
साधो! प्रेम सगा है न्यारा।

करनी-कथनी हँसती-रोती
तन में आग लगाई रे!
चटक-चटक कर चट-चट
चटके
धुआँ-धुआँ उड़ि जाई रे!
गंगा तीरथ,
चार पदारथ,
साथी किसका कौन सहारा?

जीती बाजी हार गया मन
हाथ बँधे ना पानी,
सत् को समझे, शिव को गुन
ले
सुंदर बने कहानी,
घट-घट है,
बस घाट सरीखा,
साधो! मिलता जहाँ किनारा।

2

जल जाए जग सारा,
लेकिन प्यार नहीं जला करता है,
जो जैसा है करता, वैसा भरता है।
कैसी है यह लपट राग की
काया कपड़े बदल रही है,
राम-नाम की चादर ओढ़े
यादें जैसे पिघल रही हैं,
अकथ कहानी तेरी-मेरी,
विरह-मिलन का दीपक, जलता-बुझता है।

रही अधूरी कितनी बातें
संगी-साथी छूट रहे हैं,
जीते जितना हार गए हैं
कई सिलसिले टूट रहे हैं,
लिपट-लिपट कर लपटों से,
जब धुआँ-धुआँ बेसुध, किस्सा कहता है।

मन दुनिया के मझधारों में
मन को कैसे समझाएँ,
तन की सुध ना रही मुक्ति की
वादे संग के भरमाएँ,
प्रेम न छूटे प्रेम न टूटे,
प्रेम बिना घर सूना-सूना लगता है।

● हिन्दी प्रचारक संस्थान, पिशाचमोचन, वाराणसी | सम्पर्क 9889985696

काशी अंक 13

महापथ

सुधाकर अदीब

भगवान विश्वेश्वर की नगरी काशी। काशी विश्वनाथ के नाम से जाना जाने वाला भारत का एक प्राचीनतम नगर। कहते हैं कि इस नगरी को कभी भगवान शिव ने ही स्वयं बनाया था। आज से 2500 वर्ष पूर्व यही स्थान श्री आदि शंकराचार्य को भी संस्कार देने वाला सिद्ध हुआ। जगदम्बा और जगदीश्वर दोनों ने उस युग में जगद्गुरु को काशी में ही अपना आशीर्वाद दिया। उन्हें अद्वैत-वेदांत के दर्शन के मध्य यह भी सिखाया कि मनुष्यों की आस्था सर्वोच्च है। आस्था होगी तभी वे परम सत्य तक पहुँच सकेंगे। साथ ही सृष्टि के आदि पुरुष आदि नारी के बिना अधूरे हैं। शक्ति के बिना शिव शव मात्र हैं।

वरूणा, अस्सी, गंगा के द्वारा दुलारे जाने वाले वाराणसी नगर की महिमा अपार है जो आस्थावानों को गढ़ता है, नास्तिकों को भी नमन करता है। साथ ही एक से एक विद्वानों और मनीषियों को उत्पन्न करता है। जो जगत और जगद्गुरुओं को भी प्रेरणा देता है।

सनातन धर्म के पुनरुद्धारक जगद्गुरु श्री आदि शंकराचार्य को फिर काशी कैसे गले न लगाती। बाल-संन्यासी शंकर अब 12 वर्ष की आयु वाले हो चले थे और वे लगभग तीन माह काशी में रह चुके थे। अंततः दो बड़ी विलक्षण घटनाएं काशी में उनके जीवन में घटीं। एक ने उनकी सोच बदली। दूसरी ने उन्हें एक तपस्वी से संत में परिवर्तित कर दिया।

एक बार प्रातःकाल जब वे काशी की किसी गली में से होकर जा रहे थे उन्हें एक विलाप करती हुई स्त्री दिखाई दी। वह स्त्री भूमि पर बैठी बीच रास्ते में रो रही थी। विशेष बात यह कि उसके पति की आकस्मिक मृत्यु हो चुकी थी और वह अपने पति का शव लिये रो रही थी। शव का सिर उसकी गोद में था। उस अभागिन नारी के कारण रास्ता अवरुद्ध था।

शंकराचार्य और उनके अनुयायी सब सकते में थे। क्या कहें? क्या करें? आखिर शंकराचार्य स्वयं बोले-

"माँ!... हमें रास्ता दो, ताकि हम निकल सकें।" वह विलाप करती स्त्री इतनी बेहाल थी कि उसने संन्यासी शंकर की बात पर कोई ध्यान नहीं दिया। शंकराचार्य ने उससे पुनः शव को बीच मार्ग से हटाने का अनुरोध किया।

इस पर उस स्त्री ने रोषपूर्वक सिर उठाकर शंकराचार्य को देखा। कहा- "महात्मन्! आप शव से ही क्यों नहीं कहते कि वह हट जाए?" शंकर चकराकर बोले-

"भला शव कहीं हट सकता है? वह तो प्राणविहीन है। उसमें हटने की शक्ति कहाँ रही?"

इस पर वह स्त्री रुदन छोड़ अट्टहास कर बोली- "क्यों शंकर!... तुम्हारे मतानुसार तो शक्ति से निरपेक्ष ब्रह्म ही जगत का कर्ता-धर्ता है। फिर शक्ति के बिना शव क्यों नहीं हट सकता?"

यह सुनकर शंकराचार्य विचारमग्न हो गए और उधर वह स्त्री और शव दोनों अचानक उनके सामने से अदृश्य हो गए।

शंकर समझ गए कि आद्यशक्ति स्वरूपा माँ जगदम्बा स्वयं उनके प्रबोधन हेतु उस स्त्री के रूप में इस मृत्युलोक में लीला हेतु उपस्थित हुई थीं। इस प्रबोधन ने शंकर की सोच में एक क्रांतिकारी-परिवर्तन का सूत्रपात किया। उन्हें अनुभव हुआ कि भगवान शिव की शक्ति भगवती पार्वती ही इस जगत की सृष्टि, स्थिति और प्रलय का कारण हैं।

परम ब्रह्म भले ही अंतिम सत्य हों और ब्रह्मा, विष्णु, महेश उनके अंशभूत। किंतु शक्ति के बिना वे त्रिदेव भी श्रीहीन हैं। शक्ति संयुक्त होकर ही वे इस सृष्टि को उत्पन्न करने, उसका पालन करने और उसका संहार करने में समर्थ हो सके हैं।...

शंकराचार्य को इस अलौकिक अनुभव ने उनकी [illegible] रचना 'सौंदर्य लहरी' के सृजन की प्रेरणा दी जो कि शक्ति स्वरू[illegible] प्रति उनकी आस्था को प्रदर्शित करती है। इसमें शिव की पत्नी [illegible] में देवी माँ के शारीरिक सौंदर्य का तो वर्णन है ही, उनके मह[illegible] द्वारा उन्हें सिखाई गई योग साधना की प्रक्रिया और परिणामों [illegible]तिक वर्णन मिलता है।

शंकराचार्य 'सौंदर्य लहरी' के प्रथम श्लोक में ही [illegible] शिवः शक्त्या युक्तो यदि भवति शक्तः प्रभवितुं न चेद्देवं देवो न खलु [illegible]न्दितुमपि। अतस्त्वामाराध्यां हरिहरविरंच्यादिभिरपि प्रणन्तुं स्तो[illegible] वा [illegible]थमकृतपुण्यः प्रभवति।।"

अर्थात् ईश्वर जब शक्ति-संयुक्त होते हैं तभी संसार की रचना होती है। शक्ति को धारण किए बिना स्पंदन तक होना संभव नहीं है। सृष्टि के रचयिता, पालनकर्ता, संहारक ब्रह्मा-विष्णु-महेश तीनों जिसको प्रणाम करते हैं उसकी पूजा (मुझ जैसा) गुणहीन व्यक्ति भला कैसे कर सकता था? दूसरे शब्दों में शंकराचार्य यह कहकर देवी माँ के समक्ष अब तक उनकी उपेक्षा करने के लिये पश्चात्ताप व्यक्त करते हैं।

इस रचना के आगे के श्लोकों में बहुत भावमय विवरण हैं। कुंडलिनी जागृत करने वाले ध्यान-योग के अनुभवों के भी सूक्ष्म संकेत विद्यमान हैं। यथा -

"मूलाधार में पृथ्वी, मणिपुर में जल, स्वाधिष्ठान में अग्नि, अनाहत में वायु, विशुद्ध में आकाश और भौंहों के मध्य में मन स्थित है। हज़ार पुष्पदल वाले कमल में आप अपने पति के साथ विहार करती हैं।"

इसी क्रम में शंकराचार्य ने 'सौंदर्य लहरी' में लिखा कि -

"अमृत धाराओं की वर्षा से, जो आपके दोनों चरणों से टपकती है, चक्रदार ऊँचाई से आप अपनी भूमि पर उतरती हैं। आप स्वयं को सर्पिणी के सदृश आकृति में करके कमल के मूल के सूक्ष्म छिद्र में सोती हैं।"...

आगे चलकर आदि-शंकराचार्य के कार्यों में शक्तिपीठों की आराधना अथवा उनकी स्थापना का भी लक्ष्य जुड़ गया। आद्यशक्ति की प्रेरणा से यह तो होना ही था।

इसके आगे कुछ ही दिनों बाद आदि-शंकराचार्य महाराज को एक और बड़ा अनुभव हुआ जिसने उनके ब्राह्मण-संस्कारों में निहित भेदभाव जनित-दर्प का दमन कर उन्हें एक समदर्शी संत के रूप में रूपायित कर दिया।

संन्यासी शंकर उस दिन अपने शिष्य पद्मपाद और सखा उद्भ्रांत के साथ मध्याह्न समय में गंगा जी की ओर एक संकरे मार्ग से जा रहे थे। सामने से उन्हें शवदाह स्थल का एक चाण्डाल आता दिखा। साथ में उसके चार खूंखार कुत्ते भी चल रहे थे। वह चाण्डाल बड़ा लंबा-तड़ंगा और भयावह था। बड़े-बड़े कांधों तक बिखरे हुए बाल। बेतरतीब अनेक दिनों की बढ़ी हुई दाढ़ी-मूँछ। लाल आँखें। माथे पर त्रिपुंड। नंगा शरीर। कमर से बंधा एक मैला-कुचला सा उत्तरीय। दिन में ही मद्यपान किये। लहराता-झूमता एक विचित्र-सा धूल-धूसरित व्यक्ति।

उसे देखते ही पद्मपाद चिल्लाया - "दूर हटो, दूर हटो।"

परंतु यह सुनकर भी वह चाण्डाल रुका नहीं। पास आता गया। उसी तरह बेपरवाह। अपनी मस्ती में झूमता-लहराता। जब वह अपने कुत्तों सहित शंकराचार्य महाराज के अति निकट आ गया तो स्वयं महाराज जी से भी नहीं रहा गया।

अस्पृश्यता-बोध उनमें से अब तक गया नहीं था, जो कि जातिगत भेदभाव का चरम होता है।

शंकराचार्य भी हाथ हिलाकर चाण्डाल से बोले - "हट परे..."

चाण्डाल तुरंत बोला - "किसे परे हटाना चाहते हो आचार्य शंकर! इस शरीर को अथवा इसके भीतर की आत्मा को?... क्या तुम्हारे भीतर का और मेरे भीतर का आत्मतत्त्व दोनों भिन्न हैं?... तुम तो शास्त्रज्ञ संन्यासी हो। अब तो गुणी जन और साधु समाज से भी पूजित और प्रशंसित हो। फिर भी तुममें मिथ्या जाति अभिमान और ये पवित्रता बोध?... ये भेदभाव मूलक प्रवृत्ति अभी भी तुममें शेष है?..."

यह कहकर वह चाण्डाल आकाश की ओर मुँह उठाकर हँसा और पुनः झूमता हुआ उसी तरह आगे को चल दिया। शंकराचार्य, पद्मपाद, उद्भ्रांत सभी [illegible] स्वयं हट गए।

आदि शंकराचार्य ने देखा कि - वे चार कुत्ते तो आगे चले गए थे। मगर वह विचित्र चाण्डाल अपने भारी भरकम डग भरता अभी भी चला जा रहा था।

शंकर [illegible]ना ने त्वरित प्रतिक्रिया की। उन्हें अहसास दिलाया कि चारों [illegible] थे वे चारों कुत्ते। शंकर लज्जित हुए कि दर्पजनित क्रोध का अंश अब भी जाने कैसे उनमें शेष था? जबकि काम-लोभ-मोह आदि विकार तो कब के तिरोहित हो चुके थे।... यह चाण्डाल भी साक्षात् भगवान शिव ही हैं और आज कुछ प्रबोधन देने उनके सामने प्रकट हुए हैं।... कदाचित् उनके संन्यासी हो जाने के बावजूद उनकी उस विभेद मूलक दृष्टि को इंगित करने हेतु जो मानव को मानव से पृथक करती है?

शंकराचार्य उस चाण्डाल के पीछे दौड़े। पुकारते हुए आर्त स्वर में - "हे प्रभु!... तनिक रुकिये।"

चाण्डाल रुका और पलटकर शंकराचार्य को देखकर मुस्कुराया। बोला - "हाँ... कहो वत्स!"

शंकर के नेत्रों से आँसू बहने लगे। बोले -

"मुझसे बड़ी भूल हो गई... मुझे क्षमा कर दें हे विश्वेश्वर!... आप जो इस अकिंचन को अपना दिव्य-दर्शन देने यहाँ चाण्डाल रुप में पधारे हैं। अब मैं भली-भाँति समझ गया हूँ कि - जो चेतना जाग्रत, स्वप्न, सुषुप्ति तीनों अवस्थाओं के ज्ञान को प्रकट करती है, जो चेतना आप चैतन्य विष्णु, शिव आदि देवताओं में स्फुरित होती है वही चेतना चींटी इत्यादि क्षुद्र जीवधारियों तक में स्फुरित है।... जिस दृढ़ प्रज्ञावान पुरुष की दृष्टि में समस्त विश्व आत्मरूप से प्रकाशित हो रहा है, वह चाण्डाल हो अथवा द्विज हो, वह मेरा गुरु है। अब से यह मेरा दृढ़ विश्वास है।"

ऐसा कहते हुए शंकराचार्य की रचना 'मनीषा पंचकम्' का बीजवपन हो गया। तब शंकराचार्य को बाघंबर लपेटे त्रिशूलधारी चंद्रमा, सर्पहार इत्यादि से सुसज्जित भगवान शंकर के साक्षात् दर्शन हुए। जबकि कुछ दूर पर खड़े पद्मपाद और उद्भ्रांत को वह व्यक्ति चाण्डाल ही दिखा। वे कुछ समझ न सके कि गुरुदेव को अचानक ये हो क्या गया? काहे वे उस उद्दण्ड व्यक्ति के सामने हाथ जोड़े गिड़गिड़ा रहे हैं?...

अगले कुछ ही क्षणों में शिवशंकर भोलेनाथ अपने अंशभूत शंकराचार्य को यह निर्देश देकर अंतर्धान हो गए कि -

"वत्स शंकर!... तुम अब हिमालय स्थित बदरीनाथ धाम को शीघ्र प्रस्थान करो। वह पवित्र स्थान जहाँ व्यासावतार महर्षि बादरायण ने समस्त वैदिक मंत्रों का शोधन कर 'ब्रह्मसूत्र' की रचना की थी। उस ब्रह्मसूत्र में उन्होंने कणाद, सांख्य, जैन, बौद्ध आदि वेद-विरुद्ध मतों का समूल खण्डन किया है। चारों वेदों में प्रवाहित ज्ञान की अजस्त्र धारा के विरुद्ध अथवा उसी में से कुछ तत्त्व छानकर अनेक मूढ़ों ने अपने-अपने संकुचित मत और पंथ चला दिए हैं जिनके द्वारा आस्थावानों को भ्रमित किया जा रहा है। अनेक आस्थावानों को धर्म-च्युत करने अथवा उन्हें विधर्मी अथवा नास्तिक बनाने के प्रपंच भी भविष्य में रचे जाएंगे। अतः वैदिक धर्म की रक्षा का दायित्व अब व्यास के बाद मैं तुम्हें सौंपता हूँ। तुम बदरी-तीर्थ के एकांत में व्यास गुफ़ा में बैठ ब्रह्मसूत्र पर भाष्य रचो। उपनिषदों और भगवद्गीता पर भी भाष्य की रचना करो। लोकहित में समस्त कार्य करो। तुम्हारा कल्याण हो!"

शंकराचार्य अपने ठहरने के स्थान मणिकर्णिका घाट पर वापस लौटे। उनके शिष्य और मित्र उनके साथ थे। ओंकारेश्वर से उनके साथ तीन माह पूर्व आए उनके अधिकांश अनुयायी तो काशीवास कर विश्वनाथ मंदिर, गंगा स्नान आदि कर कुछ ही दिन में, पहले ही, लौट गए थे। उनमें से दो-तीन व्यक्ति ही बचे थे।

अगले दिन काशी से प्रस्थान की तैयारी करते समय पड़ोस के घर से सुबह-सुबह एक विद्यार्थी का ज़ोर-ज़ोर से आता स्वर शंकराचार्य के कानों में पड़ा। वह लड़का व्याकरण रटने के चक्कर में बड़ा हल्ला करता था। अनेक बार उसके शोर से शंकराचार्य जी का ध्यान भंग हो जाता। वे झल्ला जाते।

आज जब फिर वह व्याकरण रटने लगा तो शंकराचार्य को क्रोध नहीं आया। उस रट्टू तोते लड़के पर हँसी आ गई। उस विनोद की अनुभूति में ही उनसे अनायास ही 'भज गोविंदम्' की रचना हो गई। जिसे 'चर्पटपंजरिकास्तोत्रम्' भी कहा जाता है।

यह रचना उन व्यक्तियों को हैरान कर सकती है जो श्री आदि शंकराचार्य को केवल ज्ञान मार्ग का ही प्रवर्तक मानते हैं। यह सही है कि शंकराचार्य निराकार, निर्गुण अद्वैत ब्रह्म को मानते थे। आत्मा और परमात्मा की अभिन्नता में विश्वास रखते थे। यह भी मानते थे कि ईश्वर तक पहुँचने और मोक्ष की प्राप्ति के लिए ज्ञान मार्ग सर्वाधिक प्रभावशाली है। परंतु साथ ही यह भी उल्लेखनीय है कि उन्होंने ईश्वर की भक्ति और समर्पण, उसकी प्रार्थना या किसी भी पूजा-पद्धति के लिए मना नहीं किया। शंकर अनावश्यक कर्मकाण्डों को अवश्य नहीं मानते थे। परंतु निष्काम कर्म अथवा भक्ति को ब्रह्म की आराधना की राह में प्रस्थान बिंदु मानने में उन्हें कोई संकोच न था।

वैसे तो 'चर्पट पंजरिका' के समस्त स्तोत्र मनुष्य मात्र के लिए आँख-खोलने वाले उद्बोधक उपदेश हैं। परंतु उनमें से कुछ बहुत सहज और लोकप्रिय हैं। इन्हें अनेक कविगण ने भी कालांतर में अपने शब्दों में दोहराया है। यथा -

"बाल्यावस्था में मनुष्य खेलों में खोया रहता है। युवावस्था में प्रेमियों में उसका मन रमा रहता है और वृद्धावस्था में उसे चिंताएं आ घेरती हैं। किंतु परम ब्रह्म परमात्मा से उसे कोई प्रेम नहीं हो पाता। इसलिए हे मूढ़ बुद्धि! तू गोविंद भज, गोविंद भज, गोविंद का भजन कर। क्योंकि अंतिम समय आने पर व्याकरण के नियम तेरी रक्षा नहीं कर सकेंगे।"

जगद्गुरु आदि शंकराचार्य गा रहे थे। उनके विश्राम कक्ष के बाहर बैठे पद्मपाद और उद्भ्रांत सुन-सुनकर हँस रहे थे। आज गुरु महाराज अपने आचार्य प्रवर देखो तो कितनी मस्ती में हैं। गाए जा रहे हैं हम मूढ़मति लोगों के निमित्त– "मनुष्य जन्म लेता है। उसकी मृत्यु होती है। दोबारा उसका माँ के गर्भ में आना होता है। यह आवागमन का चक्र निरंतर चलता-रहता है। लेकिन ईश्वर की भक्ति मनुष्य को इस जन्म-मृत्यु के चक्कर से मुक्ति दिला सकती है।

इसलिए हे मूढ़बुद्धि मनुष्य! तू गोविंद भज, गोविंद भज, भजनकर गोविंद का। क्योंकि अंतिम समय आने पर व्याकरण के नियम तेरी रक्षा नहीं कर सकेंगे।"–

पुनरपि जननं पुनरपि मरणं पुनरपि जननी जठरे शयनम्।
इह संसारे बहुदुस्तारे कृपयापारे पाहि मुरारे।।
भज गोविंदं भज गोविंदं गोविंदं भज मूढ़मते।
संप्राप्ते सन्निहते काले न हि न हि रक्षति डुकृंकरणे।।

● 'सरोज सदन', 18/250, इंदिरा नगर, लखनऊ-226016
सम्पर्क - 9415039777

काशी अंक 13

लॉक डाउन में एम्बुलेंस

मुक्ता

"सुबह-सुबह एम्बुलेंस आई थी–"
"कहाँ?"
"यहीं आपकी बिल्डिंग के पास खड़ी थी।"
"हमने तो नहीं देखा...."
"देखेंगी कैसे....सुबह पाँच बजे ही आई थी....आप सो रही होंगी...."
"किसी मरीज को लेने आई थी.....आपने देखा क्या?"
"हाँ....एक लड़के को ले गई है....ऐसा सुना है...."
"सुना है....देखा नहीं...."
कोई बंगाली है.... "मिश्रा जी ने झल्लाते हुए बात पूरी की।
"एम्बुलेंस आई थी तो किसी मरीज को ही ले जाएगी न.... अच्छे भले आदमी को तो नहीं उठा ले जाएगी।" सामने वाली बिल्डिंग के प्रथम तल में खड़े मिश्रा जी ने बात पूरी की और घर के भीतर चले गये।"
"सुना तुमने....मिश्रा जी कह रहे थे एम्बुलेंस आई थी....." भीतर घुसते हुए राजेश ने पत्नी को आवाज दी।
"अखबार वाले को मना कर दिया न....बिल्डिंग वालों ने कब का बंद कर दिया....एक हमें छोड़कर....तुम मेरी कहाँ सुनते हो...."
आज तो मैं सुबह से खड़ा हूँ...जाने कब डालकर चला गया.... जाने दो उसकी भी रोजी रोटी है....खबरें भी पता चलनी चाहिए..."।
"कोरोना के अलावा होता क्या है....टी वी खोलो तो कोरोना... अखबार खोलो तो वही....कोरोना....अब तो कहाँ रख कर पढ़ा जाये अखबार समझ में नहीं आता....मेज सैनीटाइज करो....बिस्तर पर रखा हो तो चद्दर धोना पड़े....अब अखबार को तो सैनीटाइजर में डुबा नहीं सकते....रद्दी वाला आ नहीं रहा पहले से ही अखबार से अलमारी भरी है....कहाँ रक्खें...."।
परेशान मत हो कल पाँच बजे सुबह जग कर चौकसी करूँगा... मना तो करना ही पड़ेगा.... इतनी पुरानी आदत....अखबार न पढ़ो तो जैसे सवेरा ही नहीं होता....अब छोड़नी पड़ेगी....राजेश के चेहरे पर उदासी तैर गई। सरला ने बात का रुख मोड़ते हुए पूछा" तुम कुछ एम्बुलेंस की बात कर रहे थे...."
"हाँ लगता है कोई बीमार है....सुबह एम्बुलेंस आई थी....कोई बंगाली...."
"बंगाली...सरला चौकी" बंगाली परिवार तो अपनी बिल्डिंग में ही है...."
"हाँ....तो कोरोना यहाँ भी पहुँच गया....मुश्किल और बढ़ गई...मास्क पहन रहे हैं....सैनिटाइजर इस्तेमाल कर रहे हैं....साबुन से हाथ धो ही रहे हैं अब और क्या कर सकते हैं?"
"ईश्वर का ही भरोसा है...सरला ने लंबी साँस छोड़ते हुए कहा।"
"ईश्वर को ही कहाँ फूल मिल रहे हैं....फूल मंडियाँ बंद है...."
सरला ने राजेश की बात काटी "ऐसा मत कहो....इस सबके पीछे भी प्रकृति का कोई उद्देश्य होगा...."
सरला के मन में आशंकाएँ घिरने लगी। नवरात्रि ऐसे बीती कि पंडित जी ने पाठ करने से मना कर दिया। कहने लगे दिल्ली में धर्म गुरुओं की सभा हुई और यह निश्चय किया गया है कि कोई कहीं पाठ-पूजा नहीं करेगा। सरला ने बड़ी विनती की दूर बैठ कर केवल हवन ही करा दीजिए...।
यही तो परीक्षा की घड़ी है। पंडित जी ने रोब भरे स्वर में कहा "जान है तो जहान है....हम नहीं आ सकते।" सरला के मन में आज भी प्रश्न बना हुआ है "काशी में तो हर समस्या का हल पूजा-पाठ यज्ञ अनुष्ठान से होता है। सूर्य, चंद्रमा, नक्षत्रों की गति को अपनी गणित से बदल देने वाले काशी के पण्डितों पर यह दिल्ली का कौन सा पुरोहित मंडल हावी हो गया? क्या आस्थाओं की सीमाएँ इतनी सँकरी हैं? राजेश रोज ही कहते हैं विज्ञान ही समाधान है। हमें वैज्ञानिक समाज के निर्माण के बारे में सोचना होगा। यह तो सही है कि वैक्सीन के बिना यह रोग खत्म होने वाला नहीं है। लेकिन एम्बुलेंस आई क्यों थी? एम्बुलेंस की याद आते ही सर[illegible] गई उसने शाम को पता करने का फैसला किया।
शाम को बगल वाली पड़ोसन गेट के बाहर खड़ी दिख रही थी। सरला मास्क लगाए उनसे कुछ दूरी पर जा खड़ी हुई। एम्बुलेंस के बारे में सुनते ही पड़ोसन बोल पड़ी" नाटा....कुछ कह तो रहा था... यह बात उसी ने मोहल्ले में फैलाई है....मिश्रा जी ने देखा नहीं है....नाटे ने ही उन्हें बताया होगा। मैं पता करूँगी....वैसे– बिल्डिंग में कोई बीमार तो है....ग्यारह नम्बर वाले सिंह साहब का बेटा..."
"मैंने तो सुना है कोई बंगाली....बंगाली तो मुखर्जी का परिवार हुआ...."
"लेकिन उनके बेटे को तो आज सुबह ही सब्जी लाते हुए देखा है..."पड़ोसन नन्दिनी ने अपनी बात का रुख बदलते हुए कहा– "देखिए यही अंतर है। दिल्ली में मेरी बेटी के ससुर छोटे बेटे के पास रहने फरीदाबाद से दिल्ली पहुँचे तो सोसायटी वाले इकट्ठा हो गए.... हारकर उन्हें वापस लौटना पड़ा... यहाँ बनारस में तो खुली छूट है...."
सरला ने उनकी बात काटते हुए कहा, "हाँ....लेकिन आप तो यहाँ बनारस में अकेली हैं....आपकी बेटी आकर आपकी देखभाल कर रही है....सोचिए अगर उसे न आने दिया जाता तो?"
"हाँ...यह तो है...."
"लॉक डाउन ठीक है... हम घर में रहें....साबुन से हाथ धोएँ, मास्क लगाएँ....लेकिन अपने आपसी रिश्तों को बनाकर रखना जरूरी है....इस समय हमें एक दूसरे की पहले से अधिक जरूरत है....सोच रही हूँ कल ऊपर शैल सिंह के घर जाकर हाल ले लूँ....वही बेटा बीमार है न जिसकी परसाल शादी हुई थी....बड़ी अच्छी तरह रिसेप्शन दिया था उन्होंने... बहू भी बहुत सुंदर है....लेकिन बेटा बहू तो कहीं और रहते थे..."
हाँ....अब वो कमरे में बेटा-बहू कैसे रहेंगे....लेकिन आजकल बहू मायके में हैं....बेटा यहीं है– अभी आपका उनके घर जाना ठीक नहीं है....पूरा परिवार घर में ही बंद रहता है....दरवाजा खुलता ही नहीं है....बीमारी की बात भी पता नहीं सही है या गलत...." कुछ तो होगा ही....बात ऐसे नहीं फैलती...डाक्टर को बताना चाहिए यदि कोरोना हुआ तो...."
भय की कालिमा हावी हो उठी। दोनों महिलाओं ने अपने घर का रुख किया।
लैप टॉप पर नजरें गड़ाये राजेश ने सरला को संबोधित किया, "प्रथम विश्वयुद्ध के समय आज से सौ साल पहले भी 'स्पेन फ्लू' फैला था। जिसकी शुरुआत स्पेन से हुई थी, इसीलिए इसे 'स्पेन फ्लू' नाम दिया गया। कोरोना की तरह यह भी वायरस संक्रमण था जिसने उस समय करोड़ों लोगों की जान ले ली थी। तुम्हारे प्रिय कवि निराला जी की पत्नी मनोहरा देवी की मृत्यु भी इसी संक्रमण से हुई थी और ऐसा भी अनुमान है कि गाँधी जी को

भी यह संक्रमण हुआ था....जरा सोचो सरला अगर गाँधी जी उस संक्रमण का शिकार हो गए होते तो... शायद हम आज भी गुलाम होते। उस समय भी लोग घरों में क्वारंटाइन' हुए थे। उस समय के अखबार और कवियों, लेखकों की रचनाओं से बहुत से तथ्य सामने आते हैं। लोगों ने नई जीवन शैली विकसित की थी, नये ढंग से शिक्षा, नये ढंग के खेल जो बंद घरों में संभव हो सकें.... उस समय संचार माध्यम के नाम पर केवल पुराने ढंग का फोन ही कुछ जगह था....लोगों ने मास्क को अपने जीवन का अंग बना लिया था। मैं तुम्हें यह सब इसलिए बता रहा हूँ कि तुम 'एम्बुलेंस' का चक्कर छोड़ो और कुछ क्रिएटिव करो....एक समय था तुम बहुत अच्छी पेंटिंग करती थी...तुम फिर से शुरू करो...."

"आजकल काम वैसे ही बढ़ा है....तुम्हारे कहने पर कामवाली को भी मना कर दिया है..."

"इस समय खुद घर का काम करना ही सुरक्षित है। संक्रमण दूर हो जाने पर फिर रख [illegible]...उसके पैसे तो काट नहीं रहे हैं...."

"लेकिन [illegible]"

"यह तो [illegible] जानता सरला.... मैं भी घर में बैठा ऑनलाइन काम कर रहा हूँ. [illegible] कब तक चलेगा यह सब प्राइवेट नौकरी है... सरकारी तो है [illegible]... [illegible] भी हटा सकते हैं....पहले भी बहुत छँटनी हो चुकी है....त[illegible]की ही रहती है।"

शाम [illegible] गई [illegible] सरला रसोई की ओर बढ़ी।

रात में [illegible] घंटी बजी। पड़ोस वाली नंदिनी का फोन था। उनकी बूढ़ी कामवाली मना करने पर भी रोज आ जाती है, मान नहीं रही। नन्दिनी का आग्रह था कि सरला सुबह उसके आने पर कह दे कि जरूरी काम से वह गाँव चली गई है। लौटने पर उसे बुलाएँगी। नन्दिनी सामने के दरवाजे पर ताला लगा देंगी, उसे शक नहीं होगा और वह लौट जाएगी। सरला ने बात सुन ली लेकिन मन की उलझन होठों पर आ गई "बेचारी कामवालियाँ....खाने को मोहताज हो जायेंगी..."

भोर जगते ही बाहर का दरवाजा पीटने की आवाज से नींद खुली। नन्दिनी की बूढ़ी कामवाली ने दरवाजा खुलते ही गुहार लगाई" हम सब जाने लीं... ताला मार के अंदर बैठल हईं....हमरे पेट पर लात मरिहैं....हमहूँ इहें उनके दरवाजे पर धरना देब बतावऽ कहाँ हईं...."

सरला ने समझाते हुए कहा, "उन्हें अचानक गाँव जाना पड़ा है... आएँगी तो बुला लेंगी...."

"तू हमें बहकावत हउ.... हम जाए वाली नाहीं हईं..."

बुढ़िया नन्दिनी के दरवाजे पर जाकर बैठ गई। नन्दिनी ताले के अंदर बुढ़िया बाहर। पूरा सरस्वती नगर मोहल्ला यह दृश्य देख रहा था। नंदिनी बार-बार सरला को फोन करके उसे किसी तरह वापस भेजने का अग्रह कर रही थी। धूप चढ़ने लगी थी। सरला और राजेश के समझाने के बावजूद बुढ़िया डटी हुई थी। दो घंटे बाद बुढ़िया हारकर यह कहते हुए चली गई कि कल फिर आउब....देखब कैसे दरवाजा ना खोलिहैं....हमार दस बरस का काम ऐसे ही छूट जाई...."

नाश्ता करने के बाद सरला ने पोछे की बाल्टी में पानी में लाइजॉल मिलाया और गेट के बाहर बनी पत्थर की सीढ़ी को रगड़-रगड़ कर झाड़ू से साफ करने लगी। फिर लोहे के दरवाजे पर पानी डाला तो राजेश ने टोका" आज इतनी सफाई क्यों हो रही है?" सरला ने पास आकर फुसफुसा कर कहा, "तुम्हें पता है न आठ नम्बर वाले इसी सीढ़ी के रास्ते से अपने गेट तक जाते हैं....दरवाजे को भी हाथ लगाते होंगे...."

"संगमरमर की सीढ़ी छोड़कर ईंटों वाले रास्ते से कौन जाना चाहेगा...." एम्बुलेंस अभी भी तुम्हारे दिमाग में घूम रही है....".

"जब घर में ही कोरोना आ घुसा है.... तो यह सब तो करना ही पड़ेगा....."

"आज सब्जीवाला नहीं आया...अभी तक तो ठेला लेकर आ जाता था" सरला की दृष्टि सड़क पर घूमी तो याद आया, शाम के लिए सब्जी नहीं है।

"अभी दूध लेने जाऊँगा तो देख लूँगा....कभी-कभी ठेलेवाले उधर भी खड़े होते हैं।" राजेश ने समाधान दिया।

मास्क लगाकर, चप्पल बदलकर राजेश सड़क की ओर बढ़ा तो सरला राजेश के स्नान की तैयारियाँ करने लगीं। कुकर ने अंतिम सीटी मारी, दाल पक चुकी थी। कॉलबेल बजी। अंदर आकर राजेश ने सभी सामान बरामदे में रखते हुए कहा" सब्जी तो मिली नहीं....बस आलू मिला है।"

"क्यों?" सरला ने उत्सुकता से पूछा।

रात तीन से पाँच मंडी खुलती है... आज ठेलेवाले को उठने में देर हो गई। आलू ले पाया था कि पुलिसवाले ने डंडे बरसाने शुरू कर दिये... बेचारे को काफी चोट लगी है। रास्ते में सात नम्बर वाले मिल गए। सात और आठ नम्बर तो आमने-सामने हैं। बड़े परेशान लग रहे थे। उन्हें भी शक है आठ नम्बर वाले सिंह साहब के बेटे को कोरोना है। वे लोग घर को बिलकुल बंद रखते हैं। दूध, सब्जी लेने भी नहीं निकलते हैं। सात नम्बर वाले को एम्बुलेंस की जानकारी नहीं थी लेकिन डर के कारण उन्होंने अपनी पत्नी को सोनारपुरा उस के मायके भेज दिया है साथ में बेटा भी गया है। वह अब अकेले रह रहे हैं...."।

सरला ने टोकते हुए कहा, "मैं तो पहले से ही कह रही हूँ पूरी बिल्डिंग के लोग मिलकर चलें और उनसे बात करें....मैंने तो उन लोगों को हमेशा ही घर में बंद रहते देखा है....न बोलना न बतियाना- "लेकिन बिल्डिंग में इतनी एकता कहाँ है.... सबकी अपनी-अपनी ढपली, अपना-अपना राग है..." कहते हुए राजेश स्नानगृह की ओर चल दिया। सरला ने रसोई के काम निपटाने शुरू कर दिये।

सरला की चिंता बढ़ती जा रही थी। शाम को अपनी बगिया में टहलते हुए उसकी दृष्टि उठी तो वह आश्चर्यचकित रह गई। शैल सिंह और उनके पति अपने घर की बालकनी में खड़े थे। वह आपस में बातें कर रहे थे और ऐसा लग रहा था मोहल्ले का मुआयना कर रहे हों। सरला ने राजेश को आवाज दी। राजेश ने बाहर आकर देखा और बोला, "अच्छा है....यहीं पूछ लेते हैं।" सरला ने हिदायत दी, "सीधे नहीं बहाने से पूछियेगा।" शैल सिंह सरला को देखकर मुस्कुराईं। सरला ने बात बढ़ाई "कैसी हैं?" शैल सिंह ने "सब ठीक है" कहकर प्रत्युत्तर दिया। राजेश ने पूछा, "सुना है कोई बीमार है?" शैल सिंह ने पति से कुछ कहा। सिंह साहब तत्काल बोले, "नीचे आकर बात करता हूँ।"

नीचे आकर गेट के बाहर से ही सिंह साहब ने बात शुरू की "आप कुछ पूछ रहे थे?"

"सुना है कोई बीमार है... छः नम्बर वाले मुखर्जी साहब के यहाँ?"

"नहीं कोई बीमार नहीं है....न उनके यहाँ न मेरे यहाँ सब स्वस्थ हैं।"

"सुना है एम्बुलेंस आई थी? किसी मरीज को लेने?"

"जब कोई बीमार ही नहीं है तो एम्बुलेंस क्यों आएगी? हम सब लोग स्वस्थ हैं।"

सरला आश्वस्त हुई। कमरे में घुसते ही उसने राजेश से अपने मन की प्रसन्नता व्यक्त की। "मतलब सब झूठी अफवाह है– बेटा बीमार हो तो भला कोई झूठ क्यों बोलेगा... उनके बेटे की शादी में पूरे फ्लैट के लोग शामिल थे। सिंह साहब के पिता यहीं मरे... सब फ्लैट के लोग घाट तक गये... सुख-दुःख के साथी हम सब। भला हमसे झूठ क्यों बोलेंगे..."

"कोरोना से भी बड़ा संकट इस समय मूल्यों का है, नैतिक, मानवीय सभी मूल्य.... पाप-पुण्य, धर्म-अधर्म की सीमाएँ गड़मड हो रही हैं.... अस्तित्व का प्रश्न आज सबसे बड़ा है....सबसे मुखर...." राजेश को बीच में टोकते हुए सरला बोली "हमारे आपसी रिश्ते ही तो प्रकाश केंद्र हैं...."

"आज जैसे जीवन शैली बदल रही है....आदमी से कैसे अपेक्षा की जाय कि उसका व्यवहार पहले जैसा ही बना रहे...."

राजेश की बात से सहमत न होते हुए भी सरला शांत रही।

आधी रात के बाद से दूसरी मंजिल से रोने-चिल्लाने की भयानक आवाजें आनी शुरू हो गई। सरला का मन किसी अनहोनी के प्रति आशंकित हो उठा। उसने धीरे से राजेश को जगाया।

"चलिए ऊपर चलकर देखा जाय.... कहीं सिंह साहब का बेटा...." राजेश ने स्थिति को भाँपकर कहा, "सरला तुम्हारे दिमाग में एम्बुलेंस अभी भी घुसी हुई है....यह आवाजें दूसरी मंजिल से आ रही है.... ग्यारह वाला पीकर आया होगा.....

शराब की दुकाने खुल गई हैं....लग रहा है ज्यादा चढ़ा ली है। पीकर वह बीबी के साथ मारपीट करता है...यह तो इस फ्लैट में रोज की बात थी.....हाँ दो महीने ये हंगामा नहीं हुआ था... हम लोग भी भूल गए थे....अब उसकी बीबी पर फिर आफत आ गई। सरकार को इससे क्या, उसे तो राजस्व चाहिए...."

"मुझे तो कुछ और ही लग रहा है...." सरला बेचैन थी। तभी जोर-जोर से उल्टी की आवाजों से दो ईंटों की पतली दीवार दहलने लगी।

"सुन लिया....मैंने तो पहले ही कहा था....अब सो जाओ।"

सुबह सरला की नींद देर से खुली। राजेश ने चाय बनाकर पी ली थी। नाश्ता करने के बाद सरला ने भोजन की तैयारी शुरू की। नमक बहुत कम बचा था। सुबह आठ से दस दो घंटे के लिए दुकानें खुलती थीं। सरला मास्क लगाकर नमक लाने घर के सामने 'नाटे' की दुकान की ओर चल दी। नाटे कद के कारण दुकानदार 'नाटे' नाम से मशहूर था। गोल-मटोल हँसमुँख चेहरे वाले 'नाटे' ने अपने नाम को ताबीज की तरह ग्रहण कर रखा था। सरला ने दूर से देखा। नाटे की दुकान पर आठ नम्बर वाली शैल सिंह सिंहनी की तरह दहाड़ रही थीं" यह एम्बुलेंस वाली बात तुम्हीं ने मोहल्ले भर में फैलाई है....बेटा मेरा बीमार है मोहल्लेवालों से क्या मतलब.... फ्लैट वाले पूछ रहे हैं....मेरी कोई जवाबदेही नहीं बनती....किस बात की सफाई दूँ मैं....कोरोना ही केवल बीमारी है....और सब बीमारियाँ क्या बीमारियाँ नहीं हैं....अस्पताल में डाक्टर नहीं.... मिल भी जायें तो हाथ लगाने को तैयार नहीं.... हम अस्पतालों के चक्कर काटते रहे....कहीं कोई टेस्ट करने को तैयार नहीं.... डाक्टर समझ नहीं पा रहे थे.... बस कोरोना-कोरोना.... हो गया टेस्ट.... मेरें बेटे को कोरोना नहीं है लेकिन डाक्टरों की लापरवाही ने उसे लीवर कैंसर की दूसरी स्टेज में पहुँचा दिया। कैंसर कोई बीमारी नहीं है.... कोरोना से ज्यादा खतरनाक बीमारी है कैंसर.... आई थी एम्बुलेंस.... मेरे बीमार बेटे को अस्पताल ले जाने आई थी.... मेरा बेटा कोई अपराधी है....सबकी आँखों में नफरत....ओह....हम क्यों बतायें सबको....हमारी कोई जवाबदेही नहीं...किसी से भी नहीं है.....।"

शैल सिंह मुड़ी और सड़क की ओर बढ़ गई। सरला कुछ दूर पर ठिठकी खड़ी थी। उसके कदम आगे बढ़ने से इंकार कर रहे थे। सरला ने आकाश की ओर देखा। धूप तेजी से बढ़ रही थी। चारों ओर वीरानी थी। वह धीरे-धीरे दुकान की ओर बढ़ने लगी।

● बी 4/1, अन्नपूर्णानगर कॉलोनी, विद्यापीठ रोड, वाराणसी-221002
सम्पर्क - 9839450642

कविता

काशी

धर्मेन्द्र गुप्त

राजा और अमीर की नगरी
साधू-संत-फकीर की नगरी
कर्म-धर्म के वीर की नगरी
है यह ज्ञान अधीर की नगरी
उज्ज्वल निर्मल-पावन काशी

सुरभित है यह जैसे चंदन
इसकी शोभा जैसे मधुवन
इसकी आभा जैसे कुंदन
इसकी रंगत जैसे दर्पण
है यह लोक लुभावन काशी

कोई भूखा यहाँ न सोता
अन्नपूर्णा का सबको न्यौता
दीन तुल्य कोई न रोता
हास्य-केलि का बहता सोता
करती हर क्षण खन-खन काशी

सुर, लय, स्वर औ' ताल की नगरी
शिल्प, कलाएं चहुं दिशि बिखरी
सकल वाङ्[illegible] की [illegible] गठरी
विश्व-दृष्टि [illegible] यह [illegible]री
सु[illegible] की [illegible]नभावन काशी

राग में [illegible] है
संग भोग [illegible] है
जीवन का [illegible] है
जीवन हर [illegible] फ[illegible] यहाँ है
जी[illegible] ही [illegible]न है काशी

● के 3/10 ए माँ शीतला भवन, गाय घाट वाराणसी-221001
सम्पर्क - 8935065229
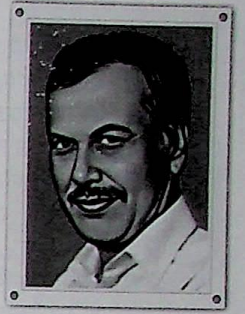
कालिदास के साँड़

अमिताभ शंकर रायचौधुरी

यद्यपि यह तो साहित्यिक अनुसंधान का विषय है कि कविवर कालिदास कभी काशी में पधारे थे या नहीं परंतु स्थान-माहात्म्य के कारण काशी प्रकरण से ही हम इस व्याख्यान का बिस्मिल्लाह-ए-रहीम कर रहे हैं। आपत्ति करने पर आपके हाथ आये पीएच. डी. का परिन्दा फुर्र होने का खतरा है।

वैसे तो किसी ने सबको होशियार कर दिया था– 'रांड़ सांड़ सीढ़ी सन्यासी / इनसे बचे सो सेवे कासी!' पर देखिए अलस्सुबह गंगा नहाते जाते समय पंचगंगा घाट की सीढ़ियों पर ही गुरु रामानन्द के पैर बालक कबीर के तन पर पड़े, तो फिर उनका मन खिल उठा।

सीढ़ी नैया बनी थी क्या बुलंद तकदीर
गंगा किनारे गुरु मिले सो तर गये कबीर !

यह तो हुआ कासी की सीढ़ी-महिमा! तो अब शंड-गौरवगाथा....

भले ही आजकल बनारस की सड़कों से साँड़ों एवं गायों को गिरफ्तार किया जा रहा है, मगर कलाधर में कलंक के समान वे तो राजमार्ग पर विद्यमान थे एवं हैं ही। अमरउजाला (12.12.15.) की ख़बर है कि प्र.मंत्री के आगमन के सुअवसर पर 'कल्लू, शंभू और मरकहवा' जैसे वलीवर्दों को गोलघर गोशाले में बंद कर दिया गया तो चारे के खाते में बेचारे नरकपालिका को पचास रुपये प्रति पशु खर्च़ भी उठाना पड़ा था।

और चूँकि हम ठहरे 'छोरा गंगा किनारेवाला', तो ककुदमानों के लांगूल पकड़ कर कालिदास- वैतरणी पार करना चाहते हैं। वो कैसे?

कृपया रूठें न, अब नांदीपाठ को वृषभाकाय लंबा चौड़ा न बनाकर असली मुद्दे पर आते हैं। यानी महाकवि कालिदास ने शिववाहन नंदी का उपयोग कैसे किया।

बात दरअसल यह है कि एक महानुभव मित्रवर की कृपा से कालिदासकृत 'कुमारसम्भवम्' के पन्ने पलटने का सौभाग्य प्राप्त हुआ। पं. शेषराज शर्मा रेग्मी ने अपने ढंग से उसका हिन्दी तरजुमा भी दे रक्खा है-तो इस अबोध को रसास्वादन करने में कोई विशेष कष्ट उठाना न पड़ा। तारीख गवाह है- जैसा कि हर बार होता रहता है– कुमारसम्भवम् की कहानी इस प्रकार शुरू होती है कि तारकासुर देवताओं को हाँककर जन्नत पर अपना अधिकार कायम कर लेता है। अब ब्रह्मा के उपदेशानुसार इंद्रादि देवता इसी प्रयास में लगे हैं कि शिवपार्वती का विवाह हो जाए और देवताओं को कुमार/कार्तिक के रूप में एक सेनापति मिले। अब ज़रा सोचिए -अब तक देवताओं में कौनो पट्ठा सिपहसालार बनने लायक ही न रहा? खैर् ....

उधर शिव को वर के रूप में प्राप्त करने के लिए पार्वती भयंकर तप कर रही हैं। तो उनकी परीक्षा लेने के लिए स्वयं महादेव एक जटाधारी ब्रह्मचारी के भेष में उनके पास पहुँचते हैं यह समझाने के लिए कि वो नंग-धड़ंग शिव तुम्हारे लायक बिलकुल नहीं है।

किमित्य पास्याभरणानि यौवने धृतंत्वया बार्धकशोभिबल्कलम्।
(पंचम सर्गः 44)

(हे गौरि!) वल्कल तो बूढ़े लोग पहनते हैं। तुमने किस कारण जवानी में आभूषणों को उतारकर उसे धारण कर लिया है ? ('गौरि' की वर्तनी में छोटी 'इ' शेषराज जी ने ही लिखा है। मैं उनके अनुवाद से उधार लेकर ही तरजुमा करता रहूँगा।)

उसी तरह मानस के बालकाण्ड में शिवजी के कहने पर सप्तर्षि पार्वती को भड़काने या उनकी परीक्षा लेने पहुँचते हैंः–

निर्गुन निलज कुबेश कपाली। अकुल अगेह दिगंबर ब्याली।

(हे गौरी!) क्यों तुम ऐसा पति चाहती हो जो स्वभाव से उदासीन, गुणहीन, निर्लज्ज, बुरे वेशवाला, नरकपालों की माला पहनने वाला, कुलहीन, बिन घर-बार का, नंगा और शरीर पर साँपों को लपेट रखने वाला है?

उधर कन्या को फाइनल रेज़ल्ट देने के पहले कालिदास के जटाधारी उर्फ़ शिव फिर से एक राग अलापते हैंः-

इयं च तेऽन्यापुरतोविडम्बना यदूढया वारणराजहार्यया।
विलोक्य वृद्धोक्षमधिष्ठितंत्वयामहाजनः स्मेरमुखोभविष्यति।।
(पंचम सर्ग : 7)

(हे 'पार्वति'!) तुम्हारे लिए दूसरी विडंबना यह भी है कि विवाह के बाद जिसे सजे हुए हाथी पर सवारी करते हुए ससुराल जाना था, उस कन्या को एक बूढ़े बैल पर सवारी करते देख सारी जनता / पब्लिक मुस्कुराने लगेगी (कि नहीं)।

तो 'कुमारसम्भवम्' के साँड़ की एन्ट्री कुछ ठहाके के साथ होती है।

अपने होनेवाले दुलहेराजा के अपमान से तिलमिलायी पार्वती आँखों को लाल और भौंहों को तिरछी करके जो जवाब देती है वो भी क़ाबिलेतवज्जुह हैः-

असंपदस्तस्य वृशेणगच्छतः प्रभिन्नदिग्वारणवाहनो वृशा।
करोतिपादावुपगम्य मौलिनाविनिद्रमन्दाररजोरूणाङ्गुली।।
(पंचम सर्ग : 8) यानी......

जो सम्पत्तिहीन हैं अतः साँड़ पर सवारी करते हैं उस महादेव को मदस्रावी दिग्गज (ऐरावत हाथी) पर सवारी करनेवाले इन्द्र मुकुट झुकाकर प्रणाम करते हैं और विकसित मंदार पुष्प के परागों से उनके चरणों की अंगुलियों को लाल बना देते हैं। यानी सर नवाकर चरण वंदना करते हैं।

मानस में सप्तर्षि पार्वती का इंटरव्यू लेने गये थे तो 'कुमारसम्भवम्' में शिव उन्हें होनेवाले ससुर हिमालय महाराज से बात करने के लिए ओषधिप्रस्थ नगर में भेजते हैं। चलो भाई, आखिर शिव बारात निकलती है। तो महादेव न घोड़े पर, न हाथी पर, न रथ या कार पर सवारी कर रहे हैं। उनकी सवारी तो वही है– बनारस की शान! शिववाहन शंड।

स गोपतिंनन्दिभुजावल्बी शार्दुलचर्मान्तरितोरूपृश्ठम्।
तद्भक्तिसंक्षिप्तबृहत्प्रमाणमारूह्य कैलासमिवप्रतस्थे।।
(सप्तम सर्ग : 37)

नन्दिकेश्वर के बाहु का सहारा लेते हुए शिवजी ने कैलास पर्वत के समान वृषभ पर आरोहन कर प्रस्थान किया, जिसकी पीठ पर व्याघ्रचर्म बिछाये गये थे और शिवभक्ति से जिसने अपने दीर्घप्रमाण यानी कद को संकुचित कर लिया था।

अब बरातियों के साथ चलते-चलते ज़रा शिवजी की लौकिक डिप्लोमेसी देखिए। 'उन्होंने ब्रह्माजी को 'शिर' हिलाकर, विष्णु को वचन से, इन्द्र को मन्द हास्य से और अवशिष्ट समस्त देवताओं को दर्शनमात्र से यथायोग्य सम्भावित (अनुगृहीत) किया।' (सप्तम सर्ग : 46)

जैसे वैश्विक राजनैतिक सम्मेलनों में या फ़िल्मी एवार्ड सेरिमनिओं में कोई किसी से अकड़ कर मिलता है, तो किसी से गलबहियाँ डाले, फिर किसी से मुस्कराकर या किसी से मोगाम्बो स्टाइल में।

काशी की सँकरी गलियों में बारात के रास्ते जब किसी वलीवर्द का प्रादुर्भाव होता है तो जानते हैं लोग क्या करते हैं? बगल के किसी मकान का दरवाज़ा खोलकर, उसकी पूँछ पकड़ कर सीधे उसको अंदर हाँक देते हैं। लीजिए, बाजेगाजे की आवाज़ से तो बेचारा पहले से ही पगलाया रहता है और अब? और उस मकान में रहनेवाले जब सीढ़ी से नीचे उतरेंगे तब? कयामत आ नहीं जायेगी? दाखिल खारिज करने के लिए किस अदालत का चक्कर काटेंगे बेचारे? तो आगे ....

स प्रापदप्राप्तपराभियोगंनगेन्द्रगुप्तंनगरंमुहूर्तात्।
पुरोविलग्नैर्हरदृष्टिपातैः सुवर्णसूत्रैरिव कृष्यमाणः।।

(सप्तम सर्गः 5)

स्वयं पर्वतराज हिमालय जिस नगर की रक्षा करते हैं, जहाँ शत्रु आक्रमण करने की हिम्मत भी नहीं कर सकता है, शिवजी के दृष्टिपातों से खींचा जाता हुआ वह साँड़ थोड़े ही क्षण में वहाँ पहुँच जाता है। यानी महादेव के इशारे से ही वह तुरन्त वहाँ पहुँच गया।

बनारस के वरपक्षों को इससे कुछ सीख लेनी चाहिए। भले कोई मरता एम्बुलेंस में लेटे-लेटे कराह रहा हो, वे फालतू में सड़क जाम करके अपने नाचगाने का प्रदर्शन चालू रखते हैं। अरे भाई, जल्दी से पहुँचो कन्यापक्ष के घर। काम निपटाओ। कन्या का पिता बेचारा भी परेशान हो रहा होगा! वहाँ तुम्हारे स्वागत में माला एवं मिठाई लेकर जाने कितनी मनोहारी वनिताएँ खड़ी जो हैं।

फिर तो वर वधू का विवाह सम्पन्न हो गया। पता नहीं आपने मिठाई खायी थी या नहीं। अब बिदाई के दृश्य में साँड़ की भूमिका का अवलोकन करें।

सोऽनुमान्य हिमवन्तमात्मभूरात्मजाविरहदुःखखेदितम्।
तत्र तत्र विजहारसंपतन्नप्रमेयगतिनाककुद्मता।।

(अष्टम सर्ग : 21)

'तब शिवजी ने पुत्री के वियोग के दुःख से पीड़ित हिमालय को मनाकर अपरिमित गतिवाले वृषभ की सवारी करते तत् स्थानों में विहार किया।'

लीजिए, बाबुल मोरा नैहर छूटल जाए! बिटिया को विदा करते समय किस बाप के नैन नम हो नहीं जायेंगे?

अब थोड़ी देर के लिए शिवजी की शादी के प्रांगण को छोड़ साँड़ को लेकर कालिदास के प्रकृति वर्णन की ओर कूच करते हैं। उनके अमरकाव्य 'मेघदूतम्' का यक्ष पूर्वमेघ में बादलों से अपनी विरहिनी प्रिया का पता बतलाते हुए कहता हैः-

आसीनानांसुरभितशिलंनाभिगन्धैर्मृगाणां,
तस्या एव प्रभवमचलंप्राप्य गौरंतुशारैः।
वक्ष्यस्यध्वश्रमविनयनेतस्य शृंगेनिशण्णः
शोभां शुभ्रत्रिनयन वृशेत्खातपंकोपमेयाम्।।(श्लोक : 53)

बांग्ला लेखिका नवनीता देवसेन के पिता एवं नोबेल विजयी अर्थशास्त्री अमर्त्यसेन के ससुर नरेन्द्रदेव ने बांग्ला में इसका जो पद्यानुवाद किया है, अगर सीधे गद्य में उसका तरजुमा करें:-

तुषार-धवल हिम-अचल के शिखर पर पहुँच कर हे जलद, तुम्हे उसके शीर्ष पर जाह्नवी की जन्मभूमि दिखेगी। कस्तूरी मृगों की संगति पाने से जिसका शरीर सुगन्धमय हो गया है, उस पहाड़ पर जब तुम विश्राम के लिए ठहरोगे तो लगेगा- शंभु का वाहन सफेद साँड़ मानो अपने सींग पर पंख लगाकर वहाँ खड़ा है।

ज़रा अपने ढंग से सुनाये तोः-

जब पहुँचोगे तुम जलद हिमशिखर पर / निकली जहाँ से गंगपावन बनकर
निडर मृगछौने जहाँ धूम मचायें / हुए सुरभित कस्तूरी से शिलायें,
कर लेना तुम वहाँ विश्राम क्षणभर/कहने लगेंगे सारे नारी नर
'क्या वो त्रिनयन का विशाल श्वेत साँड़/पंकलगे सींग से करता खिलवाड़ ?'

आप कभी ऊटी के निकट कुन्नूर या अरुणाचल के तावांग के रास्ते सेलापास में तशरीफ़ ले जायें और वहाँ बादलों के सागर का दीदार करें तो बूझ पायेंगे कि कवि शिरोमणि की कलम से कौन सी रस-गंगा की धार निकली है। हिमालय की सफेद चोटी पर मेघ मँडरा रहे हैं। सफेद तन के ऊपर राख के रंग का ब्रश स्ट्रोक! क्या बात है! जब लोग अपने भवन निर्माण के लिए

काशी की सड़कों के किनारे बालू या गेरू मिट्टी [illegible] हैं और कोई वलीवर्द आकर उसमें अपना सींग घुसाकर फाग [illegible] समां कुछ वैसा ही बन जाता है।

अब ज़रा एक ऐतिहासिक तथ्य। 'गन्स, जर्मस् [illegible] ज़ारेडडायमंड साहब फ़रमाते हैं कि फर्टाइल क्रिसेंट यानी प्राची[illegible] या या एशिया माइनर अर्थात आज के तुर्क का एशिया वाला भू[illegible] ही [illegible] वंश को पालतू बनाने की परम्परा का उद्गम स्थल है। करीब 15 व[illegible] पूर्व सबसे पहले उन्हें वहाँ पाला जाने लगा था। वहीं से हमारी देसी गाय और अफ्रीका के कबिलाई जेबू गाय दोनों दो तरफ़ चली गयीं। यानी इस मायने में भी सारी दुनिया एक दूसरे से जुड़ी हुई है। ज़रा सोचिए, सारे इतिहास, सारी संस्कृति और सारे इंसान सब कैसे एक दूसरे से जुड़े हुए हैं! तो फिर जंग और दंगा किस बात का भैया?

तो जब विवाह सुसम्पन्न हो गया, आपने भरपेट भोज खाकर मज़े से डकार लिया तो वर वधू को मधुमास या हनीमून के लिए भेजना भी तो फर्ज़ बनता है। तो वहाँ सवारी क्या होगी? शिवपार्वती तो फ्लाइट से सिंगापुर या बैंकाक फुकेट नहीं न गये थे। तो कालिदास ने उसकी भी व्यवस्था कर दीः-

मेरुमेत्य मरुदाशुगोक्षकः पार्वतीस्तनपुरस्कृतःकृती।
हेमपल्लव विभङ्गसंस्तरानन्वभूत्सुरतमर्दन क्षमात्।।

(अष्टम सर्ग 22)

'वायु के समान वेग वाले वृषभ पर आरूढ़ और पार्वती से आलिङ्गित होकर कुशल शिवजी ने सुमेरु पर्वत को प्राप्त कर सुवर्ण पल्लवों के खण्ड रूप बिछौने पर रात का अनुभव किया।' हवा से बातें करता हुआ महादेव का साँड़ शिवपार्वती को लेकर सुमेरु पर्वत पर पहुँच गया। दोनों उस पर एक दूसरे से सटकर बैठे हुए थे। वहीं स्वर्ण पल्लवों के बिछौने पर उन्होंने रात गुज़ारी।

शब्दों की गहराई में उतरकर भाव-मोती को ढूँढ़ लायें, दोस्त।

परस्पर चिपके बैठे हुए बाईकसवार 'अर्द्धनारीश्वर' यानी आधुनिक युगलवृन्दों को देखकर सहसा यह एहसास तीव्र हो उठता है कि महाकवि कितने बड़े भविष्य द्रष्टा थे!

हाँ, जैसा कि फ़िल्मों में अक्सर होता है- शादी के बाद-लाल हृदय प्रतीक को गाड़ी के पीछे लटकाकर हीरो हीरोइन परिन्दे बन जाते हैं, कुछ उसी तरह उन्होंने उस कैलास पर्वत के समान वृषभ की दुम से दिल-ए-लाल के चिह्न को लटकाकर यह नहीं लिक्खा था कि- 'हैपीली मैरिड एवर आफटर' यानी-मिला विवाह के बाद/ शाश्वत सुख का स्वाद!

● द्वारा, डा0 अलोक कुमार मुखर्जी
104/93, विजय पथ, मानसरोवर, जयपुर, राजस्थान-302020
सम्पर्क - 9455168359, 9140214489

आफत का मारा ओवर ब्रिज बेचारा

श्रीप्रकाश श्रीवास्तव

यों तो विगत कई सालों से पूरा उत्तर प्रदेश ही तूफान मेल की रफ्तार से विकास के पथ पर ताबड़तोड़ दौड़ रहा है। ऐसे में वाराणसी जिले का क्या कहना ? यह जिला विकास के पथ पर दौड़, नहीं, उड़ रहा है। विकास की सारी योजनाओं ने इस जिले को बुरी तरह से अपने आगोश में घेर लिया है। विकास [illegible] बादल से पैसा पानी की तरह बरस रहा है, जिसमें विभाग एवं कार्यदायी संस्थायें बुरी तरह से भीग रही हैं। इस भीगने का भी एक सुख है। इसलिए कोई छतरी का इस्तेमाल नहीं कर रहा है, बल्कि सभी चाह रहे हैं कि [illegible] से अधिक भीग जाय। वो किसी फिल्म में बरसात का एक गाना था [illegible] जो अमिताभ बच्चन एवं स्मिता पाटिल पर फिल्माया गया था, 'आज रपट [illegible], [illegible] मुझे न उठइयो। 'अब जहां भीगने, भिगोने का माहौल चल रहा हो, तो लोगों को इनके होश में होने के बारे में सोचना ही नहीं चाहिए। पूरा आलम मदहोश सा है। ऐसे में यदि कोई छोटी-मोटी घटना हो जाय, तो मेरे विचार से इस पर ध्यान देने की कोई आवश्यकता नहीं है। परन्तु अब इस मीडिया को क्या कहा जाय ? हर छोटी से छोटी घटना को तूल देने की इनकी आदत है। और इनके इन्हीं समाचारों के कारण कभी-कभी वातावरण अनावश्यक रूप से बोझिल हो जाता है।

हुआ यह कि वाराणसी में एक नया ओवर ब्रिज, चौकाघाट से कैन्ट स्टेशन के आगे तक दो सालों से बन रहा है। इस ओवर ब्रिज के अब बनाये जाने का औचित्य सामान्य व्यक्ति के चिन्तन के परे है। यहां कुछ साल पहले ही एक ओवर ब्रिज चौकाघाट से बनते हुए रोडवेज के पहले जमीन पर आ लगा था। जिन दूरदर्शी लोगों ने इसके बनवाने का प्लान बनाया होगा, वे बड़े ही मेघावी थे। शायद उन्होने सोचा हो कि ओवर ब्रिज से उतर कर लोग रोडवेज की बसों पर बैठ जायेंगे या फिर कैन्ट रेलवे स्टेशन से अपने गन्तव्य को चले जायेंगे। हो सकता है कि कुछ लोग ऐसे ही चले भी गये हों। परन्तु बाद में पता चला कि इससे तो पूरा ट्रैफिक ही मुंह के बल आ गिरा। जो बसें आदि ओवर ब्रिज से उतर कर रोडवेज के पहले सड़क पर उतर आती हैं वे सामने से आ रहे वाहनों का रास्ता रोक दे रही हैं। अब बड़े अधिकारियों को लगा कि यह ओवर ब्रिज वाला प्लान समस्या हल करने के स्थान पर ज्यादा समस्या पैदा करने लगा है। तो आनन फानन में एक दूसरा प्लान बना डाला गया। इसके तहत एक दूसरे ओवर ब्रिज को बनाने का प्लान तैयार कर दिया गया, जो चौकाघाट से प्रारम्भ होकर कैन्ट स्टेशन के आगे लहरतारा पुल के पहले खत्म हो जायेगा। कुछ लोगों ने अनावश्यक रूप से चिल्ल पुकार मचाई कि इस बात का पहले ध्यान क्यों नहीं रखा गया, जब पहला ओवर ब्रिज बन रहा था? इस नये ओवर ब्रिज के बनाने में काफी धन खर्च होगा। अतः इसमें जो लोग शामिल थे, उनके खिलाफ कार्यवाही की मांग भी की गई। परन्तु विपक्षी लोगों ने कहना शुरू कर दिया कि ये लोग वाराणसी की प्रगति में बाधक हैं। इन लोगों का काम ही शासन की महत्वाकांक्षी योजनाओं में बाधा डालना है और इन्ही निकम्मों की वजह से आज तक वाराणसी का समुचित विकास नहीं हो सका है। ये लोग लुच्चे हैं, जिन्हें चुप कराने का एकमात्र उपाय है कि इन्हें जूते लगाये जांय ! तो जूते के डर से, (हो सकता है कि कुछ लोगों को लगे भी हों), लोगों ने शोर मचाना बन्द कर दिया। और इस प्रकार राम राम करके नये ओवर ब्रिज की योजना ने मूर्त रूप लेना प्रारम्भ कर दिया।

अब जैसी कि परिपाटी है, कार्य प्रारम्भ होने के पहले ही काफी विलम्ब कर दिया जाता है और कभी कभी तो कार्य के पूर्ण होने की अवधि के बीत जाने के बाद कार्य प्रारम्भ हो पाता है। अगर इस बात को ठीक से न समझ पा रहे हों तो इसे इस प्रकार भी समझा जा सकता है कि जो ट्रेन, जिस स्टेशन से बन कर चलनी हो, वहीं से एक दो घण्टे विलम्ब से प्रस्थान करे। मैं तो खैर, यह रहस्य आज तक नहीं समझ पाया कि प्रारम्भ वाले स्टेशन से ट्रेन क्यों लेट होकर चलती है ? रास्ते में ट्रैक खाली न मिले या किसी गाड़ी को पास कराना हो, तो लेट होने की बात समझ में आती है। प्रारम्भ होने वाले स्टेशन पर विलम्ब से ट्रेन के रवाना होने का कारण मेरे समझ से, ड्राइवर या गार्ड का स्टेशन आते समय सड़क आदि के जाम में फंस जाना, या कि घर पर ही सोये रह जाना या कि गाड़ी स्टार्ट होने के समय प्लैटफार्म के शौचालय में चले जाना आदि हो सकता है। परन्तु सड़क, ओवर ब्रिज, पुल आदि का निर्माण समय से प्रारम्भ न होने का कारण ठीक से समझ में नहीं आ सका है। ऐसा भी नहीं कि सिनेमा आदि के प्रदर्शन की तरह ये किसी शुभ मुहूर्त का इन्तजार कर रहे होते हैं। खैर, जो भी कारण हो, मैने तो आज तक किसी भी सड़क को निर्धारित तिथि पर प्रारम्भ होते हुए न तो देखा है और न सुना है। तो यह ओवर ब्रिज भी बनने की घोषणा हो जाने के बाद प्रायः सो गया। कई महीने बीत जाने के बाद एकाएक किसी माननीय को ख्वाब आया कि अरे, इस जगह पर तो एक ओवर ब्रिज बनना था। फिर पूछ ताछ प्रारम्भ हुई। हमेशा की भांति सभी विभागों ने अपनी जिम्मेदारी से पल्ला झाड़ लिया और दूसरे विभागों को दोषी ठहराना प्रारम्भ कर दिया। अब माननीय ने बड़े अधिकारियों को अर्दब में लिया। इसका परिणाम बड़ा ही स्वास्थ्यवर्द्धक रहा। एक बड़े अधिकारी, जो निर्माण कार्य से सम्बद्ध नहीं थे और प्रायः सभी विभागों के कार्यों की प्रगति की समीक्षा करते रहते थे, ने इसकी भी समीक्षा कर डाली। वे बड़े अधिकारी विषदन्तहीन सांप की भांति हैं। वे विभागों की लापरवाही, निकम्मेपन एवं लेट-लतीफी को लेकर काफी आक्रोशित हो उठते हैं। उनका वी0पी0 हाई हो जाता है। एकदम से चीखने-चिल्लाने लगते हैं। उनके होठों से शब्दों के बजाय थूक निकलने लगता है। बेचारा अर्दली, मेम साहिबा के निर्देशानुसार दौड़कर उन्हें पानी का गिलास पकड़ा देता है और दूसरे अधिकारियों को कातर दृष्टि से देखता है, मानो कह रहा हो कि क्यों साहब बेचारे की जान लेने पर तुले हो? ऐसे में सम्बन्धित विभाग के अधिकारियों को उन पर दया आ जाती है। अब उनमें से कोई अधिकारी उठ कर सान्त्वना देने के स्वर में कहता है, ' सर, आप अपने को सम्हालें। हम लोगों को आपसे वास्तव में सहानुभूति है। आपको कुछ हो हवा गया तो क्या होगा ? अपने बारे में न सही, मेम साहब के बारे में तो सोचिए, जिनके जीवन के एकमात्र आप ही आधार हैं। हम वादा करते हैं कि अब यह काम हफ्ते दो हफ्ते में प्रारम्भ कर दिया जायेगा। ' यह सब कुछ नियमित रूप से स्थानीय अखबारों में छपने लगा। अखबार से ही लोगों को पता चला कि ओवर ब्रिज का निर्माण किसी माननीय ने बाकायदा नारियल फोड़कर प्रारम्भ कराया। माननीय महोदय ने घोषणा भी कर दी कि यह ओवर ब्रिज दो साल में पूर्ण हो जायेगा। सभी लोगों ने चैन की सांस ली और आश्वस्त हो गये कि अब यह ओवर ब्रिज पांच छः सालों में किसी न किसी तरह, हो सकता है कि स्वतः ही बन कर खड़ा हो जायेगा। नतीजतन कांखते कराहते ओवर ब्रिज का कार्य प्रारम्भ हुआ।

कार्य प्रारम्भ हो तो गया। परन्तु फिर वही ढाक के तीन पात। पहले रास्ता खोद डाला गया। उसके चारों ओर से बैरीकेटिंग करके यातायात की ऐसी तैसी कर दी गई। सड़क पर लम्बा जाम लगना प्रारम्भ हो गया। फिर पता नहीं कब, बरसात प्रारम्भ हो गई। चारों तरफ कीचड़ ही कीचड़। जमीन रपटीली हो गई।

सड़क पर चलने वाले फिसल रहे हैं, गिर रहे हैं। बरसात के कारण काम ठप्प सा हो गया है। धीरे-धीरे सारे मजदूर गायब हो गये। लोग लगातार बड़े अधिकारियों को मोबाइल लगा रहे हैं। उधर अधिकारियों ने मोबाइल उठाना बन्द कर दिया। बड़ी चिल्ल पुकार मची। और अन्ततः बरसात बीत जाने के बाद एक बार फिर विभाग जागा। उसे ध्यान आया कि, अरे, यहां तो एक ओवर ब्रिज बनाया जाना था, जिसके तैयार होने की मियाद काफी पहले समाप्त हो चुकी है। आनन-फानन में उच्च अधिकारियों की एक बैठक आहूत हो गई। इस बैठक में काजू की बर्फी, चाय, पकौड़े आदि के सेवन के बाद अन्त में उपसंहार के रूप में ओवर ब्रिज के पूर्ण करने के नई तिथि की घोषणा कर दी गई। अब एक बार फिर से ओवर ब्रिज के निर्माण का कार्य प्रारम्भ हुआ। परन्तु इस बार वास्तव में विभाग ने निर्माण में पूरी ताकत झोंक दी। रात-दिन धकाधक काम होने लगा। थोड़े-थोड़े दिनों के अन्तराल पर कोई न कोई जन प्रतिनिधि या बड़ा आफिसर काम की समीक्षा करने लगा। यहां तक कि मुहल्ले के आवारा कुत्ते तक खाली समय में आकर इसी ओवर ब्रिज पर टहलते या आराम फरमाते देखे जा सकते थे। वस्तुतः ये आराम नहीं कर रहे होते थे, बल्कि ओवर ब्रिज की प्रगति देखा करते और कभी इसमें शिथिलता या लापरवाही दिख जाने पर भौंक-भौंक कर अपना रोष प्रकट करते थे। इन सबका असर हुआ और ओवर ब्रिज अप्रत्याशित रूप से बहुत तेजी से बनने लगा। लगता था कि ओवर ब्रिज समय से पूर्व ही बन जायेगा और विभाग किसी को मुंह दिखाने के काबिल न रह जायेगा। परन्तु ईश्वर ने लाज रख ली। दो साल पहले, एक मनहूस दिन, जब ओवर ब्रिज पर एक बीम रखी जा रही थी, तो बीम ब्रिज पर न रूक कर नीचे गिर पड़ी। कोढ़ में खाज यह कि, जब केन से बीम उठा कर ब्रिज पर रखी जा रही थी, तो ब्रिज के नीचे ट्रैफिक चालू था। केवल चालू ही नहीं था, बल्कि ब्रिज के नीचे हमेशा की तरह लम्बा जाम लगा था। ब्रिज के नीचे वाहन एवं भीड़ रेंग रही थी। इन्ही दुर्भाग्यशाली लोगों के ऊपर यह बीम हाहाकार मचाती हुई आ गिरी।

फिर क्या था ? हमेशा की तरह निर्माण एजेन्सी के अधिकारी, कर्मचारी आदि भाग खड़े हुए। अब न भी भागे हों, तो क्या फर्क पड़ता है ? कौन सी इनकी वर्दी होती है, कि पहचान लिये जायेंगे ?

ये सब भी इकट्ठा हुई भीड़ का हिस्सा बन कर खड़े हो गये होंगे। काफी हो हंगामा मचा। राहत बचाव आदि सब हो चुकने के बाद ज्ञात हुआ कि अट्ठारह लोगों ने यह नश्वर संसार त्याग दिया तथा मोटी चमड़ी के बेहया किस्म के कई लोग काफी जख्मी होकर भी अप्रत्याशित रूप से जिन्दा बच गये। निश्चित रूप से इन लोगों को अभी कलियुग में कुछ और दुख देखना बदा होगा। फिर जैसा कि होता है, बड़े-बड़े अधिकारियों, माननीयों आदि ने घटना स्थल का निरीक्षण किया और विश्वास कर लिया कि वास्तव में यह बदमाश बीम, जिसे विभाग वाले पुल के ऊपर लिटाने का काम कर रहे थे, अपनी मरजी से, शरारतवश नीचे कूद पड़ा। इसमें प्रथमदृष्टया विभाग की कोई गलती तो नहीं लग रही थी, परन्तु परम्परा का निर्वहन करने के लिए मैजिस्टीरियल इन्क्वायरी बैठा दी गई। अब सभी जान गये हैं कि इन इन्क्वायरियों से कुछ होता हवाता नहीं। यह सब केवल टाइमपास के लिए होता है। पहले ये इन्क्वायरी बैठती है, फिर लेट जाती है, और कुछ दिन बाद सो जाती है। ये सब चोचलेबाजी है। हां, एक बात जरूर हुई कि विभाग के कुछ अधिकारियों पर एफ0आई0आर0 दर्ज करा दी गई। यह बात और है कि हमेशा की तरह, पुलिस की तमाम कोशिशों के बावजूद, कोई अधिकारी पकड़ा नहीं जा सका। बाद में इन लोगों ने अदालतों से गिरफ्तारी पर रोक सम्बन्धी आदेश प्राप्त कर लिए। इससे एक फायदा यह हुआ कि अब ये लोग खुलेआम घूम सकते थे, अपने दफ्तरों में आ जा सकते थे। वैसे यह सब वे लोग पहले से ही कर रहे थे, हां थोड़ा बच बचाकर करते थे। परन्तु अब न्यायालय के आदेश के बाद, तो कोई समस्या ही नहीं रही। उधर अखबारों को भरपूर मसाला मिल चुका था। रोज इस दुर्घटना के बारे में लम्बी चौड़ी रिपोर्ट व फोटो छपती। यह क्रम बहुत दिनों तक, जब तक कि पाठक ऊब नहीं गये, बदस्तूर चलता रहा। इससे देश का बड़ा फायदा हुआ। लोगों को बहुत सी तकनीकी जानकारी, जो पहले नहीं पता थी, मुफ्त में प्राप्त हो गईं, मसलन-पुल पर बीम रखते समय, नीचे चल रहे ट्रैफिक को रोक देना चाहिए जिसके लिए विभाग को जिलाधिकारी, एस0एस0पी0 एवं ट्रैफिक के एस0पी0 आदि को लिखित रूप से अवगत करा देना चाहिए था, फिर भी ट्रैफिक न रूकने की दशा में अपना माथा पकड़ कर बैठ जाना चाहिए था, बीम उठाने वाले क्रेन की पहले से क्षमता ज्ञात कर लेना चाहिए, कि क्या वह बीम को उठा पाने में समर्थ है अथवा आधे रास्ते में ही छोड़ कर भाग खड़ा होगा, स्थानीय और देश-विदेश के अखबारों में साफ साफ छपवा देना चाहिए कि अमुक तिथि को अमुक ओवर ब्रिज पर बीम डाला जायेगा, जिसको अपनी जान प्यारी हो, उस दिन और उसके दो तीन दिन बाद तक उसके नीचे से न गुजरें, क्योंकि पता नहीं बीम उसी समय या दो तीन दिन बाद किसी भी समय पृथ्वी के गुरुत्वाकर्षण शक्ति के कारण नीचे गिर सकता है, जिसमें विभाग का कोई दोष न होगा और मरने वाला खुद अपना जिम्मेदार होगा, आदि आदि।

बहरहाल, यह भी शाश्वत सत्य है कि लोग बड़े से बड़ा गम भूल जाते हैं और याद रख कर होना भी क्या है, जो मर गये, वे तो वापस आने वाले नहीं। यह भी है कि जिसको मरना है, वह तो नियत समय पर मरेगा ही। इसके लिए दूसरों को जिम्मेदार ठहराना बेवकूफी है। जो हुआ, सो हुआ। अब भाई, ओवर ब्रिज तो बनना ही है। फिर धीरे-धीरे कांखते कराहते ओवर ब्रिज का काम प्रारम्भ हुआ। परन्तु इस बार विभाग वाले अड़ गये कि निर्माण के समय पूरा ट्रैफिक न रूका, तो हम काम नहीं करेंगे। फिर ट्रैफिक रोका गया। कुछ दिन तक यह सब चोचलेबाजी होती रही। उसके बाद फिर काम ने रफ्तार पकड़ लिया। जैसे-जैसे दिन बीतते गये, लोग फिर पहले के ढर्रे पर आ गये। लोग फिर भूल गये कि कोई बीम यहां पर गिरी थी, जिसमें कई लोग परलोकवासी हो चुके हैं। अब फिर पहले की तरह ओवर ब्रिज के निर्माण के साथ पुल के नीचे यातायात चलने लगा, ठेले वाले पुल के नीचे अपने निर्धारित स्थान पर ठेले लगाने लगे तथा लोग इन ठेलों पर रुक कर सामान आदि का खरीद फरोख्त करने लगे। अब बीम रखने आदि का काम समाप्त होकर ब्रिज के ऊपर सड़क पर लिंटर ढालने का काम प्रारम्भ हो गया था। ओवर ब्रिज के दोनों ओर लोहे के ऐंगल तथा लोहे की जाली लगाकर अस्थाई रोक लगा दी गई थी ताकि ढलाई हेतु डाली जा रही गिट्टी का मलबा पुल के नीचे न गिरने पाये। चार पांच दिन तक सब कुछ ठीक-ठाक चलता रहा। परन्तु एक दिन जब गिट्टी, बालू और सीमेन्ट का मिश्रण गिराया गया, तो यह मिश्रण जाली एवं लोहे के अस्थाई रोक को लिए दिये, तेज आवाज के साथ पुल के नीचे आ गिरा। एक बार फिर हाहाकार मचा। परन्तु इस बार घटनाक्रम वही होने के बावजूद, घटना की तीव्रता एवं संहारक शक्ति काफी कम होने के कारण, कोई बड़ा हादसा नहीं हो सका। केवल एक व्यक्ति बुरी तरह से घायल हुआ, जिसके ऊपर ज्यादा मैटीरियल गिरा था। लोगों ने उसे तत्परता से अस्पताल पहुंचा दिया। वह पट्ठा भी काफी जीवट वाला निकला। इतनी चोट खाने के बाद भी बेहयाईवश जिन्दा बच गया। जबकि लोगों ने उसके लिए शोक सन्देश आदि तैयार कर रखा था। परन्तु उसने इन लोगों को निराश कर दिया। बाकी थोड़े बहुत चोट वाले राम राम करते हुए भाग खड़े हुए। कौन अपना नाम उजागिर करे ? कहीं पुलिस यह न पूछे कि पुल की ढलाई के समय इश्तहार में सूचना के बावजूद वहां क्या कर रहे थे ? हो सकता है, जितना जख्म मलबा गिरने से न हुआ हो, उससे ज्यादा पुलिस की पूछ ताछ में हो जाय। तो भइया, अखबार वालों ने लाख ललकारा, परन्तु किसी और व्यक्ति के घायल होने की पुष्टि न होनी थी और न हुई। हां, आनन-फानन में कई छोटे अधिकारी वहां पहुंचे, और इन लोगों ने वहां सब कुछ सामान्य पाया। मात्र इतनी सी गलती पाई गई कि उस स्थान पर गिट्टी आदि का मिश्रण निर्धारित मात्रा से ज्यादा गिर गया था, जो मशीन की गलती से हो गया था, जिसमें किसी की कोई गलती नहीं थी। अब मशीन तो मशीन है, वह इन्सानी खोपड़ी का मुकाबला कैसे कर सकती है ? एक विभागीय अधिकारी को तो यहां तक कहते सुना गया, कि बड़े शहरों में इस तरह की छोटी मोटी घटनायें तो घटती ही रहती हैं। इस पर वहां उपस्थित तमाशबीनों ने उसे मारने के लिए दौड़ा लिया, कि साले यही तुम्हारी इन्सानियत है ? इन लोगों ने गाली-वाली तो बहुत दी, परन्तु उसे पकड़ नहीं पाये। इस बार कोई विशेष हो-हंगामा नहीं हुआ और न ही बड़े अधिकारियों आदि ने कोई उछल-कूद की। हां, हिदायतें जारी कर दी गई कि और सावधानी बरती जाय। जब तक कोई और बड़ा हादसा नहीं होता, माना जा सकता है कि सावधानी बरती जा रही है और पुल का दिमाग फिलहाल ठीक-ठाक माना जा सकता है।

• से.नि. पी.सी.एस. आफिसर । सम्पर्क - 9454917134/9140418553

बनारस

शशिभूषण बडोनी

कोरोना काल में लगभग दो वर्षों तक घर में ही कैद रह जाने के बाद यह [illegible] अवसर था जब बाहर कहीं जाने का सुअवसर मिला था। दरअसल मैं [illegible] में राजकीय सेवा से निवृत्त हुआ था, तो पूरी दुनिया कोरोना की [illegible] से त्रस्त थी। मैं कई वर्षों से सेवानिवृत्त होने के बाद देश-दुनिया [illegible] देखता रहता था।

वैसे बड़ा [illegible] देश में तीन वर्षों से रिसर्च सांइन्टिस्ट पद पर कार्यरत [illegible] वहाँ घूम आने के लिए आग्रह कर चुका था। मैंने बेटे को तब [illegible] पहले कुछ महत्वपूर्ण दर्शनीय स्थानों को अपने देश में ही देख [illegible], तब [illegible] का रुख करूँगा।

इधर तीन-[illegible] माह [illegible] बेटे की स्वदेश वापसी हुई और उसकी पोस्टिंग हुई हमारे देश की सांस्कृतिक नगरी बनारस में। मुझे बनारस देखने की कई वर्षों से हार्दिक इच्छा थी, जो बेटे के वहाँ पोस्टिंग हो जाने से अब पूरी हो सकती थी। उसने भी शीघ्र ही मेरी व पत्नी सरस्वती की सहमति से 6 दिसम्बर 2021 को देहरादून से बनारस के लिए रेल में रिज़र्वेशन करवा दिया था। हावड़ा एक्सप्रेस से रात दस दस पर ट्रेन का प्रस्थान समय था। छोटे बेटे ने समय से एक घण्टा पूर्व ही हमें देहरादून के रेलवे स्टेशन पर जाम को देखते हुए पहुँचा दिया था।

हमारे पास कुछ लट्टा-पट्टा (घरेलू सामान) भी ज्यादा हो गया था। सरस्वती ने पहाड़ की कुछ ऐसी खाने पीने की स्थानीय चीजें भी रख ली थीं जो बनारस में नहीं मिल पाती। फिर सर्दियों में पहनने ओढ़ने के लिए ज़रूरी ऊनी कपड़े रखना अनिवार्य था।

बनारस को पहली बार देखने के आकर्षण के अलावा एक और भी उत्सुकता मुझे व सरस्वती को थी, और वह है परिवार में आये एक नन्हें मेहमान हमारे पोते की जो अभी मात्र सात माह का ही था।

यथासमय रात दस दस पर हावड़ा एक्सप्रेस चल देती है। मुझे व सरस्वती को रेल के सफर का अनुभव बहुत कम ही है। हमने रेल में यात्राएँ बहुत कम की हैं। अतः आदत न होने के कारण यात्रा उतनी कम्फर्टेबल नहीं हो पाती हो शायद। लेकिन एक रोमांच का भाव तो रहता ही है। नयी जगह और वह भी बहुत प्रसिद्ध सांस्कृतिक नगरी, तो ऐसे जगह को देखने का कौतूहल तो हर व्यक्ति को सम्भवतः होता ही होगा।

सरस्वती के लिए लोअर बर्थ अनुकूल थी। कोरोना के कारण तब रेल में रात को कम्बल आदि मिलना भी बन्द हो गया था। लिहाज़ा बेटे ने फोन से इत्तिला दे दी थी कि हम लोग रात को ओढ़ने के लिए ऊनी चद्दर या कम्बल कुछ ज़रूर रख लें। अतः हमनें सब अरेन्जमेंट कर रखा था।

सुबह धीरे-धीरे सोने वाले नीचे वाली बर्थ पर फ्रेश होकर चाय वाय पीकर बैठ गये थे। कुछ साथी यात्री अपने साथ नाश्ता आदि पैक कर लाये थे, जो वह खाने लगे। बेटे ने बताया था कि रेल में हमें शायद चाय नाश्ता मिलेगा। किन्तु जब ग्यारह बारह बज गये तो उम्मीद टूटी और हमनें बैग में रखे कुछ फलादि निकाल कर खाये। रेल में सम्भवतः कोराना काल के बाद पूर्व के नियम बदल गये थे।

रेल की खिड़की से चारों ओर के प्राकृतिक दृश्यों, खेतों और काम करते किसानों मज़दूरों को निहारना सफर को आनन्दमय बना रहा था। कुछ आकर्षक स्थानों के मैंने अपने मोबाइल में वीडिओ क्लिपिंग भी बना ली थी।

ट्रेन विलम्ब से चल रही थी। लिहाज़ा वह एक बजे पहुँचने के बजाय लगभग 3 बजे बनारस स्टेशन पर पहुँची। बेटा स्टेशन पर प्रतीक्षारत था। वह ऑफिस से ही छुट्टी लेकर स्कूटर से आया। अतः मैं व सरस्वती ऑटो में तथा बेटा अपने स्कूटर से उसके आवास की ओर चल पड़े। वह बनारस के मशहूर डी. एल. डब्लू. (अब बनारस लोकोमोटिव वर्क्स) के समीप किराये के भवन पर रहता था। हम रेल की उस लम्बी जर्नी से थके तो थे ही, अतः भोजन कर विश्राम करने लगे।

अगले दिन जहाँ बेटा रहता है, उस हाउसिंग सोसाइटी से बाहर निकला यूँ ही सुबह टहलने। आस पास वही भोजपुरी भाषा के मीठी बोली के स्वर। मुझे वाकई इस भाषा को सुनना व कहने का लहजा हमेशा मधुर लगता है। यहाँ चाय के छोटे छोटे ढाबे खूब हैं। साथ ही थोड़ी-थोड़ी दूर पर पान की दुकानें भी। अब जबकि ज्यादातर पान की दुकानें कहीं अन्य गाँव शहर में नज़र नहीं आतीं यहाँ के बनारसी पान की प्रसिद्धि के कारण बहुतायत में हैं। एक अन्य जो बात नोट की वह थी, होटलों में मिलने वाली कुल्हड़ में चाय। प्लास्टिक के डिस्पोसेबल कप से कुल्हड़ की चाय सुरक्षित होती है। इस तरह मुझे बनारस मे यह दोनों पारम्परिक चीज़ें अभी बची नजर आयी।

बनारस में जो मेरे साहित्यिक मित्र हैं, उनसे मिलने की भी उत्सुकता थी ही। मेरे पुराने एक मित्र हैं यहाँ राजेन्द्र आहुति जी। उन्हें बनारस आने की पूरी जानकारी मैंने पहले से दे दी थी। उनसे अक्सर संवाद होता रहता है। अतः वह जल्दी ही एक आध दिन बाद फोन से घर का पता पूछकर पहुँच गये। बहुत स्नेही मित्र हैं। पत्र पत्रिकाएँ खूब खरीदकर पढने का उन्हें शौक है। मुझे भी डाक से भिजवाते हैं। मैं भी यथा सम्भव उन्हें भिजवाता हूँ। उनसे घर पर सबसे परिचय हुआ। और फिर उन्होंने बनारस के कुछ दर्शनीय स्थानों को देखने का निर्देशन भी कर दिया था।

हमें जिन साहित्यकारों से मिलवाना था उनके बारे में भी विस्तार से वार्ता हुई। मिलने जाने का प्रोग्राम भी बना। सोच विचार पत्रिका तथा साखी पत्रिका के कार्यालय से कुछ महत्वपूर्ण पुराने अंक लाने तथा सदस्यता लेने का निश्चय किया।

इनके अलावा बनारस के प्रसिद्ध साहित्य प्रेमी प्रोफेसर वाचस्पति जी से तो मिलना ही था। पॉलिटेक्निक मे हमारी लैक्चरर रही डॉ0 मुक्ता जी से भी मिलना था। प्रख्यात कथाकार काशीनाथ सिंह जी व कवि ज्ञानेन्द्रपति जी से भी मिलने की मेरी दिली इच्छा थी। साथ ही बनारस के कुछ अन्य साहित्यकारों से मिलने की इच्छा थी। यह सब मेरी लिस्ट में था। क्योंकि मुझे अभी एक-डेढ़ माह बनारस ही रहना था। अतः सबसे धीरे-धीरे मिलना होगा।

मुझे सबसे ज्यादा उत्सुकता थी बनारस के घाट देखने की। 'काशी का अस्सी' उपन्यास तो मैं रेल से पढ़ता आ ही रहा था। अतः बेटे को सबसे पहले वहाँ घुमाने का आग्रह मैंने किया। मेरे मन मस्तिष्क में जो अस्सी घाट की छवि बन गयी थी उसको यथार्थ में देखने की बहुत उत्सुकता थी।

अगले दिन बेटे ने सायंकाल को अस्सी घाट देखने का प्लान किया। बेटे व बहू को वहाँ की गंगा आरती दिखाने का उसके किसी मित्र ने सुझाया था। अतः हम अगले दिन 4 बजे सपरिवार वहाँ चल दिये। सबसे पहले अस्सी घाट ही पड़ता है। मैं तो वहाँ पहुँचकर एक सम्मोहन की सी स्थिति में पहुंच गया था। दरअसल वहाँ घाट का क्षेत्र है ही इतना खुला खुला सा। दूर-दूर तक नदी का चौड़ा किनारा। खुले खुले गंगा नदी के घाट...

मैंने अस्सी घाट की सीढियों पर चढकर पत्नी के साथा फोटो खिंचवाई। परिवार के सभी सदस्य मेरी अति प्रसन्नता से हैरान हो रहे थे।

बेटे व पुत्र वधू का आग्रह था कि हम लोगों को यहाँ से दशाश्वमेघ घाट
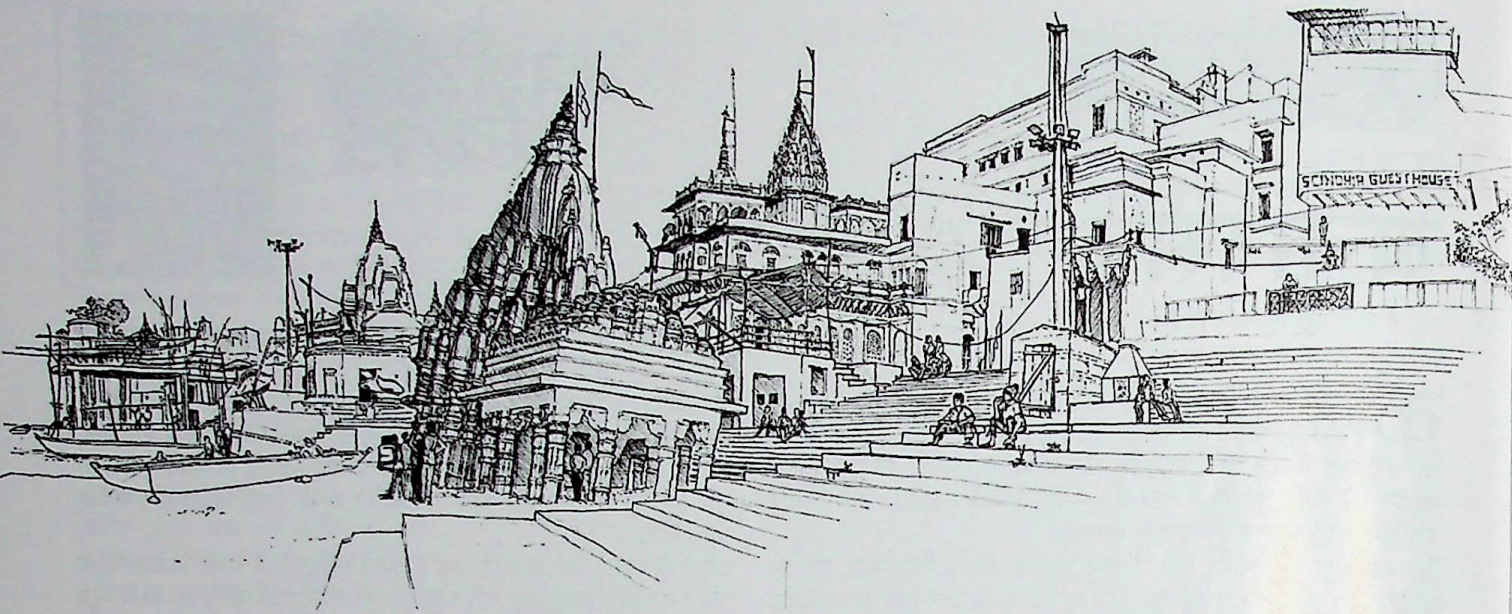
पहुँचना होगा ताकि हम वहाँ गंगा आरती में शामिल हो सकें।

मेरी तो धार्मिक आयोजनों मे विशेष रुचि नहीं होती लेकिन पुत्र वधू व पत्नी की आस्था का ध्यान रखते हुए उनके साथ जल्दी ही उस ओर चल दिये। हम सभी वहाँ के रमणीक व मनमोहक वातावरण में घूमते हुए अच्छा महसूस कर रहे थे। लेकिन अन्धेरा हो गया था। हमारे साथ हमारा नन्हा पोता भी जो मात्र सात माह का था। अतः पैदल चलने में असुविधा को देखते हुए नाव में बैठकर चलने को सभी सहमत हो गये। नाव में नदी तट की प्रकाश की किरणें गंगा नदी में प्रतिबिम्बित होकर बहुत आकर्षक लग रही थीं। (उन दिनों प्रधान मन्त्री के आगमन के कारण गंगा कुछ ज्यादा ही प्रकाशमय हो रही थी।)

मल्लाह हमको रास्ते के घाटों का परिचय बताता व दिखाता जा रहा था। हरिश्चन्द्र घाट, तुलसी घाट, रीवा घाट आदि और तब दशाश्वमेघ घाट पहुंचे। वहाँ गंगा आरती का बड़ा विहंगम दृश्य आयोजित था।

वास्तव में बनारस की गंगा आरती बहुत भव्य ढंग से विहंगम दृश्य प्रस्तुत करती है। वहां प्रस्तुत संगीतमय वातावरण मन को आनन्दित करता है।

हम सभी को उसके मात्र धार्मिक आयोजन की ओर ही नहीं बल्कि पर्यावरणीय दृष्टि से भी सोचकर आरती का आनन्द लेना चाहिए।

कुछ दिनों बाद बाचस्पति जी से मुलाकात का अवसर मिलता है। मैं पहली बार प्रत्यक्ष उनसे मिला। वाचस्पति जी की आत्मीयता के कई प्रसंग मेरी इस बनारस यात्रा को यादगार बना देते हैं। जब वह घर पर आये तो सभी से परिचय हुआ। पत्नी से परिचय के दौरान उनकी वहाँ भ्रमण की रुचि किस स्थान की ओर अधिक है, वह पता लगा चुके थे। उन्होंने स्वयं ही बनारस के समीप ही स्थित विन्ध्यवासिनी मन्दिर (मिर्जापुर जिल में) व शीतला माता मन्दिर में उनको दर्शनार्थ भ्रमण हेतु राजी कर लिया। पुत्र वधू रीकू बनारस में पहले बी0एच0यू0 की छात्रा रह चुकी है, अतः कुछ स्थानों के बारे में जानती है।

अगले दिन सुबह 9 बजे उन्होंने फोन कर उक्त मन्दिर चलने हेतु तैयार हो जाने को हम सबको कहा। बताया कि थोड़ी देर में वह गाड़ी लेकर आ रहे हैं। बेटा तो ऑफिस चला गया था। हम तीनों लोग यूँ तो पहले से ही तैयारी कर रहे थे, वाचस्पति जी के फोन के बाद फटाफट तैयार हो गये। छोटू अयांश जी को भी तैयार कर दिया गया।

ठीक 9.30 सुबह वाचस्पति जी अपने ड्राइवर कृपालू महाराज के साथ घर पर ही पधार गये। और थोड़ी देर बाद हम सब लोगों ने उनकी कार में सवार होकर प्रस्थान किया। पहले बनारस के समीप स्थित लगभग 15 किलोमीटर दूर शीतला माता मन्दिर में दर्शनार्थ गये। गंगा तट पर स्थित यह मन्दिर है तो छोटा ही लेकिन उसके आस-पास तमाम छोटी छोटी पूजा आदि चढ़ावे की सामग्री की दुकानों से अहसास हुआ कि यहाँ माता के मन्दिर में दर्शनार्थ बहुत श्रद्धालु आते होंगे।

जैसा कि मैंने पूर्व में भी उल्लेख किया है कि मुझे मन्दिर में दर्शन करने में धार्मिक दृष्टि से श्रद्धा व रुचि नहीं, लेकिन मैं एक पर्यटक के तौर पर अपनी सहभागिता करता हूँ। मुझे अच्छा ही लगता है। मैं दिखावटी धार्मिक भी नहीं बनना चाहता। मैं परिवार के अन्य सदस्यों की आस्था का कभी विरोध नहीं करना चाहता बल्कि उनके साथ ही रहता हूँ।

शीतला माता मन्दिर दर्शन के बाद विन्ध्यवासिनी की तरफ आते समय मेरी रुचि वहाँ आस पास के छोटे-छोटे गाँव तथा वहाँ के जन जीवन को देखने की थी। वहाँ के प्राकृतिक परिवेश को निहारने में आनन्द मिल रहा था। दरअसल हमारे पहाड़ी गाँव और इधर के मैदान के गाँव के रहन सहन में अन्तर होना स्वभाविक ही था– भौगोलिक भी व रहन सहन में भी।

वापसी में चुनार का किला पड़ता है। वाचस्पति जी विशेष रूप से हमें उसे दिखाने के लिए उसी रास्ते से लाये थे। वह स्थान प्रसिद्ध है। वह चीनी मिट्टी के सामान के लिए भी मशहूर है। वहाँ सूर्यास्त के समय की नदी किनारे की एक तस्वीर बहुत यादगार बन गयी थी। इस प्रकार हमारी यह यात्रा वाचस्पति जी के आत्मीय सहयोग से बहुत यादगार बन पड़ी।

इस यात्रा के एक दो दिन बाद पहली जनवरी को सुप्रसिद्ध कथाकार काशी नाथ सिंह जी का जन्म दिवस था। वाचस्पति जी ने मुझसे वहाँ चलने का प्लान बना कर अवगत करा दिया था कि हम लोग वहाँ उनको शुभकामनाएँ देने चलेंगे।

अतः पहली जनवरी को हम लोग आदरणीय काशी नाथ सिंह जी के आवास की ओर चल पड़े। मैंने इस यात्रा में राजेन्द्र आहुति जी व वाचस्पति जी के रेखांकन बना दिये थे। काशीनाथ सिंह जी का भी बन गया था। जन्मदिवस के दिन उनको दिखाने स्कैच बुक साथ ले गया था। बहुत देर तक उनसे बातचीत हुई। उनको यह पता चलने पर कि मैं देहरादून से हूँ सबसे पहले उन्होंने सुभाष पन्त जी व लीलाधर जगूड़ी के साथ विद्यासागर नौटियाल जी की स्मृतियों की याद की। वह बहुत अच्छी मुलाकात थी। वाचस्पति के सहयोग से एक बड़े लेखक को मिलने का सुखद अवसर मुझे मिला था।

राजेन्द्र आहुति जी के साथ फिर एक दिन प्रसिद्ध साहित्यकार डॉ0 मुक्ता जो कि बनारस में आचार्य रामचन्द्र शुक्ल संस्थान की निदेशक हैं, उनसे भी मुलाकात का अवसर मिला। डॉ0 मुक्ता जी ने पॉलिटेक्निक उत्तरकाशी में जब मैं डी0 फार्मा का छात्र था तो तब हमें पढाया था, आज से बयालीस वर्ष पूर्व। अतः वह हमारी गुरुदेव हैं। इतने वर्षों बाद उनसे मिलना मेरे लिये अत्यन्त सुखद था।

इस प्रकार बनारस में समय गुजर रहा था। अतः कुछ दर्शनीय स्थानों का भ्रमण कर लिया जाए, यही सोच कर बेटे को बताया तो उसने अगले दिन रविवार को सारनाथ भ्रमण करने हेतु सभी को सहमत कर लिया। सारनाथ विश्व प्रसिद्ध पर्यटन स्थल है। भगवान बुद्ध की निर्वाण स्थली।

पहले यहाँ विदेशी पर्यटक भी काफी आते थे, लेकिन कोरोना काल के बाद बहुत कम हो गये हैं। यह पर्यटन स्थल कई किलोमीटर के क्षेत्र में फैला है। भगवान बुद्ध की प्रतिमाएँ कई स्थलों पर हैं। आकार में काफी बड़ी एक मूर्ति दर्शनीय एवं भव्य है। यह काफी रमणीक स्थल है। पर्यटक यहाँ घूमते हुए, मैदान में बैठकर आराम भी कर सकते हैं। कुछ प्राचीन लाल ईंटों से बने बहुत ऊँचे ऊँचे टीले बहुत पुराने होने से पर्यटकों के लिए रोमांचक हैं। मुझे यह यात्रा बहुत सुखद प्रतीत हुई। यहाँ से कुछ ही दूरी पर विपश्यना ध्यान केन्द्र भी है जहाँ कोई भी विपश्यना ध्यान पद्धति के शिविर में ध्यान सीख सकता है, किन्तु उसके लिए रजिस्ट्रेशन ऑनलाइन पूर्व में कराना जरूरी है।

इधर बहुत दिनों से पत्नी बार-बार यहाँ के बहुत प्रसिद्ध व वाराणसी की पहचान अति प्राचीन मन्दिर विश्वनाथ मन्दिर चलने को पुत्र वधू व बेटे से अनुरोध करने लगी थी। मन्दिर में दर्शनार्थियों की बहुत भीड़ दिन-प्रतिदिन हो रही है। ऐसे समाचार प्रतिदिन समाचार पत्रों से ज्ञात हो रहे थे। बेटे ने अपने कार्यालय के मित्र से विश्वनाथ मन्दिर के बारे में जानकारी प्राप्त करनी चाही तो उनका उत्तर मुझे बहुत सार्थक [illegible] स्थायी घर बनारस ही है और उसने बताया कि उसे याद है कि उसने [illegible] साल पहले एक दिन मन्दिर में दर्शन किये थे। तब से दुबारा [illegible] अभी तक जाने की हिम्मत नहीं होती। मुझे लगा कि बेटे के मित्र [illegible] प्रगतिशील है।

और इध[illegible] द्वारा मन्दिर के पुनर्निर्माण तथा उसे भव्य बनाये जाने के समाचार [illegible] की भीड़ दिन प्रतिदिन बढती ही जा रही थी। इस कारण सुबह से [illegible] करने वालों की भीड़ कतारों में लग जाती थी।

बेटे ने अ[illegible] 6 बजे चलने हेतु हमें सूचित कर दिया। सुबह जल्दी जाने से सम्भवतः जल्दी दर्शन कर हम लोग समय से घर लौट आयेंगे। यह जानकर हमने सुबह जाना तय किया।

अगले दिन हम तीनों (पत्नी व पुत्र के साथ) यथा समय घर से चल पड़े। जनवरी माह की अति शीत लहरी के कारण पुत्रवधू व पोते का घर पर ही रहना ठीक था। सात बजे जब मन्दिर पहुंचे तो वहाँ लम्बी लम्बी कतारें पँक्तिबद्ध थी। एक कतार वी.आई.पी. टिकटवाली कुछ छोटी थी। बेटा भी तुरन्त ही पता करते हुए उक्त टिकट भी ले आया तो हम लोग उस वी.आई.पी. कतार में पँक्तिबद्ध हो गये। बहुत प्रतीक्षा (लगभग दो-ढाई घण्टे) के पश्चात मन्दिर में दर्शन कर पाए।

उसके पश्चात बेटे को व सरस्वती को किसी ने बता दिया था कि विश्वनाथ मन्दिर में दर्शन के बाद निकट स्थित भैरव मन्दिर में भी दर्शनार्थ जाना जरूरी है। खैर साहब खड़े खड़े थकान तो थी ही किन्तु अब उनकी आस्था का सवाल था। मुझे भी उनके साथ जबरन जाना ही था। लेकिन इस मन्दिर में अत्यधिक भीड़ के कारण बहुत दुर्गति हुई उस दिन ।

पहले से ही थके हुए हम लोगों को भी उस मन्दिर में लम्बी लम्बी कतारों में लगना पड़ा।

वहाँ खड़े होने के लिए भी यदि खुली जगह होती तो भी ठीक होता लेकिन वहाँ बहुत सँकरी गलियों में पुनः खड़े खड़े थकना पड़ा। और उससे भी अधिक जो विडम्बना वहाँ देखने को मिली उसकी जानकारी पाठकों के हित मे देना जरूरी समझता हूँ।

जैसा कि मैंने बताया कि हम लोग पहले ही सुबह 7 बजे से लम्बी लाइन में लगकर काशी विश्वनाथ मन्दिर से लौटे थे। पुनः लगभग 1 घण्टे यहाँ भैरव मन्दिर में खड़े खड़े थक गये थे। मन्दिर के निकट पहुँने वाले ही थे कि वहाँ पर तैनात पुलिस के कुछ जवानों ने अपने कुछ जानने वालों को निकासी द्वार से प्रवेश करा दिया था। (मन्दिर में एक प्रवेश द्वार व दूसरा निकासी का द्वार था।) इस कारण मन्दिर में बहुत भीड़ बढ़ गई थी। हमने जब मन्दिर में प्रवेश किया तो वहाँ छोटी जगह व कम ऊँचा मन्दिर होने के कारण साँस लेने में परेशानी का अनुभव होने लगा था... । मैंने बेटे व पत्नी को बताया कि मेरी तबीयत कुछ ठीक नहीं है.. चक्कर आ सकता है। तुरन्त बाहर चलो, लेकिन निकासी द्वार पर पुलिस वाले रोकने लगे। यह कहते हुए कि अभी नहीं जा सकते। तबीयत ठीक न होने पर कुछ समझदार लोगों के कहने पर किसी तरह हम लोग बाहर आ गये।

इस प्रसंग से मेरी बनारस यात्रा का प्रसंग कुछ विडम्बनाजनक जरूर हो गया फिर भी मैं इस सन्दर्भ को अपनी सुखद बनारस यात्रा का एक अपवाद ही मानता हूँ।

● ग्राम व पोस्ट : शमशेरगढ़, देहरादून-248014 | सम्पर्क - 9410550100
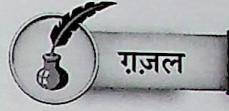
बनारस

गिरीश पाण्डेय

स्वागत करूँ हजार बनारस तो आइये
धर्मों का कारबार बनारस तो आइये

ग़ालिब भी आये थे यहाँ तुलसी भी थे बसे
कबिरा खड़ा बजार बनारस तो आइये

गंगा के घाट पर लगी संतों की भीड़ है
डुबकी से भव हो पार बनारस तो आइये

शिव जी के ज्योतिर्लिंग में काशी का नाम है
चढ़ता है बस मदार बनारस तो आइये

साधू व राँड़ साड़ ही शोभा हैं शहर की
गलियों में हैं निगार बनारस तो आइये

चिंता नहीं है शाम की बस पान शान है
मिलता सदा उधार बनारस तो आइये

मरना भी जलसा है यहाँ मिलता है शिव का धाम
गंगा हैं देती तार बनारस तो आइये

बाबा का कारिडोर भी है भव्य बन रहा
बदलाव की बयार बनारस तो आइये

3 [illegible]आ जो एक बार यहाँ से नहीं गया
यह वेद का है सार बनारस तो आइये

● एन.6/8-2, इंदिरा नगर, चितईपुर, वाराणसी-221006
सम्पर्क - 9451229071
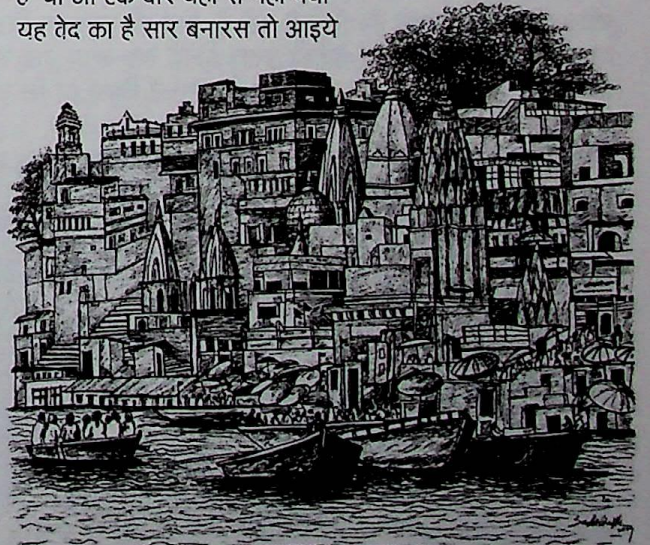
समय की शिला पर

रश्मि शील

काशी हिंदू विश्वविद्यालय महामना पंडित मदन मोहन मालवीय के स्वप्न और संकल्प से निर्मित विश्व विद्यालय है। कोलकाता की सार्वजनिक सभा में पहली बार विश्व विद्यालय की स्थापना की औपचारिक घोषणा की गई। 14 फरवरी 1916 को वसंत पंचमी के दिन वाराणसी के सेण्ट्रल हिंदू कॉलेज के काशी नरेश हाल में विश्वविद्यालय का शिलान्यास किया गया। महात्मा गांधी और भारत के वायसराय लार्ड हार्डिंग मुख्य अतिथि थे।विश्वविद्यालय की आधारशिला रखते समय वायसराय ने अपने वक्तव्य में कहा था,"ऐसी क्या बात है कि भारतवर्ष के सुदूर प्रदेशों से इतने विशिष्ट महापुरुष यहाँ पर एकत्र हुए है, ऐसा कौन सा आकर्षण है, जो सबको इतने प्रबल रूप से प्रभावित कर रहा है।"

• वायसराय की जिज्ञासा का उत्तर लेजिस्लेटिव असेम्बली में दिए गए उनके भाषण से मिल जाता है। उन्होंने कहा, "इस विश्वविद्यालय में संकुचित साम्प्रदायिकता को आश्रय नहीं दिया जाएगा वरन् उस व्यापक उदारता और धार्मिक भावना को प्रोत्साहन दिया जाएगा जो मनुष्य के बीच भ्रातृत्व की भावना का विकास कर सके...मैं धर्म की सजीव शक्ति में विश्वास करता हूँ।हमारे विद्यालयों में धार्मिक शिक्षा की कमी का अनुभव बहुत दिनों से हो रहा है। ब्रिटिश सरकार ने पिछले साठ वर्षों में जो शिक्षा प्रणाली चलाई उसमें धार्मिक शिक्षा की व्यवस्था न होने से जो दुर्भाग्यपूर्ण परिणाम हुए, मैं उनका वर्णन नहीं करना चाहता। मुझे संतोष यही है कि इस शिक्षा केन्द्र से यह कमी दूर हो रही हैं।

• वर्ष 1954 में काशी विश्वविद्यालय में कवि सम्मेलन का आयोजन किया गया।जिसमें तत्कालीन अनेक ख्यातिलब्ध कवि आमंत्रित थे। उस कवि सम्मेलन में कविवर हरिवंश राय बच्चन ने अपनी रचना मधुशाला का पाठ किया। काव्य पाठ से पूर्व उन्होंने वक्तव्य भी दिया, "कायस्थ हूँ, और द्विवेदी जी जैसे विद्वान मानते हैं कि पृथ्वीराज रासो में लिखा है–कायस्थ पिएं तो, मदिरा कायस्थ पीते खूब हैं। मैं पीता नहीं हूँ, फिर भी मधुशाला लिखी।" दरअसल बच्चन जी आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी पर व्यंग्य कर रहे थे क्योंकि उन्होंने 'हिंदी साहित्यः उद्भव और विकास' में लिखा था कि बच्चन की मधुशाला का जादू अब उतर गया है।

• एक बार जयशंकर प्रसाद निराला जी के साथ कुंवर चंद्र प्रकाश के आवास पर पहुँचे। संयोग से चंद्र प्रकाश जी घर पर नहीं थे।प्रसाद उनके घर के बाहर रखी एक टूटी कुर्सी पर बैठ गए।चंद्र प्रकाश [illegible] ने [illegible] पर उन्हें इस प्रकार टूटी कुर्सी पर बैठे देखा तो अत्यन्त दुखी [illegible] वे [illegible]काल अन्दर गए और एक बेंत की कुर्सी लाकर प्रसाद जी से उस [illegible] आग्रह कर बोले,"मुझे आश्चर्य है कि आप तो अनजाने आकर [illegible] किंतु यह जर्जर कुर्सी कैसे अभी तक टिकी हुई है? इस [illegible] मुँह धोते समय पानी से भरा लोटा रखते हुए भी डरता हूँ [illegible] न जाए ! निश्चय ही भीषण हठयोग के बल पर उसने स्वयं [illegible] बोलने से रोक रखा है।" सुनकर प्रसाद जी तो शांत रहे और [illegible] बेंत की कुर्सी पर बैठ गए परन्तु निराला जी ने कहा,"यह [illegible] कितनी भी कमजोर हो, टूटेगी तो तभी जब इस पर बोझ पड़े।बा[illegible] साहब [illegible] शरीर रूप में दिखते हुए भी मूलतः विचार मर्यादा स्वरूप हैं,का[illegible] काया।काव्य काया कितनी भी विराट हो या भारी भरकम हो, वह बोझ नहीं होती।"

कथा सम्राट प्रेमचंद जलोदर रोग से पीड़ित थे और अशक्त अवस्था में शैय्या पर लेटे हुए थे। प्रसाद जी और निराला जी उनसे मिलने गए। उन्हें देखकर प्रेमचंद जी ने कहा, "मैं तो अब बेड पर गिर चुका हूँ। समझ नहीं पा रहा हूँ कि क्या करूँ... बच्चें अभी बहुत छोटे हैं, अगर मैं सही नहीं हो पाया तो उनका क्या होगा ?यही सब सोच कर मैं अत्यंत परेशान हूँ।

निराला जी उन्हें सांत्वना देते हुए बोले, "आप आगे की क्यों अभी से ढोने को तत्पर हैं? जो समाज के हिस्से की चिंता है, वह उसी के कंधे पर रहने दीजिए। यह समाज स्वयं में सक्षम है, इसके बल और सामर्थ्य पर शंका करने की आवश्यकता नहीं है, इसके वृषभ कंधें अपनी जिम्मेदारी ढो लेंगे।'

• नज़ीर बनारसी की शायरी में बनारसी रंग और स्थानीय संस्कृति की झलक मिलती है। एक तरह से बनारसी संस्कृति के उर्दू प्रवक्ता सी थी उनकी शायरी। गांधी जी की हत्या के बाद काशी में जो शोक सभा हुई ,उसमें उनके शेर सुनकर पूरी सभा रो पड़ी। उन्होंने शेर पढ़ा-

ज़मी वालों ने तेरी कद्र जब कम की मेरे बापू
ज़मीं से ले गये तुझको उठाकर आस्मां वाले ।

एक बार काशी विश्वविद्यालय के दीक्षांत समारोह में पं0 ओंकार नाथ ठाकुर के संगीत गायन का कार्यक्रम था।विद्यार्थियों से खचाखच भरे एम्फ़ीथियेटर में छात्र सबको हूट कर रहे थे।पं0 जी ने मंच पर आते ही प्रार्थना की, "बच्चों ,मेरे धौले (सफेद बाल) पर धूर मत डालना। उसके बाद उन्होंने मन से गाया और पूरी सभा ने उतने ही मन से उनका गायन सुना।

उन्होंने कामायनी का नृत्य रूपक तैयार किया था।'रुक जा, रुक जा ओ निर्मोही का गायन समझाते- "एक रुक जा के बाद दूसरा रुक जा और जोर से होना चाहिए" यही बात कलाकार समझ नहीं पा रहे थे और ओंकारनाथ जी को पूर्णता आए बिना चैन नहीं था इसीलिए वे बार-बार रिहर्सल करा रहे थे। किसी ने पूछा, ऐसा करना क्या जरूरी है? "पं. जी किंचित आवेश में बोले, "हाँ, क्यों कि सुनने वाला तबतक दूर चला गया होगा।यह बात समझते ही कलाकारों को अभिनय करना आसान हो गया।

● 547 क/245 शीतला पुरम्, राजाजीपुरम-1, लखनऊ 226017
सम्पर्क - 9235858688

काशीराज चेतसिंह (खण्डकाव्य)

पं. दीनानाथ तिवारी

प्रका. शारदा संस्कृत संस्थान, जगतगंज, वाराणसी,
मूल्य रु. 100/-पृ. 80
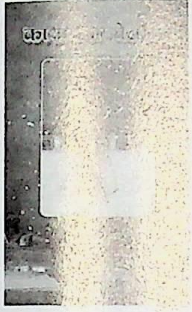
काशी के सामाजिक, सांस्कृतिक, साहित्यिक एवं सार्वजनिक जीवन के अपने समय के अतिशय सम्मानित हस्ताक्षर पं. दीनानाथ तिवारी (आविर्भाव-30 जनवरी 1927-तिरोधान 2 जनवरी, 2005) की अब तक अप्रकाशित पड़ी कविताओं का एक अंश 'काशीराज चेतसिंह' शीर्षक खंडकाव्य दिनांक 11 जून को स्थानीय हिन्दुस्तान इन्टरनेशनल में आयोजित भव्य समारोह में पद्मश्री डॉ. के.के. त्रिपाठी, उ.प्र. के आयुष मंत्री डॉ. दयाशंकर मिश्र 'दयालु', पूर्व मंत्री एवं सांप्रतिक विधायक डॉ. नीलकंठ तिवारी, प्रो. ए.के. जैन, श्री सतीश चौबे, श्री अजय उपाध्याय, डॉ. जितेन्द्र नाथ मिश्र तथा विभिन्न क्षेत्रों के शताधिक गणमान्य लोगों की उपस्थिति में लोकार्पित होकर काव्यप्रेमियों के लिए सुलभ हुआ, यह अत्यन्त सुखद एवं सन्तोषप्रद परिघटना है।

पं. दीनानाथ तिवारी, भारतीय स्वतंत्रता आन्दोलन के लिए सर्वात्मना समर्पित युवकों की टोली के प्रमुख सदस्य के रूप में जाने जाते थे और इस क्षमता में एक बार तत्कालीन पुलिस सुपरिंटेंडेंट मि0 हैरिस की गोली का शिकार होते बाल-बाल बच गये थे। वे शुरू से ही प्रतिभाशाली छात्र थे और पढ़ाई-लिखाई का क्रम भी चलता रहा लेकिन स्वनामधन्य पं. कमलापति त्रिपाठी के नेतृत्व में समाजसेवा और सामाजिक विकास के कार्यों में इनका मन अधिक रमता था। इनके क्षेत्र चौबेपुर में सुभाष इंटरमीडिएट कालेज की स्थापना का प्रयास आरंभ हुआ तो उसमें इन्होंने बढ़चढ़कर योगदान किया। बाद में उस विद्यालय के शिक्षक, उपाचार्य तथा प्राचार्य पदों पर रहते हुए उन्होंने इस क्षेत्र में शैक्षिक विकास का उल्लेखनीय कार्य किया। मोलनापुर में उच्च माध्यमिक विद्यालय की स्थापना में भी उनकी महत्त्वपूर्ण भूमिका थी। कुल मिलाकर उनका जीवन सार्वजनिक था। वे अपने आस-पास के बड़े समाज का दुःख-सुख जीते थे और समाज की भलाई के लिए जो भी बन पड़ता करते थे।

ऐसे में उन्हें जो नैसर्गिक काव्य प्रतिभा प्रकृति-प्रदत्त थी, वह समय-समय पर प्रकट तो अवश्य होती रही लेकिन उसे सहेजने, सँवारने तथा परिष्कृत स्वरूप में प्रकाशित करने की ओर वे जीवन काल में बिल्कुल ध्यान न दे सके। कुछ वर्षों पूर्व उनकी धर्मपत्नी के ध्यान में ये कविताएँ आईं तो उनके सुपुत्रों सर्वश्री कमल कुमार तिवारी, अमिताभ तिवारी एवं आंजनेय तिवारी तथा सुपुत्री ज्योत्स्ना त्रिपाठी ने इनके यथाशीघ्र प्रकाशन का मन बनाया। पारिवारिक सम्बन्ध के दायरे में निकटस्थ डॉ. माधवी तिवारी तथा उनकी सुपुत्री आ0 मालविका का सहयोग मिलना ही था और काव्यकृति को प्रकाश में लाने का काम तेजगति से प्रारंभ हो गया। लेकिन बीच में कोरोना के कहर ने सारे क्रियाव्यापार स्थगित कर दिये।

इस वस्तुस्थिति में प्रस्तुत काव्यकृति को यथापेक्षा भव्य, सुदर्शन, शुद्ध एवं स्तरीय स्वरूप नहीं प्राप्त हो सका तो इसे अस्वाभाविक नहीं कहा जा सकता। जैसे भी हो पुण्यश्लोक दीनानाथ तिवारी कृत खंडकाव्य 'काशीराज चेतसिंह' पाठकों के सामने है और यह अपने आप में एक बड़ी उपलब्धि है। यह महाकवि कालिदास, गोस्वामी तुलसीदास और महाकवि जयशंकर प्रसाद से भावित एवं प्रभावित काशी के एक बड़े किंतु अज्ञातप्राय कवि की प्रतिभा का प्रमाण है।

काशीराज चेतसिंह का राज्यकाल बहुत संक्षिप्त और अतिशय संघर्षपूर्ण रहा है। उनके संबंध में बहुत प्रामाणिक जानकारी भी अधिक नहीं है। काशी राज्य के संस्थापक मनसा राम माने जाते हैं, किंतु उन्होंने अपने बुद्धिबल से इसे अपने पुत्र बलवन्त सिंह के लिए ही स्थापित किया था। महाराज बलवंत सिंह ने रामनगर दुर्ग के निर्माण से लेकर गंगापुर, काशी और अन्यत्र अनेक प्रकार के निर्माण कराये तथा काशीराज्य के विकास और विस्तार का इतिहास बनाया। उनकी विधिवत् पाणिगृहीता रानियाँ पुत्रवती नहीं हो पाईं किंतु एक वीर क्षत्राणी पन्ना को उन्होंने प्रियतमा के रूप में महल में स्थान दिया और उससे चेतसिंह जैसा राजोचित गुणों से सम्पन्न बहादुर पुत्र प्राप्त हुआ। किशोरावस्था तक पहुँचते-पहुँचते चेतसिंह की वीरता, न्यायप्रियता, प्रजावत्सलता आदि गुणों की सार्वत्रिक प्रशंसा सुनकर महाराज बलवंत सिंह के हर्ष की सीमा नहीं थी। लेकिन जो लोग उत्तराधिकार की आस लगाये बैठे थे उन्हें चेतसिंह फूटी आँख नहीं सुहाते थे। अतः षडयंत्रों और दुरभिसंधियों का जो दौर चला उससे व्यथित महाराज ने खाट पकड़ ली और वे एक दिन परलोकवासी हो गए।

महाराज का मृतक शरीर पड़ा था और उत्तराधिकार को लेकर संघर्ष का एक अशोभनीय वातावरण बन गया था। बुद्धिमती पन्ना ने सुझाव दिया कि जो महाराज के रक्तसम्बन्धी होने का दावा कर रहे हैं वे पहले शव को श्मशान ले जाकर दाह संस्कार तो करें। शवयात्रा श्मशान की ओर चली और इधर तोपों की सलामी के बीच रामनगर दुर्ग में चेतसिंह का विधिवत् राज्याभिषेक हो गया।

अब बैर तो बढ़ना ही था और पारिवारिक शत्रुओं के लिए अवसरों की कमी नहीं थी। यह संक्रांतिकाल था जब अवध के नवाब कमजोर पड़ रहे थे और अंग्रेज क्रमशः सत्ता हथिया रहे थे। इसी क्रम में काशी राज्य भी उन अंग्रेजों के अधीन आया जिनका मकसद केवल लूटना था। बुद्धिमान चेतसिंह तो वारेन हेस्टिंग्स का अपेक्षित स्वागत सत्कार करके उसकी शर्तों को पूरा करने के लिए कुछ समय माँगने आए थे। राजा की वीरता और विनम्रता से प्रभावित हो उसने आतिथ्य का आमंत्रण स्वीकार भी किया था किंतु चेतसिंह के शिवाला पहुँचते-पहुँचते उसने भारी सैन्य बल के साथ एकबारगी धावा बोल दिया। इस अवसर पर रानी पन्ना के युवावस्था के प्रेमी नन्हकू सिंह ने जान पर खेलकर चेतसिंह को सकुशल रामनगर दुर्ग पहुँचवाया। वह महाराज बलवन्त सिंह को यावज्जीवन अपना शत्रु मानता था किन्तु एक समय की अपनी प्रेयसी पन्ना के पुत्र की रक्षा के लिए अपनी जान दे सकता था।

चेतसिंह की जनप्रियता, रानी पन्ना की बुद्धिमत्ता और सबसे बढ़कर नन्हकू सिंह के अद्भुत शौर्य के कारण वारेन हेस्टिंग्स को जान बचाकर भागना पड़ा। यह कथा इतिहास के साथ ही लोक में भी अनेक रूपों में प्रसिद्ध है। कवि पं. दीनानाथ तिवारी बड़ी दृढ़ता के साथ इसे भारतीय राज्यक्रान्ति की पहली घटना मानते थे। उनकी दृष्टि में राजशक्ति और जनशक्ति का समन्वय हो तो स्वतंत्रता का अपहरण करने वाली साम्राज्यवादी ताकतें कभी सिर नहीं उठा सकतीं। काव्य की रचना का प्रयोजन इन पंक्तियों में सर्वथा स्पष्ट है–

यह विजय पर्व का दीप निरंतर जलता रहे अवनि में।
एकतासूत्र का ही प्रतीक बन जलता रहे अवनि में।।

काशीराज चेतसिंह के उपर्युक्त सम्पूर्ण जीवन कथा को सात सर्गों में विभाजित करके कवि ने यथास्थान काशी की महिमा, काशी विश्वनाथ, रामनगर तथा अन्यान्य विषयों का सुंदर निरूपण किया है। उसने नन्हकू सिंह की कहानी ही प्रसाद जी से नहीं प्राप्त की है कामायनी के कुछ छन्दों को भी साधने का सफल प्रयास किया है। पुस्तक अभी सामने आई है। कवि की दूसरी रचनाओं के साथ इसके परिमार्जित संस्करण की अपेक्षा है। तथापि जो उपलब्ध है उसे देखते हुए अपनी काशी की इस रचनात्मक प्रतिभा के प्रति हम गौरवान्वित हैं।

● जितेन्द्रनाथ मिश्र । सम्पर्क - 9451724544

सपनवाँ न भीजई हो

(हरिराम द्विवेदी के सृजन सरोकार)

संपादक – डॉ. रामसुधार सिंह,
प्रकाशक - लोकायत प्रकाशन, वाराणसी
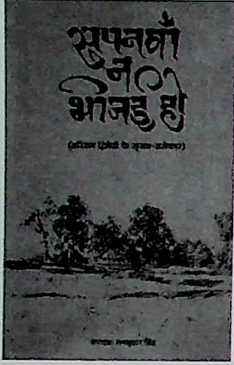
कवि हरिराम द्विवेदी जी हरि भैया के नाम से भी बहुधा जाने-पहचाने जाते हैं। यह पहचान उन्हें आकाशवाणी के चर्चित किसानों पर आधारित कार्यक्रम से मिली। आज स्थिति यह है कि तीन पीढ़ियों में बड़े दुलार और सम्मान से हरि भैया नाम से संबोधित होते रहे हैं। सहज एवं सरल व्यक्तित्व के धनी हरि भैया लोगों को अपनी आत्मीयता के रस से सिक्त करते रहे हैं। जो भी निकट आया, सदैव निकट ही रहा। यही प्रभावमयता इनके गीतों एवं लोकगीतों की भी है। वैचारिक गोष्ठी में हरि भैया कितना ही गूढ़ विमर्श करें परंतु गीतों को सुनाये बिना लोग उन्हें वाणी को विराम करने का मौका नहीं देते क्योंकि उनके गीतों का जादू सबके सिर पर चढ़कर बोलता है, जो उनके गीतपुरुष की लोकप्रियता का ही परिणाम है। वे सुनाने में ना-नुकुर करने में कत्तई समय नहीं गँवाते। ऐसे सहज एवं सम्मोहक व्यक्तित्व वाले हैं हरि राम द्विवेदी जी। उन्हीं पर केन्द्रित पुस्तक 'सपनवा न भीजई हो' का प्रकाशन कई मायने में महत्त्वपूर्ण है, जिसका संपादन समीक्षक डॉ. रामसुधार सिंह ने किया है जिसे लोकायत प्रकाशन, सत्येन्द्रगुप्त नगर, लंका, वाराणसी तथा अशोक मिशन एजुकेशनल सोसाइटी ने संयुक्त रूप से प्रकाशित किया है।

गीत और लोकगीत में हरिभैया की विशिष्ट पहचान है। खड़ी बोली और भोजपुरी दोनों में गीत लिखने की उनमें अद्वितीय पटुता है। काशी, गंगा और गंगातीरी संस्कृति इनके गीतों के केन्द्र में रही है। गंगातीरी संस्कृति ज्ञान, कर्म, भक्ति और जीवनोत्सव से समृद्ध है। गंगातीरी संस्कृति की छटा इनके गीतों में अभिव्यंजित हुई है पूरी मूल्यपरकता के साथ। पूरी शिद्दत के साथ वे गीतों में गाँव की सोंधी गंध और सम्मोहिनी प्रकृति की सूक्ष्म उद्भावना करते हैं। ग्रामजीवन के परिदृश्यों और जीवनानुभूतियों से उनके गीत समृद्ध हैं, जिनमें उनके कवि मन की संवेदनशीलता से प्रकृति के अनेक चित्रात्मक दृश्य उभारते हैं। लोक संपृक्ति इनके गीतों में निहित संजीवनीशक्ति है। उनके गीतों में लोकमन का प्रभावी अभिव्यंजन हुआ है। देशज शब्दों के द्वारा प्रकृति एवं जीवन संबंधों की रागात्मक प्रस्तुति करने में हरि भैया सिद्धहस्त हैं, गीतों में उनकी शब्द सिद्धिता देखने योग्य है। वे शब्दों को गुनते हैं, धुनते हैं और जीवन रंगों को नये धुन देते हैं। इसी से उनके गीतों में लोकधुन और लोकरंगत की भीनी सुगंध की विद्यमानता रहती है। बिम्बात्मकता, ध्वन्यात्मकता तथा संगीतात्मकता सहज ही उपजी हैं। वे लोकजीवन और लोकचेतना के समर्थ रस सिद्ध कवि हैं।

जीवनमूल्यों के साथ राष्ट्रीय चेतना को वे अपने गीतों में परिधिगत करते हैं। वे अपने गीतों में प्रेम के अन्यान्य रूपों को सहेजते हैं। ऐसे विलक्षण एवं समर्थ कवि की रचनाधर्मिता को एक पुस्तक में सँजोने का महत्त्वपूर्ण कार्य संपादक डॉ रामसुधार सिंह जी ने किया है। यद्यपि हरिभैया के व्यापक काव्यफलक के वैशिष्ट्य को समेटना आसान नहीं है फिर भी संपादन कौशल से गीत पुरुष के प्रत्येक पक्ष को रेखांकित करने में संपादक को सफलता मिली है। वे बधाई के पात्र हैं।

भारतीय सांस्कृतिक मूल्यों के गायक हरिभैया की काव्यधर्मिता को समझने के लिए यह पुस्तक अत्यंत सहायक होगी, ऐसा विश्वास है। पुस्तक में बावन आलेख हैं। इसके साथ ही दो आलेख वकलम खुद हरि भैया के हैं, साथ ही ग्यारह रचनाओं को भी संकलित किया गया है। बावन लोगों में चौबीस लेख कवि कृतित्व खंड के तथा अट्ठाइस लेख कवि व्यक्तित्व खंड के हैं। कवि कृतित्व खंड से उनके व्यक्तित्व को और कवि व्यक्तित्व खंड से उनके कृतित्व को भी भलीभाँति समझा जा सकता है। दोनों खंड अलग-अलग होते हुए भी एक दूसरे के पूरक हैं। इन लेखों में वैविध्यपूर्ण काव्यफलक की सुंदर विवेचना हुई है। उनके कृतित्व का विवेचन करने वाले लेखक इस समय के सुधी आलोचक हैं। अनंत मिश्र, जितेन्द्रनाथ मिश्र, सत्यदेव त्रिपाठी, अवधेश, बलराज पांडेय, चन्द्रकला त्रिपाठी, वशिष्ठनारायण त्रिपाठी, सदानंद शाही, चन्द्रदेव, बलभद्र, ओमधीरज, सविता श्रीवास्तव, फादर शैलेश, सदानंद सिंह, हिमांशु उपाध्याय, देवीप्रसाद मिश्र, दयानिधि मिश्र, अनूप मिश्र, विजयनाथ मिश्र, पाण्डुरंग पुराणिक, मंजरी पाण्डेय, सविता भारद्वाज, गौतम अरोड़ा सरस, सिद्धनाथ उपाध्याय, यशस्वी मिश्र, प्रकाश उदय, रामसुधार सिंह आदि के लेख हरिभैया के व्यक्तित्व एवं कृतित्व पर समग्रता के साथ प्रकाश डालने में समर्थ हैं। इसके साथ अन्य सभी लेख कुछ न कुछ नया करने की भी विशिष्टता रखते हैं। सभी लेख हरिभैया की गहन भाव भंगिमा को उद्घाटित करने में सक्षम हैं। सभी लेखों में एक लेख प्रकाश उदय का अलग अंदाज का है। लेख भोजपुरी में लिखा गया है। भोजपुरी में लिखा लेख इस मायने में महत्त्वपूर्ण है कि उन्होंने इस ओर ध्यान खींचा है कि भोजपुरी में आम जीवन के जो [illegible] सरा [illegible]ये गये या प्रयोग में कम प्रयुक्त हो रहे हैं, उसे हरिभैया के [illegible] के [illegible]कगीतों में हम देख सकते हैं। भोजपुरी शब्दकोश के निर्माण [illegible] गीत बहुत काम के हैं। उनके लोकगीतों में लोकधुन की [illegible] हैं। इस पुस्तक के प्रकाशन एवं संयोजन में प्रकाश उदय [illegible] शाही के योगदान को विस्मृत नहीं किया जा सकता। कहने [illegible] कि इसके प्रकाशन में इन लोगों का योगदान संपादक डॉ. राम[illegible] सिं[illegible] जी से कम नहीं है। सभी बधाई के पात्र हैं।

हरि भैया को रमता जोगी कहें या बैन फकीरा कहें या हीमान कहें, उनके गीतों में जीवनमूल्यों की निश्छल धारा विभिन्न राग रागनियों में प्रवाहित होती दिखती है। उम्र के इस पड़ाव के लोक और लोकभाषा की निष्ठा अप्रतिम है। शतशः नमन।

● प्रो. श्रद्धानन्द

'हक़ अदा न हुआ' : (संस्मरण)

लेखक– डॉ. महेंद्र नाथ राय,
प्रका. प्रतिश्रुति प्रकाशन, कोलकाता, प्र0सं0 2022

'हक़ अदा न हुआ'– डॉ. महेन्द्रनाथ राय की संस्मरणात्मक आत्मकथा है–
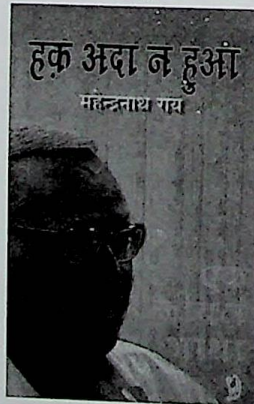
जहाँ आत्मालोचन शैली में आत्म-स्वीकृतियाँ दर्ज हैं। प्रो. महेन्द्रनाथ राय छायावादी भावबोध में डूबे रहने वाले ललित प्राध्यापक रहे हैं। अपनी भावोच्छवासपूर्ण अन्योक्तियों और ललित रसात्मक अध्यापन कला के कारण वे हिंदी विभाग, काशी हिन्दू विश्वविद्यालय में एकदम अलहदा और दुर्लभ अध्यापक रहे हैं।

पूर्वी उत्तर प्रदेश (रेवतीपुर : गाजीपुर) के एक सामान्य खेतिहर परिवार से निकलकर महेन्द्रनाथ राय ने काशी हिन्दू विश्वविद्यालय में अध्ययन-अनुसंधान के बाद विभागाध्यक्ष और संकाय प्रमुख के रूप में 44 वर्षीय सार्थक और लम्बी अध्यापन पारी पूरी की। पर दुर्भाग्य यह कि जीवन के उत्तरार्द्ध में कोरोना महामारी में उन्हें पुत्र शोक का दारुण विषाद झेलना पड़ा। यह विषाद इस 'आत्मकथा' का निमित्त है और रचनाप्रक्रिया का मूल स्रोत भी। जायसी ने कहा है कि 'दुःख जारै, दुःख भूंजै। दुःख छुड़ावै लाज'।

एक पिता के सामने युवा पुत्र का शव पड़ा हो और वह सब कुछ देखने-सहने के लिए अभिशप्त हो–इससे बड़ा कोई और दुःख हो नहीं सकता। इस दारुण दुःख को झेलते हुए 'आत्मकथा' लिखने का संकल्प लेना साहस का

काम है– न सिर्फ लेखकीय साहस बल्कि मानवीय साहस भी। लेखक महेन्द्रनाथ राय के मुकाबले पिता महेन्द्रनाथ राय के लिए यह बहुत मुश्किल रहा होगा।

महेन्द्रनाथ राय ने अपने तीसरे पुत्र डॉ. अनन्त कुमार राय की स्मृति को 'आत्मकथा' समर्पित की है। यह सही है– 'आत्मकथा' के मूल में पुत्रशोक का दारुण दुःख है पर उस दुःख को पार करने की छटपटाहट भी है। आत्मकथा का केन्द्रीय अध्याय 'दुखता रहता है अब जीवन'– पुत्र अनंत की स्मृति का मार्मिक दस्तावेज है। इसलिए यह आत्मकथा–'अनन्तकथा' भी है, जिसे लेखक ने विशेष तौर पर 'अपनी संततियों' के निमित्त लिखा है ताकि उन्हें अपनी परम्परा की श्रेष्ठता और श्रेष्ठ मानवीयता का ज्ञान हो सके। हालाँकि रचना के बारे में यह लेखकीय बयान सिर्फ एक पक्ष है पर महेन्द्रनाथ राय ने पूर्वज-वंश परम्परा, घर-परिवेश, शोध-सृजन और आजीविका सहित अपने जीवन परिवेश को समग्रता में उद्घाटित किया है और जीवन की भयावहता रेखांकित की है। इसलिए यह आत्मकथा– डॉ. महेन्द्रनाथ राय की कृतज्ञताबोध और जवाबदेही की संकल्पकथा है और व्यथाकथा भी।

'आत्मकथा' की शुरुआत हमारे पूर्वज, वंश और परिवार' की कहानी से होती है। लेखक ने अपनी वंश परम्परा के साथ-साथ गाजीपुर जनपद के रेवतीपुर-शेरपुर-गहमर जैसे गाँवों के आपसी सम्बंध और जनपद के ख्यात लोगों की जीवन कथा का भी उल्लेख किया है। यहाँ डॉ. रामयश राय, डॉ. डी.के. राय, प्रो. एस.एन. उपाध्याय और डॉ. वी.के. राय जैसे मूल्य आधारित जीवन जीने वाले अध्यापकों की लम्बी श्रृंखला है, जिन्होंने अपने अध्यवसाय से कीर्ति का विस्तार किया और बाद की पीढ़ियों के लिए आदर्श स्थापित किया (पृष्ठ : 15-19)। दूसरा अध्याय 'साहित्य यात्रा का पड़ाव' है और शिक्षा, शोध-सृजन एवं आजीविका' के संघर्ष से सम्बंधित है। महेन्द्रनाथ राय ने हाईस्कूल-इण्टरमीडिएट के बाद बी.ए. के लिए डी.ए.वी. कॉलेज (सम्बद्ध काशी हिन्दू विश्वविद्यालय) में दाखिला लिया और जिन अध्यापकों से प्रभावित हुए उनमें– डॉ. अलखनारायण राय, डॉ. शितिकंठ मिश्र, डॉ अष्टभुजा पाण्डेय, डॉ. रामबली पाण्डेय, श्री नरेन्द्र श्रीवास्तव और श्री रामनगीना यादव प्रमुख हैं। प्रसंगवश यहाँ हिंदी विभाग, काशी हिन्दू विश्वविद्यालय के प्रातिभ आचार्यों का स्मरण उल्लेखनीय है। उन्होंने लिखा है कि "एम.ए. में दाखिला लेने के बाद 1967 से लेकर वर्ष 1972 ई0 पीएच.डी. तक काशी हिन्दू विश्वविद्यालय के जिन स्मरणीय आचार्यों के नाम मेरे स्मृति पटल पर हैं, उनमें आचार्य विश्वनाथ प्रसाद मिश्र, आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी, प्रो. भोलाशंकर व्यास, प्रो. बच्चन सिंह, प्रो. शिवप्रसाद सिंह और बाद के लोगों में प्रो. शुकदेव जी विशेष रूप से अपनी वाग्मिता, प्रतिभा, व्युत्पन्नमतित्व एवं विद्यार्थियों के सहयोग के लिए हमेशा याद आएँगे" (पृष्ठ : 43)। सन् 1969 में एम.ए. टॉपर बनने की कहानी बताते हुए यहाँ महेन्द्रनाथ राय ने 'जे बिनु काज दाहिने-बायें' वाली विभागीय राजनीति का जिक्र भी किया है। यह 'जिक्र' इस बात का प्रमाण है कि उच्चशिक्षण संस्थानों में 'उठा-पटक' की यह परम्परा पहले से विद्यमान थी, जो उत्तरोत्तर फूहड़ होती गयी। ध्यान देने वाली बात यह है कि लेखक ने बहुत सावधानी से विभागीय संदर्भों में उलझने के बजाय दुर्लभ आचार्य परम्परा का भावविभोर स्मरण किया और स्वयं से संबंधित नामवर सिंह के पत्रों को अविकल प्रस्तुत कर शोध-संदर्भ को प्रोत्साहित किया है।

'आत्मकथा' का केन्द्रीय हिस्सा पुत्रशोक की कारुणिक स्मृति से संबंधित है– शिखर स्थानीय मनस्वी बेटे से सम्बंधित इसलिए दुःख और गहरा है। 'आत्मकथा' का एक हिस्सा 'घर-गृहस्थी की कटु-मधुर स्मृतियों' से संबंधित है, जिसमें पारिवारिक जीवन के बहुतेरे प्रसंग बिखरे पड़े हैं। घर-गृहस्थी' की शुरुआत सन् 1964 में पत्नी मनोरमा राय के जीवन में प्रवेश से होती है। यहाँ पत्नी का विछोह और उनकी मार्मिक स्मृतियाँ– डॉ. राय के दाम्पत्य प्रेम की अद्भुत मिसाल है और 'घर-परिवार' की निर्मिति में उनकी केन्द्रीय भूमिका की प्रमाण भी है। उनके लिए पत्नी का विछोह इतना गहरा है कि पश्चात्ताप और आत्मग्लानि के भावबोध में इसके लिए स्वयं को जिम्मेदार मानते हैं– यह आत्मग्लानि यत्र-तत्र-सर्वत्र हैं। "अपने स्वास्थ्य को लेकर वे सचेत न थीं, तो मैं ही कहाँ था? अपनी सहज कृपणता और क्षुद्रतावश जो व्यय उनके स्वास्थ्य पर आवश्यक था, उसका दशांश भी न कर सका..... मैं व्यर्थ की सस्ती लोकप्रियता के मोह में अपनी अमूल्य सम्पत्ति को नज़रअंदाज करता रहा" (पृ0 72) इस तरह के कई प्रसंगों का अकुण्ठ बयान आत्मकथा में दर्ज है।

यह कहानी सिर्फ महेन्द्रनाथ राय तक सीमित नहीं है बल्कि हमारे चारों तरफ घटित होती दिखती है– व्यक्ति और व्यक्तित्व बदल जाते हैं, घटनाएँ लगभग समान सी हैं। इसलिए यह कहानी पारिवारिक संघर्ष और रोजी-रोजगार को हासिल करने में लगे मध्यमवर्गीय व्यक्ति की ऊबड़-खाबड़ दास्तान है। यहाँ लेखक ने अपनी कहानी के साथ-साथ पूर्वी उत्तर प्रदेश के किसान परिवेश की भावपूर्ण झाँकी प्रस्तुत की है, जहाँ मानवीय भावनाओं और पारिवारिक मूल्यों की नोंक-झोंक, मान-मनौवल, हारी-बाजी, ईर्ष्या-द्वेष और प्रशंसा-आत्मग्लानि की अन्तर्ध्वनियाँ सुनाई पड़ती हैं।

प्रो. महेन्द्रनाथ राय भक्तिकाव्य में रमने वाले सहृदय व्यक्ति हैं। नौजवान पुत्र की अकाल मृत्यु के बाद यह भक्तिकाव्य ही उनका 'अन्तिम शरण्य' है। 'आत्मकथा' की रचना प्रक्रिया का निमित्त अध्याय 'दुखता रहता है अब जीवन'– दिवंगत पुत्र की मार्मिक स्मृति भर नहीं है बल्कि अवसाद और टीस का स्थायी केन्द्र है, जिसे आजीवन झेलने के लिए परिवारीजन अभिशप्त हैं। इस दारुण दुःख ने धर्मभीरु महेन्द्रनाथ राय को भीतर से तोड़ दिया, उन्हें रिक्त और निस्सहाय बना दिया। लेकिन उनके भीतर बसा हुआ भक्तिकाव्य 'व्याकुल-बेहाल' होने की जगह– 'भयो क्यों अनचाहत सो संग'–की आत्मग्लानि में सान्त्वना का भाव तलाशता है और 'अपने अपने घरन को सब काहूँ की पीर' को भारी मन से स्वीकार करते हुए उबरने की कोशिश करता है। दुःख को पार करने या उबरने की कोशिश का परिणाम यह 'आत्मकथा' है।

'आत्मकथा' की भूमिका में प्रो. महेन्द्रनाथ कहते हैं कि 'इस संस्मरणात्मक कृति में जो भी सुवासित प्रसंग हैं– वे गुरुजनों की कृपा से हैं'। आगे यह भी कहना नहीं भूलते कि 'इस ग्रंथ में मेरे अपने परिवार के कटुतिक्त प्रसंगों की जहाँ चर्चा है, वही धैर्य बचाये रखने वाले प्रसंग भी हैं'। हालाँकि 'आत्मकथा' में 'अप्रीतिकर स्थितियों वाले प्रसंग भी हैं'। ऐसे प्रसंगों को दबे स्वर में या संकेत में कहने-बताने की कोशिश लेखक ने की है। दरअसल उन प्रसंगों में धैर्य बचाने की कोशिश है, बिल्कुल सजग कोशिश पर आत्मीय पारिवारिक प्रसंगों में पत्नी की मृत्यु के बाद का एकाकीपन और फिर जीवन के उत्तरार्द्ध में हृदय के एकदम करीब रहने वाले तेजस्वी पुत्र का शोक-विवरण तो है पर भाषा श्लथ हो गई है और वाणी बिथक गई है। आत्मीय पारिवारिक प्रसंगों के ब्योरेवार विवेचन-विश्लेषण में 'कहना-बोलना' सब अकारथ सा है– केवल मौन चीत्कार सुनाई पड़ता है।

पारिवारिक प्रसंगों में जहाँ कहने को बहुत कुछ हो और प्रो. राय चुप हैं या प्रसंग बदलते हैं वहाँ बिना बोले ही वे हाहाकार को व्यक्त करते हैं। यह हाहाकार गृहस्थी को बचाने का है, सबके हृदय को एकाकार करने का है। 'अनन्त की स्मृति'– पारिवारिक तत्परता, समर्पण, सद्भाव और छल-छद्म रहित जीवन की स्मृति है इसलिए उनके मौन चीत्कार में हृदय की पुकार भी है। मुक्तिबोध के शब्दों में–'मुझे पुकारती हुई पुकार खो गई कहीं......पुकार खो गई कहीं बिखेर अस्थि के समूह। जीवनानुभूति की गंभीर भूमि में'। संभव है कि महेन्द्रनाथ राय की 'आत्मकथा' भी 'मुझे पुकारती हुई पुकार' की भावदशा का विस्तार हो और 'बही अनन्त स्नेह की महान कृतिमयी व्यथा। बही अशांत प्राण से महान् मानवी कथा' का रूपान्तरण भी।

● समीर कुमार पाठक, एसोसिएट प्रोफेसर, हिंदी विभाग
डीएवी पी.जी. कॉलेज, वाराणसी-221001 । सम्पर्क - 9453114192

हरियाली का हुलास

जितेन्द्रनाथ मिश्र : जीवन संदर्भ

(संपा. डॉ. उमेश प्रसाद सिंह, राष्ट्रीय चेतना प्रकाशन, चन्दौली, 2022)

उत्तर प्रदेश सरकार द्वारा साहित्य भूषण से सम्मानित 'सोच विचार' के यशस्वी प्रधान संपादक डॉ. जितेन्द्रनाथ मिश्र जी की 75वीं वर्षगाँठ पर प्रकाशित पुस्तक 'हरियाली की हुलास' उनके साहित्यिक, सामाजिक एवं सांस्कृतिक जीवन-संदर्भ के महत्त्वपूर्ण पक्षों को उद्घाटित करने में अत्यंत सहायक है। पुस्तक 'हरियाली का हुलास' का संपादन, ललित निबंधकार, कथाकार एवं व्यंग्य लेखक डॉ. उमेश प्रसाद सिंह जी ने किया है। 'साहित्यिक संघ' को ऊँचाई प्रदान करने वाले साहित्यमना डॉ. जितेन्द्रनाथ मिश्र के वे आत्मीय हैं। वे पूरी आत्मनिष्ठा से साहित्यिक संघ से जुड़े हैं। यह उसी संस्था की चंदौली शाखा का एकल प्रयास है कि मिश्र जी के अमृत महोत्सव पर सम्मानार्थ पुस्तक भेंट की जाय। इसमें प्रकाशक डॉ. विनय कुमार वर्मा की उत्प्रेरणा की भूमिका भी महत्त्वपूर्ण रही है।

पचास वर्षों से अधिक समय से मिश्र जी साहित्य के प्रचार-प्रसार एवं सृजन की साधना एकनिष्ठ भाव से कर रहे हैं। 'हरियाली की हुलास' में उनकी उपलब्धियों एवं योगदान को देश के जाने माने साहित्य साधकों ने अपनी लेखनी से प्रतिष्ठित किया है। जिन साहित्यसाधकों के लेख पुस्तक में संकलित हैं, वे हैं सर्वश्री रामदरश मिश्र, सूर्यबाला, रामसुधार सिंह, नीरजा माधव, पद्माकर चौबे, सुधाकर अदीब, श्रद्धानंद, ओमधीरज, इंदीवर, भगवंती सिंह, दीनानाथ झुनझुनवाला, मुक्ता, वेदमित्र शुक्ल, दीनानाथ सिंह, मानिकचंद पाण्डेय, वेदप्रकाश पाण्डेय, कैलाश नारायण सिंह 'करुणम', सुरेन्द्र वाजपेयी, शिवकुमार पराग, संजय गौतम, रामजी प्रसाद भैरव और पं. दयानिधि मिश्र।

सन्नाटे में बजती हुई बाँसुरी की तरह जितेन्द्रनाथ मिश्र जी का लुभावना व्यक्तित्व है। उन पर लिखे गये लेखों के शीर्षक उनके साहित्यिक अवदान को रेखांकित करने में सहायक हैं, यथा– साहित्यिक परिवेश में नयी जागृति के सूत्रधार, काशी की साहित्यिक गरिमा के प्रतीक, शास्त्र और लोक के गहन अध्येता, जिनसे प्राणवंत है, बनारस, साहित्यिक मानस का माधुर्य, साहित्यसेवा के समर्पण का आलोक, काशी की साहित्यिक पत्रकारिता की विरासत का विकास, कर्मठता की उत्कट तपस्या, साहित्य के संरक्षण संवर्धन मे समर्पित, सहृदय रसज्ञ, सर्वप्रियता की मिसाल, हिन्दी भाषा साहित्य के कुशल प्रचारक, काशी की अनुपम धरोहर, सहज, स्नेहिल छाँह, सूधोमन सूधोवचन, धरोहर को सँजोने का धैर्य, मेरे गुरुदेव, एक साहित्य-सक्रिय व्यक्तित्व। लेखों के शीर्षक उनके पांडित्य, सहृदय व्यक्तित्व एवं साहित्यिक परंपरा में उनके अवदान के द्योतक हैं। पुस्तक में जाने माने कवि एवं पत्रकार हिमांशु उपाध्याय द्वारा लिया गया एक महत्त्वपूर्ण साक्षात्कार 'समय की कोख में रह गयी कविता' है। पुस्तक में डॉ. जितेन्द्रनाथ मिश्र जी का पचपन पृष्ठ का एक आत्मकथ्य है, जो उनके जीवन संघर्ष, साहित्यानुराग एवं साहित्य साधना को प्रकाशित करता है। जीवन के अंतरंग और बहिरंग को और समावेशित [illegible] तो निश्चित रूप से यह एक महत्त्वपूर्ण आत्मकथा का आकार ले [illegible] साहित्य जगत को उसकी प्रतीक्षा रहेगी।
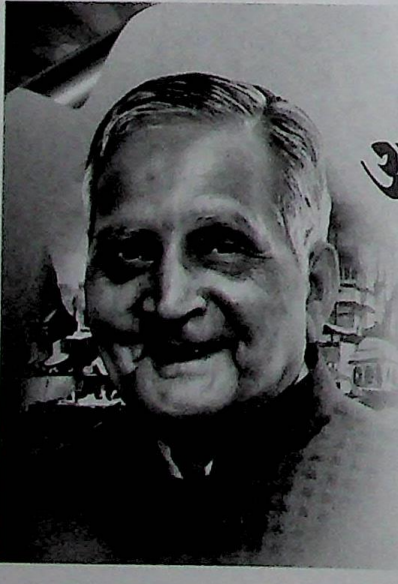
साहित्य सदैव हरियाली का ही वितान प्रसारित [illegible] हरियाली में जीवंतता है, जीवन का हुलास है, जीवन का रंग है। मिश्र जी ने सदैव इसी दृष्टि से साहित्यिक मूल्यों को नवचेतना के साथ प्रस्तुत किया है। परंपरा और आधुनिकता को वे सदैव एक नया रंग देते हैं। इसी रंग से वे रामकथा प्रसंग एवं गीता को नवता प्रदान करते हैं। भारतीय एवं पाश्चात्य समीक्षा के मानदंडों को नया आकार देते हैं। जितना वे पुराने से जुड़ते हैं उतना ही वे नये से जुड़ते हैं। यही तो परम्परा का सच्चे अर्थों में अवगाहन है।

काशी के साहित्यिक पुरखों द्वारा स्थापित 'साहित्यिक संघ' को नित नया रूप रंग देकर मिश्र जी एक नयी साहित्यिक हलचल से काशी को ही नहीं पूरे हिन्दी जगत को स्पंदित करते रहते हैं। 'सोच विचार' के माध्यम से रचनाकारों की नर्सरी तैयार करने में भी इनका योगदान कम नहीं है।

कवि, समीक्षक, संपादक एवं काशी की साहित्यिक परंपरा के संवाहक डॉ. जितेन्द्रनाथ मिश्र, जी के व्यक्तित्व, कृतित्व एवं साहित्यिक अवदान को रेखांकित करने वाली 'हरियाली का हुलास' पुस्तक के संपादक-डॉ. उमेश प्रसाद सिंह के प्रयास की जितनी सराहना की जाय, कम है।

• **प्रो. श्रद्धानन्द** । सम्पर्क 9415448948
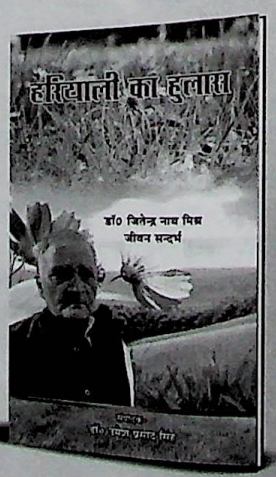
साखी-35 (अक्टूबर-2021)

प्रेमचन्द साहित्य संस्थान का त्रैमासिक

सम्पादक : सदानन्द शाही

सम्पादकीय सम्पर्क- क, बी-2 सत्येन्द्र कुमार गुप्त नगर, लंका, वाराणसी-221005 (उ.प्र.), मो. 09450091420, 7616393771
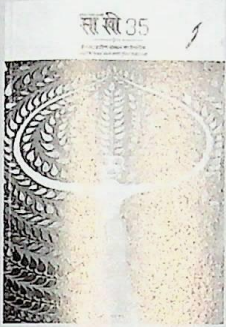
वर्तमान समय में काशी से प्रकाशित होने वाली साहित्यिक पत्रिकाओं में प्रेमचन्द साहित्य संस्थान की त्रैमासिकी 'साखी' अपना विशिष्ट महत्व रखती है। पत्रिका का प्रत्येक अंक अपनी विशिष्ट गरिमा के साथ साहित्य जगत में एक अलग गूँज पैदा करता है। प्रस्तुत अंक सामान्य अंक होते हुए भी अपनी वैशिष्ट्यपूर्ण सामग्री के कारण पाठक को विशेष रूप से आकर्षित करता है। अंक के प्रारम्भ में सम्पादकीय के पहले 'पूर्वसम्पादकीय' खण्ड में बलिया के ददरी मेरे में 3 दिसम्बर 1884 को भारतेन्दु के व्याख्यान 'भारतवर्ष की उन्नति कैसे हो सकती है' को प्रकाशित किया गया है। आजादी के अमृत महोत्सव वर्ष में भारतेन्दु के इस व्याख्यान के साथ नामवर सिंह और वसुधा डालमिया की विवेचना ने विचार के नये गवाक्ष खोले हैं। डॉ. नामवर सिंह का मानना है कि बलिया के व्याख्यान में इस गंभीर विचारमंथन से निकले हुए अमृत की कुछ ही बूँदें झलक पाई हैं क्योंकि वह सर्वजनसुलभ का व्याख्यान था, किन्तु उससे एक ऐसे क्रान्तदर्शी कवि का व्यक्तित्व उभरकर सामने आता है, जिसकी सर्जनात्मक प्रतिभा की जड़ें ठेठ अपनी ही परम्परा से फूटी हैं और जिसके हृदय के तार लोक हृदय से भी जुड़े हुए हैं। भारतेन्दु का हृदय वैष्णव जरूर था, लेकिन वह किसी मन्दिर का मोहनभोग न था। उस हृदय में अनीति और अन्याय के विरुद्ध दहकती हुई आग भी थी और दुःखी-दीन के लिए करुणा भी। आगे 'पुनश्च' शीर्षक से संपादक सदानन्द शाही ने अपने सम्पादकीय में निबन्ध को फिर से पढ़ने और समझने पर जोर दिया है।

बच्चन सिंह स्मृति व्याख्यान के अन्तर्गत वरिष्ठ कवि अरुण कमल द्वारा बच्चन सिंह 'आलोचना की जरूरत' शीर्षक से आलेख प्रकाशित किया गया है। साखी के पिछले अंकों में 'भारतीय कविता से साक्षात्कार' श्रृंखला में भारतीय कविता के विशिष्ट स्वरों का साक्षात्कार' पाठक पढ़ते रहे हैं। किन्हीं कारणों से यह सिलसिला छूट गया था। इस अंक में गुजराती के विशिष्ट और वरिष्ठ कवि शीतांशु यशश्चन्द्र से रंजना अरगड़े की बातचीत से इसकी शुरुआत फिर से की गई है। इसी तरह 'देशान्तर' श्रृंखला में ब्राजील की लघु कथाओं से पाठक परिचित हो रहा है। 'भक्त कविता' खण्ड में महादेवी की कविताओं (भावानुवाद) से परिचित कराना सुखद है। गगन गिल द्वारा किया गया भावान्तरण एवं तेजस्विनी शीर्षक से उन पर प्रस्तुत विचार अद्भुत है। माधव हाड़ा ने मीरा के पाठक और उसकी प्रासंगिकता के सवाल पर विस्तार से विचार किया है। नवनीत मिश्र की कहानी, विमल कुमार, मीना सिंह एवं वंदना शाही की कविताएँ वैशिष्ट्यपूर्ण हैं। प्रतिष्ठित आलोचक, विचारक डॉ. पी.एन. सिंह पर दुर्गा प्रसाद गुप्त का संस्मरण सचमुच रोमांचक है। पी.एन. सिंह की अशक्तता तथा उनकी जिजीविषा को जिस संवेदनात्मक ढंग से लेखक ने प्रस्तुत किया है, वह अद्भुत है। 'सार्त्र की क़ब्र पर 'बोसा' शीर्षक से राजीव सिंह द्वारा प्रस्तुत पेरिस की यात्रा अत्यन्त रोचक बन पड़ी है। सार्त्र की क़ब्र का विवरण बड़ा ही प्रभावकारी है। 'परिसर से' स्तम्भ में अंकिता शाम्भवी की कविताएँ एक नई ताजगी का एहसास कराती हैं। समीक्षा खण्ड में भारती गोरे (सीता की खोज-अवधेश प्रधान), (थोड़ा सा खुला आसमान – रामकठिन सिंह), अरुण होता (अस्थिफूल-अल्पना मिश्र), प्रभाकर सिंह (ईश्वर नहीं नींद चाहिए – अनुराधा सिंह), शीतल (विशात पर जुगनू– वन्दना राग), कृतिकुमारी (कुलभूषण का नाम दर्ज कीजिए – अलका सरावगी), स्वाती सिंह (अंतर्गाथा– रामनाथ शिवेन्द्र), रुद्रप्रताप सिंह (ढकोसला और तर्पण ताम – अजय मिश्र एवं मंजीत चतुर्वेदी) की समीक्षाएँ संदर्भित पुस्तकों के महत्त्व को रेखांकित करने की दृष्टि से सार्थक बन पड़ी है।

• डॉ. रामसुधार सिंह

केशवशरण की कविताएँ

अंतिम और पहली गली

किसी क़स्बे की गली-सी
यह काशी की अंतिम गली है
इसके बाद
शाही नाला
गंगा में गिरने वाला

कृष्णमूर्ति फाउंडेशन के टीले से लगी
यह गली
विरक्त साधुओं की है
इसमें गृहस्थों के घर नहीं
विरक्तों के घेरे
और डेरे हैं

टीले की मिट्टी,
झाड़ियों और लताओं के बीच से
झाँकती अत्यंत पुरानी ईंटें
बता रही हैं वे काशी नरेश के
प्राचीनतम क़िले की हैं
जहाँ से भीष्म ने
उनकी तीन कन्याओं का हरण किया था

महाभारत की तरफ़ से
इसमें दाख़िल होइए तो
यह काशी की पहली गली है

राग-विराग का महोत्सव

याद ही नहीं रहती
चैत की सप्तमी
याद ही नहीं रहता
महाश्मशान
याद ही नहीं रहतीं
नगरवधुएँ
सवेरे-सवेरे
याद दिलाकर
उदास कर देता है अख़बार
राग-विराग का महोत्सव
जो हो चुका होता है
गंगा की लहरों
और चिताओं की लपटों के बीच
महाशिव को समर्पित

मणिकर्णिका घाट

निरन्तर जलते
हवन कुण्ड हैं
निरन्तर जलती चिताएँ
और भस्म होते मुण्ड हैं
निरन्तर बहती गंगा
निरन्तर दाने चुगते
कबूतरों और गौरैयों के झुण्ड हैं
निरन्तर लोग रस्मों में लगे हैं
निरन्तर चर्चाओं में रमे हैं
शोक में कोई नहीं दिखता
यहाँ वह भी
जो शोक-गीत लिखता

खुल जा सिमसिम और रिमझिम

स्मारक का फाटक बंद
शोध संस्थान के प्रवेश द्वार पर ताला
घर पर साँकल
लेकिन कुएँ के
चबूतरे पर बैठ सकते हैं सानंद

यह चबूतरा
और कुआँ
'ठाकुर का कुआं' लिखने वाले
महान कथाकार का है
और यह
पूस की एक धूप-सुहानी दोपहर

खुल जा सिमसिम
और रिमझिम का दिन है
इकतीस जुलाई

• एस. 2/564, सिकरौल, वाराणसी-221002 | सम्पर्क - 9415295137

आँखें मधुमेह का आईना

डा. सुनील शाह

वाराणसी निवासी 48 वर्षीय मनोज कुमार जी शहर के ही एक सरकारी बैंक मे पिछले 20 वर्षों से कार्यरत हैं। उनका ज्यादातर समय कंप्यूटर पर काम करते ही बीतता था। एक दिन काम करते समय अचानक उनको महसूस हुआ कि स्क्रीन पर जो लिखा है वो उनको दो-दो दिखने लगा। मनोज जी ने घबरा कर डॉक्टर से संपर्क किया। डॉक्टर ने उनसे कुछ और लक्षणों के बारे मे प्रश्न पूछे जैसे भूख और प्यास अधिक लगने से संबंधित और उनको मधुमेह की जांच कराने को कहा। यह सुन कर मनोज जी आश्चर्यचकित हो गए कि उन्हे मधुमेह कैसे हो सकता है। वो तो कभी बीमार नहीं होते। बस कुछ दिनों से उन्हे थोड़ी थकान महसूस हो रही थी और चश्मे का नम्बर बार-बार बदल रहा था। जांच कराने पर पता चला कि उनका शुगर लेवल 300 के ऊपर पहुँच चुका है। मनोज जी की तरह बहुत से लोग हैं जो कि अपने शरीर मे होने वाले छोटे-छोटे बदलाव को गंभीरता से नहीं लेते, इसी कारण मधुमेह जैसा रोग गंभीर रूप ले लेता है।

मधुमेह केवल शुगर का घटना बढ़ना नहीं है, यदि आपका शुगर लेवल 160 के उपर है तो आपको मधुमेह हो सकता है। मधुमेह एक रोग है जो कि इंसुलिन की कमी से होता है। भगवान ने मनुष्य को 100 वर्षों तक जीवित रहने के लिए उसके शरीर मे हॉर्मोंस बनाए जिनका काम शरीर मे संतुलन बनाना होता है। इंसुलिन भी हॉर्मोन है जिसका काम शरीर मे उपस्थित ग्लूकोज़ को ऊर्जा मे परिवर्तित करना होता है। यदि शरीर मे इंसुलिन का बनना कम या बन्द हो जाता है तो ब्लड में शुगर की मात्रा बढ़ने लगता है, जिससे मधुमेह रोग होता है। हार्मोन का संतुलित या असंतुलित होना हमारी मानसिकता पर भी निर्भर करता है, मोबाइल का अत्यधिक प्रयोग, अखबार पढ़ने के बाद दिमाग में निगेटिव विचार आने से, तनाव, तम्बाकू के सेवन और सिगरेट के सेवन से मानसिक संतुलन बिगड़ जाता है और यही कारण है कि भारत में प्रत्येक 5 में से 1 व्यक्ति मधुमेह का शिकार है।

क्या आप मधुमेह के मरीज हैं?

यदि आप लम्बे समय से मधुमेह से ग्रसित हैं तो आपको हार्ट सम्बंधित बीमारी, हाई ब्लड प्रेशर और किडनी से संबंधित बिमारियां होने की संभावना बहुत अधिक हो सकती है। इसी तरह मधुमेह से आँखो से संबंधित बहुत सी समस्याएं हो सकती हैं परन्तु बहुत कम लोगों को इसके बारे मे पता होता है। लम्बे समय से डायबिटीज के कारण आँखों मे डायबिटिक रेटिनोपैथी, डायबिटिक मैक्युलर इडिमा, मोतियाबिंद और संबलबाई भी हो सकती है। इनमे डायबटिक रेटिनोपैथी अंधता का प्रमुख कारण है।

डायबटिक रेटिनोपैथी क्या है?

यदि लम्बे समय से मधुमेह है तो इसका असर सामान्यतः शरीर के सभी अंगों पर पड़ता है किन्तु आँखो पर इसका असर सबसे अधिक दिखाई पड़ता है। मधुमेह के रोगियों को और साथ अगर बीपी हो तो डायबटिक रेटिनोपैथी होने की बहुत अधिक संभावना होती है। डायबटिक रेटिनोपैथी मे आँखो मे पर्दे के आस पास रक्त कोशिकाओं से खून व पानी का रिसाव होने लगता है, जिससे धीरे धीरे और कभी कभी एकाएक रोशनी कम हो जाती है। यदि आरंभिक अवस्था मे रोग का पता चल जाए तो दृष्टि को 90 प्रतिशत तक बचाया जा सकता है। इसलिए मधुमेह के रोगियों को हर 6
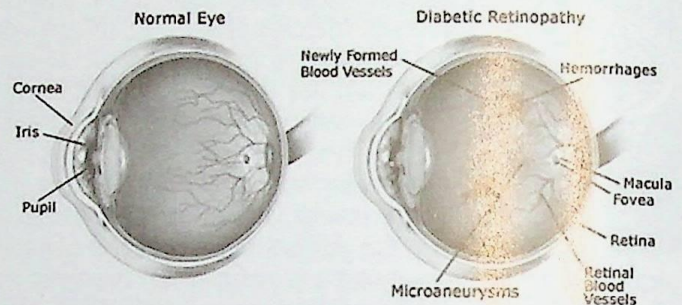
माह मे अपने आँखों की जाँच नेत्र चिकित्सक से अवश्य करानी चाहिए।

डायबटिक रेटिनोपैथी के लक्षण क्या क्या हो सकते हैं?

यदि आपको निम्न मे से कुछ लक्षणों का अनुभव हो रहा है तो आपको डायबटिक रेटिनोपैथी हो सकती है-

- एकाएक रोशनी कम होना
- आँखों के आगे मच्छर जैसा उड़ते दिखना
- चश्मे का नम्बर बार बार बदलने पर भी धुधला दिखना
- वस्तु का दो दो नजर आना
- आँखों के आगे बिजली चमकना
- मकड़ी के जाले जैसा दिखाई देना
- काले धब्बे दिखना
- फोडा फुंसी होना

यदि आपको इनमे से कोई भी लक्षण दिख रहे हों तो तुरन्त नेत्र चिकित्सक से परामर्श लें।
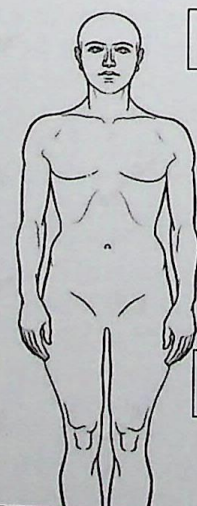
सम्मानित अतिथिगण

नुक्कड़ नाटक

आपकी सतर्कता ही आपकी दृष्टि को बचा सकती है।

मोतियाबिन्दमधुमेह के रोगियों को मोतियाबिन्द होने का खतरा रहता है। यदि मधुमेह के रोगियों को मोतियाबिन्द होता है तो उसके पकने का इंतजार नही करना चाहिए। मधुमेह के कारण कॉर्निया का सेल काउन्ट कम हो जाता है और आँख मे सूखापन तथा सूजन हो जाती है। ऑपरेशन से पहले उसे अपने पर्दे की जाँच करानी चाहिये और चिकित्सक की सलाह पर पर्दे की सेकाई भी ऑपरेशन से पूर्व करा लेना चाहिये। मधुमेह रोगियों के लिए फेको विधि से ऑपरेशन कराना सबसे उचित होता है। मधुमेह रोगियों हेतु कुछ विशेष प्रकार का लेंस आता है जिसे लेज़र लेंस कहते हैं।

डायबटिक रेटिनोपैथी होने पर क्या न करें

- भारी सामान न उठाएं
- झुक कर काम न करें
- लैटरीन मे जोर न लगाएं
- जीभ न छीलें
- आधी बाल्टी से ज्यादा पानी न उठाएं
- बच्चे को झुक कर गोदी न उठाएं
- कसरत न करें
- सांस रोकने का व्यायाम न करें

डायबटिक रेटिनोपैथी होने पर क्या करें

- नियमित ब्लड शुगर व ब्लड प्रेशर तथा HbA1C की जांच कराएं।
- पीले फलों एवं सलाद का अधिक सेवन करें
- एक बार में अधिक भोजन न करें बल्कि हर दो दो घंटे मे कुछ हल्का खाएं
- हर 6 माह मे आँखों की जांच अवश्य कराएं
- डायबटीज़ आँखों की अन्य समस्याओं का कारण भी हो सकता है जैसे-
- संबलबाई
- मोतियाबिन्द
- विटरियस हैमरेज
- रेटिनल डिटैचमेन्ट

डायबटिक रेटिनोपैथी से बचाव के उपाय

मधुमेह के कारण हुए अंधेपन को रोका जा सकता है यदि कुछ सावधानियाँ रखी जाएं जैसे-

- समय पर रोग को पकड़ना और इलाज शुरू करना रोग की गंभीरता को कम कर सकता है
- फंडस कैमरे द्वारा हर 6 माह में अपनी आँखो के पर्दे की जांच अवश्य कराएं
- अपनी दिनचर्या नियमित रखें और मानसिक तनाव न लें
- किसी भी तरह का आँखों की रोशनी में बदलाव महसूस होने पर तुरन्त दिखाएं ताकि आँखों को बचाया जा सके

मधुमेह से होने वाली अन्य समस्याएं

हाइपोग्लासीमिया

जब ब्लड में शुगर की मात्रा 70 से कम हो जाती है तो इसे हाइपोग्लासीमिया कहते हैं। बहुत पसीना आना, चक्कर आना, हाथ कांपना, दिल की धड़कन बढ़ना, घबराहट होना, भूख लगना यह तब होता है जब आपने दवा तो लिया है किन्तु खाना न खाया हो या उल्टी दस्त हो रहा हो। जब हाइपो हो तो शूगर की दवा बंद कर दें तथा 4 चम्मच चीनी जरूर लें।

आहार तालिका

क्या खाएं	क्या न खाएं
हरी सब्जियां	आलू, हरी मटर
पीले फल,	चीनी, चावल
टमाटर, खीरा, गाजर	तला भुना सामान
भरपूर मात्रा मे पानी	कोल्ड ड्रिंक्स,
अंकुरित अनाज	तम्बाकू शराब,

न्यूरोपैथी

डायबिटिक न्यूरोपैथी सबसे ज्यादा असर पैरो पर डालती है। विष्व स्वास्थ्य संगठन के अनुसार 15 से 20% डायबटिक रोगियों मे न्यूरोपैथी की दिक्कत आती है। पैरों मे सूनापन, झुनझुनाहट, जलन, छाले, संक्रमण, दर्द, गैंगरीन, अकड़न इसके लक्षण हैं।

दंत रोग- डायबटीज से मुख व दाँत की कई समस्याएं हो सकती हैं जैसे- पायरिया, खाना चबाने मे परेशानी, मुह के छाले, कैविटी होना।

किडनी रोग- मधुमेह रोगियों मे किडनी की समस्या होती है यूरीन से प्रोटीन जाने के कारण किडनी फेलियोर का खतरा हो सकता है।

कब्ज़- मधुमेह के रोगियों मे कब्ज की समस्या आती है जिसे फाईबरयुक्त भोजन से दूर किया जा सकता है।

संगीत संध्या में नेत्रदाता परिवारों का सम्मान

आजादी के अमृत महोत्सव के अन्तर्गत संस्कार भारती द्वारा अस्सी घाट पर 28 व 29 मई को आयोजित दो दिवसीय संगीत समारोह में नेत्रदाता परिवार के डा.दिनेश वर्मा तथा विकास गर्ग को मुख्य अतिथि प्रो. प0.राम नारायण द्विवेदी द्वारा सम्मान पत्र व अंग वस्त्र पहना कर सम्मानित किया गया। इस अवसर पर वाराणसी इन्स्टीटयूट आफ आप्टोमेट्री के विघार्थियों द्वारा नेत्रदान आधारित नुक्कड़ नाटक आगे की ओर का मंचन किया गया। वाराणसी आई बैंक सोसाइटी के सचिव डा.सुनील साह ने उपस्थित लोगों को नेत्रदान की आसान प्रक्रिया की जानकारी देते हुए सभी से नेत्रदान संकल्प लेने की अपील की। कार्यक्रम में नेत्रदान लाभार्थी प्रीति सिंह ने अपने द्राष्टहीन जीवन के संस्मरण बताते हुए नेत्रदान हेतु प्रेरित करते हुए कहा कि चिता में जायेगी राख बन जायेगी, कब्र में जायेगी खाक बन जायेगी। कर दो दृष्टि का दान, मेरे जैसों के लिए दृष्टि का वरदान बन जायेगी, इस अवसर पर नेत्रदान संकल्प पत्र का वितरण किया गया तथा मोबाइल स्टीकर लगाये गये।

नेत्रदाता परिवार सम्मान

नेत्रदान लाभार्थी प्रीति सिंह

● शाह हॉस्पिटल, राम कटोरा, वाराणसी । सम्पर्क 9415228475

अवसाद का आनन्द
(जयशंकर प्रसाद की जीवनी)

लेखक - सत्यदेव त्रिपाठी

प्रकाशक – सेतु प्रकाशन, रजा फाउंडेशन, नोएडा प्र.सं.–2022, मूल्य–रू. 475/–, पृष्ठ सं.–525,

अवसाद में आनन्द के आलोक का सन्धान

डा. सत्यदेव त्रिपाठी द्वारा सृजित पुस्तक 'अवसाद का आनन्द' मैंने बहुत मनोयोग पूर्वक पढ़ा। नहीं, शायद ऐसा कहना ठीक नहीं होगा। मैंने पुस्तक पढ़ना शुरू किया तो मनोयोग अपने आप बन गया। यह विरल अनुभव है, जो कभी कभी किसी रचना के साथ बन पाता है। त्रिपाठी जी की यह रचना भारतीय सांस्कृतिक जीवन बोध के महान उद्‌गाता महाकवि जयशंकर प्रसाद की जीवनी है। इस जीवनी में आन्तरिकता और आत्मीयता के इतने गहरे सूत्र हैं कि पाठक का चित्त केवल परितुष्ट ही नहीं होता बल्कि प्रफुल्ल हो उठता है। सत्यदेव त्रिपाठी जी की गहन रचनात्मक तन्मयता और तल्लीनता के लिये हार्दिक अभिनन्दन।

जयशंकर प्रसाद का काव्यबोध चेतना के उच्चतर धरातल का बेहद मूल्यवान संश्लिष्ट काव्यबोध है। उनका समूचा काव्यबोध अस्तित्व की विराटता की तरफ इंगित करती उठी हुई उंगली की तरह है। उनके सृजन में भाव का माधुर्य, मनुष्यजाति के जीवन–संघर्ष की मृदुता और उनकी अभिव्यक्ति की भाषा का व्यंजक लाक्षणिक मार्दव सब कुछ मानवीय जीवन की विराटता के अछोर विस्तार के अनिवार आकर्षण का मोहक संकेत है। सचमुच कविता जीवन की मार्मिक सचाइयों के अभिव्यक्त संकेतों की संवाहक होने में सार्थक होती है। आचार्य शुक्ल छायावाद की कविता से जिस स्पष्ट और साफ–साफ कथन की अपेक्षा कर रहे थे प्रसाद जी के विचार में वह कविता के लिये संभव ही नहीं है। इस जीवनी की सबसे मार्मिक और महत्वपूर्ण विशेषता यह है कि इसमें रचनाकार की जीवन स्थितियों और उसके काव्यबोध में पारस्परिक समाहन की प्रक्रिया का उद्‌घाटन बड़ी विदग्ध रीति से सम्पन्न हुआ है।

इस पुस्तक में लेखक ने प्रसाद जी के जीवन सन्दर्भों में अनुस्यूत घटना प्रसंगों और तत्सम्बन्धी तथ्यों का संकलन बड़े परिश्रम से किया है। लेकिन इससे भी महत्वपूर्ण बात यह है कि संकलित तथ्यों का विश्लेषण उन्होंने बेहद सजगता, तार्किकता और संवेदना की गहराई के साथ किया है। उनके निष्कर्श बहुत ही रमणीय, प्रभावकारी और प्रेरणास्पद बन सके हैं। वे भावुकता के शिकार कहीं नहीं होते किन्तु भावनात्मकता से कहीं विरत भी नहीं होते। साक्ष्यों और साक्ष्यपरक कथनों में मतभेदों और विरुद्धों के बीच वे अपने निष्कर्श का आधार रचना में व्यक्त उस सन्दर्भ की सचाई को बनाते है। इस प्रविधि में प्रसाद जी के साहित्य की संवेदनात्मक मार्मिकता और अधिक उद्भासित हो उठती है। उसकी स्मृति पाथेय बनी है, शीर्षक अध्याय में रायकृष्ण दास, विनोद शंकर व्यास, डा. राजेंद्ररायण शर्मा, सीताराम चतुर्वेदी, विनय मोहन शर्मा आदि के मतान्तरों के विवेचन और परीक्षा के दौरान त्रिपाठी जी ने जिस साहित्यिक सहृदयता और साहित्यिक नैतिकता के पक्ष को उद्‌घाटित किया है, उससे आँसू की आन्तरिक अर्थव्याप्ति को अद्‌भुत विस्तार और गरिमा मिली है। अपने विवेचन और विश्लेषण की प्रकृति से किसी रचना के आन्तरिक मर्म का उद्‌घाटन और गौरव बोध की प्रतिष्ठा आसान काम नहीं है। इस मुश्किल काम को इस जीवनी में सत्यदेव त्रिपाठी जी ने बहुत ही सहजता से बड़े कौशल के साथ संपन्न किया है। जीवनी साहित्य में यह उनका अभिनव योगदान है। उनका यह योगदान हिन्दी के श्रेष्ठ जीवनी लेखकों की अग्रिम पंक्ति में उन्हें प्रतिष्ठित करता है।

लेखक की कुशलता इस बात से भी प्रमाणित होती है कि पुस्तक में समूचा तत्कालीन परिवेश जीवन्त हो उठा है। पारिवारिक, साहित्यिक और सामाजिक गतिविधियों का सूक्ष्म, गतिशील और सजीव चित्र उपस्थित कर देना सरल नहीं होता लेकिन लेखक ने अपनी गहरी अन्तर्दृष्टि से न सिर्फ सरल बल्कि उसे सरस भी बनाने में सफलता हासिल की है। उसका गहन अध्यवसाय पुस्तक में हर कहीं दिखाई देता है। वर्णन में इतनी सजगता और इतना कसाव है कि भटकाव के रास्ते खुद ब खुद लुप्त हो गए हैं। यहां उन्हीं घटना प्रसंगों को स्थान दिया गया है, जिनका कवि की आन्तरिक चेतना के प्रसार में अनिवार्य जुड़ाव प्रमाणित होता है। कवि के बाह्य और व्यक्त जीवन सन्दर्भों की उनकी रचनात्मक अभिव्यक्ति में तलाश का प्रयास लेखक की अन्तर्दृष्टि की प्रशंसनीयता का प्रमाण उपस्थित करता है। प्रसाद साहित्य के गंभीर अध्ययन और अनुशीलन की गवाही तो इस किताब में है ही मगर यह उतनी महत्वपूर्ण बात नहीं है। इससे भी अधिक महत्वपूर्ण बात किताब के सन्दर्भ में यह है कि सत्यदेव त्रिपाठी जी ने संवेदना के धरातल पर अपने को प्रसाद से जोड़ने का स्तुत्य कार्य किया है।

प्रेमचन्द के अनुरोध पर कभी जयशंकर प्रसाद जी ने एक आत्मकथात्मक कविता लिखी। उस कविता में आत्मकथा की स्थूल अवधारणा जो पाठकों के मस्तिष्क में प्रायः जड़ीभूत रहती है, उसकी तरफ उन्होनें बड़ा साफ संकेत किया है। आत्मकथा में क्या दिखाना है, 'भूलें अपनी या प्रवंचना औरों की दिखलाऊँ मैं।'' मगर नहीं उनकी जीवनी में सत्यदेव त्रिपाठी ने भूलों और प्रवंचनाओं को ही नहीं दिखाया है। उन्होनें वह सब कुछ दिखाया है, जो कवि के जीवन का बेहद मूल्यवान सच है। वह सच जो उनके जीवन से कविता में आने से अनुपम शक्ति और सौन्दर्य से सम्पन्न हो उठा है।

मैं सोचता हूँ कि मैं जयशंकर प्रसाद की जीवनी लिखता तो उसके लिये दो चार नामों की परिकल्पना करता। मगर यह मैं दावे के साथ कहता हूँ कि उन सबमें यह 'अवसाद का आनन्द' नाम सबसे अधिक उपयुक्त और सार्थक है। यह प्रसाद जी के समूचे जीवन बोध और सृजन की आन्तरिक गूंज का सर्वाधिक संवाहक है। पुस्तक का यह नाम प्रसाद जी के समूचे व्यक्तित्व और कृतित्व को अपने में समाहित कर लेने में सफल सिद्ध होता है। केवल नाम में ही नहीं बल्कि काम में भी यहाँ अवसाद के आनन्द की फलश्रुति घटित होती है।

अभी तक जयशंकर प्रसाद के साहित्य की जो आलोचना होती आई है, वह प्रायः छायावाद की काव्य प्रवृत्तियों की रूढ़ सीमाओं के अन्तर्गत ही है। उन सबमें छायावाद के वितर्क प्रमुख हो उठते हैं। कवि और कविता गौण। इस जीवनीपरक पुस्तक में डा. सत्यदेव त्रिपाठी जी ने पहली बार कवि के व्यक्तित्व और उसकी सृजनात्मकता को स्वायत्त चिन्तन का आधार प्रदान किया है। इसमें जयशंकर प्रसाद जी की साहित्यकार की संपूर्ण और समेकित छवि निखर कर सामने आई है। यहां जो भी लिखा गया है, प्रसाद जी में डूबकर पूरी हार्दिकता के साथ लिखा गया है।

मेरा ऐसा विश्वास है कि इस जीवनी को पढ़ने के बाद पाठक के मन में प्रसाद के साहित्य को पढ़ने की नयी उकण्ठा जगेगी। बहुत नये तरह के लोग, नयी तरह से, नई दृष्टि से प्रसाद जी के साहित्य को पढ़ने और समझने को उत्सुक होंगे। ये जो पाठक होगें वे प्रसाद के पास न तो छायावाद की उत्प्रेरणा से पहुंचेगें न किसी आलोचक के उकसावे से। ये आन्तरिक लगाव और हार्दिकता के आन्दोलन से प्रसाद के पास जाएंगे। इस पाठक वर्ग को तैयार करने का श्रेय निश्चय ही सत्यदेव त्रिपाठी की इस महत् रचना को होगा। हिन्दी संसार इस महनीयता के लिये सत्यदेव त्रिपाठी जी का चिरकाल तक ऋणी रहेगा।

● डा. उमेश प्रसाद सिंह । सम्पर्क 9450551160
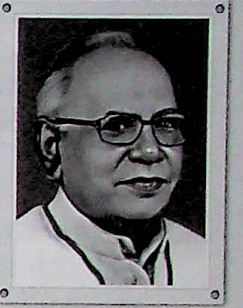
बचपन बहुत याद आये

हरिराम द्विवेदी

बहारों के उपवन बहुत याद आये
तुम्हें देख बचपन बहुत याद आये
मेरी आँख की रोशनी प्यार तुम हो
यही सच है जीने का आधार तुम हो
तुम्हें प्यार सा मैंने जितना जिया है
मेरे पास जो है उसी ने दिया है
मुझे आज भी याद हैं सारी बातें
बिहँसते हुए दिन किलकती सी रातें
मेरी साथ बढ़कर सयानी हुई है
वही मेरे सुख की निशानी हुई है
अनायास ठनगन बहुत याद आये
तुम्हें देख बचपन बहुत याद आये
वो उबटन की मालिश से चिकना बनाना
नजर लग न जाये डिठौना लगाना
जो कपड़े पिन्हाकर सजाये सँवारे
कभी गोद में लेके चूमे दुलारे
भरे स्नेह ममता का आँचल ओढ़ाना
बहुत प्यार से थपकियाँ दे सुलाना
कभी लोरियों की मधुर धुन सुनाना
जिसे सुनते ही नींद में डूब जाना
वही दिल की धड़कन बहुत याद आये
तुम्हें देख बचपन बहुत याद आये

बहुत याद आते हैं बाँहों के झूले
मधुर स्वप्न जैसे भुलाये न भूले
वह कागज की नइया वे लकड़ी के घोड़े
कोई बाँध ले तो कोई इनको छोड़े
कहाँ है वे रंगीन सुन्दर खिलौने
बने धूल माटी के मोहक घरौने
चहकती हुई उम्र अँखमुद्दो खेले
कहाँ खो गये दिन वे थे जो अकेले
वह सपनों का दरपन बहुत याद आये
तुम्हें देख बचपन बहुत याद आये
जो घुमरी खेलाती थी बाँहें पसारे
कभी हाथ में हाथ बाँधे हुआ रे
कभी इतना पानी कभी घो घो रानी
तो परियों की कहनी सुनाती थी नानी
थे कितने सुहाने वे रंगीन मेले
जो खुशहाल बचपन हँसे खाये खेले
कहाँ खो गया हाय रे धन हमारा
कोई ला के दे जाय बचपन हमारा
वे बीते हुए छन बहुत याद आये
तुम्हें देख बचपन बहुत याद आये
कभी प्यार से रूठ जाना मचलना
उधर छोटी गुड़िया का गिरना सँभलना
बहुत याद आतीं कमोरी मथानी
वह लैनू का लोना वह ममता की बानी
कभी दौड़ना और चिड़िया उड़ाना
कभी जाके माँ के गले झूल जाना
वह किलकारियों से भरी जिन्दगानी
जो दादी की गोदी में सुनती कहानी
भरा पूरा आँगन बहुत याद आये
तुम्हें देख बचपन बहुत याद आये
वो रिमझिम बरसती घटाओं का पानी
उमर भीजती लगती कितनी सुहानी
कभी जा के बरखा में झरना नहाना
पड़े डाँट घर पर बहाना बनाना
जो झूले पर बैठी मधुर गीत गाती
बुआ चाची बहना सभी गुनगुनाती
नई माटी ले आके जरई उगाना
गदोरी पर रचरच के मेंहदी लगाना
सुहाना वो सावन बहुत याद आये
तुम्हें देख बचपन बहुत याद आये

• अजमत गढ़ पैलेस, मोतीझील, वाराणसी-221010 । सम्पर्क - 9236187300

।।श्री गणेशाय नमः।।

जुलाई, 2022 आपके लिए कैसा रहेगा

पं. उमंग नाथ शर्मा

महामहोपाध्याय पं. अयोध्यानाथ शर्मा मार्ग, ईश्वरगंगी,
नईबस्ती, वाराणसी। संपर्क-9336910672

मेष– चू, वे, चो, ला, ली, लू, ले, लो, अ

मेषराशि वाले जातकों के लिए– इस मास कुछ बड़े निर्णय लेंगे तथा जीवन में आगे की ओर बढ़ेंगे। सरकारी विभाग से जुड़े कार्य संपन्न होंगे। धर्म-कर्म के कार्यों में रुचि बढ़ेगी। आय के साथ व्यय की स्थिति बनी रहेगा, स्वास्थ्य उत्तम रहेगी। पारिवारिक जीवन सुखमय रहेगा। ता. 3, 6, 7, 17, 21 विशेष शुभ।

वृष– ई, उ, ए, ओ, वा, वी, वू, वे, वो

वृष राशि वाले जातकों के लिए– इस मास लाभ के साथ आय से जुड़ी कुछ दिक्कत हो सकती है। विरोधी काम बिगाड़ने का प्रयास कर सकते हैं। खर्चों में बढ़ोत्तरी की संभावनाएँ भी हैं। व्यर्थ की भाग-दौड़ से बचने का प्रयास करें। नए कार्य अभी प्रारम्भ न करें। पारिवारिक दृष्टि से यह माह सामान्य है। ता. 2, 11, 12, 19, 21 विशेष शुभ।

मिथुन– का, की, कु, घ, ङ, छ, के, को, हा

मिथुन राशि वाले जातकों के लिए– इस मास नौकरी पेशा वाले लोगों को भागदौड़-स्थानांतरण का सामना करना पड़ेगा। व्यापारियों को मन-मुताबिक लाभ न होने के कारण मानसिक तनाव बना रहेगा। भूमि-संपति का सुख प्राप्त होगा। युवा वर्ग के लोगों को बेहतर कार्य की संभावनाएँ बनेंगी। वाणी पर संयम रखना होगा। स्वास्थ्य उत्तम रहेगा। ता. 7, 10, 12, 13, 15 विशेष शुभ।

कर्क– ही, हू, हे, हो, डा, डी, डू, डे, हो

कर्क राशि वाले जातकों के लिए- इस मास आय भरपूर होगी। भौतिक सुख-सुविधाओं, भूमि-भवन निर्माण पर खर्च करेंगे। आय के भी नए स्रोत प्राप्त होंगे। नौकरी पेशा वाले लोगों को इस माह भागदौड़ की स्थिति बनी रहेगी। व्यापारी वर्ग के लोग नए कार्य प्रारम्भ कर सकते हैं। ता. 1, 5, 7, 12, 13 विशेष शुभ।

सिंह– मा, मी, मू, मे, मो, टो, टू, दू, टे

सिंह राशि वाले जातकों के लिए– इस मास विशिष्ट कार्यों का सम्पादन होगा। व्यापार में उतार-चढ़ाव की स्थिति बनी रहेगी। नौकरी में प्रमोशन के मामले अटक जायेंगे लेकिन मास के मध्य में व्यापारी वर्ग के लोगों को राहत मिलेगी। कई तरह की स्वास्थ्य समस्याएँ एक साथ आ सकती हैं। स्वास्थ्य पर विशेष ध्यान दें। ता. 6, 7, 11, 13, 15, 21 विशेष शुभ।

कन्या– टो, पा, पी, पू, व, ण, ढ, पे, पो

कन्या राशि वाले जातकों के लिए– इस मास नये कार्य के लिए काफी हद तक उत्तम समय रहेगा। कार्य क्षेत्र से संबंधित हर प्रकार की गलतफहमी दूर होगी। आपको कारोबार में भी सफलता के योग हैं। पैतृक-संपत्ति का पूर्ण लाभ मिलेगा। अपने फँसे हुए धन को निकालने में सक्षम रहेंगे। स्वास्थ्य भी उत्तम रहेगा। ता. 2, 11, 14, 21 विशेष शुभ।

तुला– रा, री, रु, रे, रो, ता, ती, तू, ते

तुला राशि वाले जातकों के लिए– इस मास मेहनत के साथ ईमानदारी से कार्य करें। इसका अच्छा परिणाम मिलेगा। आपकी उन्नति हो सकती है। बिजनेस से संबंधित लोगों को अच्छा फायदा होगा। खर्च कम होने से आप अच्छी बचत कर सकते हैं नए कार्यों को प्रारम्भ करने का अच्छा योग है। स्वास्थ्य के प्रति ध्यान देने की आवश्यकता है। ता. 2, 4, 5, 11, 13 विशेष शुभ।

वृश्चिक– तो, ना, नी, नू, ने, नो, या, यी, यू

वृश्चिक राशि वाले जातकों के लिए– इस मास गुप्त विरोधियों का प्रभाव बढ़ेगा। रोग व्याधि से शारीरिक कष्ट रहेगा। व्यापारी वर्ग के लोगों को भागदौड़ का सामना करना पड़ेगा लेकिन आय का स्रोत अच्छा बना रहेगा। यात्रा की स्थिति बनी रहेगी व सुखद होगी। स्वास्थ्य पर ध्यान देने की आवश्यकता है। ता. 1, 6, 9, 11, 13 विशेष शुभ।

धनु– ये, या, भा, भी, भू, ध, फ, ढ़, भे

धनु राशि वाले जातकों के लिए– इस मास कई क्षेत्रों में सफलता के योग हैं। विद्यार्थियों का इस समय पढ़ाई-लिखाई में मन नहीं लगेगा। सम्पत्ति के बँटवारे को लेकर परिवार में अनबन की स्थिति बनी रहेगी। मेहनत और प्रयास से कार्य क्षेत्र में सफलता के योग हैं। सरकारी क्षेत्र से जुड़कर कार्य करने से अच्छी सफलता मिल सकती है। ता. 4, 5, 11, 13, 15 विशेष शुभ।

मकर– भो, जा, जी, खी, खू, खो, गा, गी

मकर राशि वाले जातकों के लिए– इस मास मिला-जुला परिणाम आने वाला है। कई क्षेत्रों में सफलता मिलेगी तो कुछ क्षेत्रों में परेशानी का सामना करना पड़ सकता है! नौकरी के मामलों में आत्म-विश्वास बढ़ेगा। घर-परिवार में सुख-शांति बनी रहेगी। आप अपनी बुद्धि-दिमाग से अच्छा काम करेंगे। स्वास्थ्य उत्तम रहेगा। ता. 2, 3, 6, 9, 11 विशेष शुभ।

कुम्भ– गू, गे, गो, सा, सी, सू, से, सो, दा

कुम्भ राशि वाले जातकों के लिए– इस मास आर्थिक दृष्टिकोण से अच्छा समय रहेगा। आप अपने मेहनत के द्वारा अच्छा धन प्राप्त कर सकते हैं। आप खुद को सेहतमंद प्रस्तुत करेंगे। मन प्रसन्न रहेगा। आपका मन थोड़ा-बहुत भटक सकता है। वाणी पर संयम रखें। दाम्पत्य जीवन में थोड़ी मुश्किल आ सकती है। ता. 8, 9, 16, 18, 22 विशेष शुभ।

मीन– दी, दू, थ, झ, ञ, दे, दो, चा, ची

मीन राशि वाले जातकों के लिए– इस मास धन का आगमन बना रहेगा। कार्यक्षेत्र में अच्छे परिणाम के योग हैं। इस माह आपको महत्त्वपूर्ण निर्णय भी लेने पड़ सकते हैं। खुद को तनाव मुक्त रखें। पारिवारिक तालमेल बिगड़ सकता है। यात्रा की भी स्थिति बनी रहेगी। वाहनादि चलाते समय सावधानी बरतें। स्वास्थ्य उत्तम रहेगा। ता. 6, 7, 11, 13, 20 विशेष शुभ।

●●●

पं. रामप्रवेश चौबे महाविद्यालय

कुरौली, रजला, नियार, चोलापुर, वाराणसी

एम.ए., बी.ए. (समाजशास्त्र, गृहविज्ञान, शिक्षाशास्त्र सहित सात विषय); बी.काम
हमारे संस्थान में बी.एड. एवं बी.टी.सी. का कोर्स चलता है। (बी.एड. कोड नं. VS007)

हमारी विशेषतायें

1. बगैर अतिरिक्त धन लिये किसी तरह के शोषण न होने की गारन्टी है।
2. यू.जी.सी.के मानक के अनुसार योग्य शिक्षकों द्वारा पढ़ाई करायी जाती है।
3. सिटी ऑफिस से ही प्रवेश कराने की सुविधा है।
4. छात्रवृति की सुविधा सभी छात्रों के लिये उपलब्ध हैं।
5. एस.सी.व एस.टी. छात्रों के लिये विशेष सुविधा।
6. उच्च स्तरीय पुस्तकालय की सुविधा।
7. इन्टरनेट व कम्प्यूटर की सुविधा।
8. जौनपुर व गाजीपुर के छात्र-छात्राओं को लिये अत्यन्त पास है संस्थान।
9. जनरेटर व स्वच्छ जल की व्यवस्था।
10. खेल कूद एवं छायादार वृक्षों के बीच उत्तम कैम्पस।
11. वाहन की सुविधा।
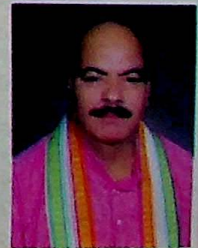
सिटी आफिस
एस 8/122 ए खजुरी,पाण्डेयपुर, वाराणसी
ऑफिस कार्यालय : मो 9554202526

कोआर्डिनेटर
मनीष चौबे
मो.7237965555

प्राचार्य
डा.पी.के.दूबे
मो.9125895222

प्रबंधक
सतीश चौबे
मो. 9415203727, 9919197672
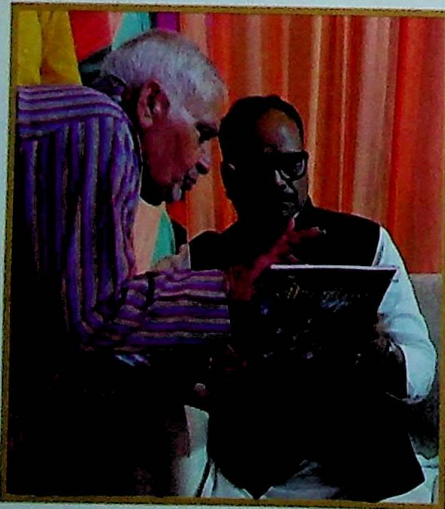
माननीय श्री ब्रजेश पाठक (उप मुख्यमंत्री उ.प्र.) के साथ आगामी काशी अंक के सम्बन्ध में विचार–विमर्श करते हुए संपादक नरेंद्र नाथ मिश्र
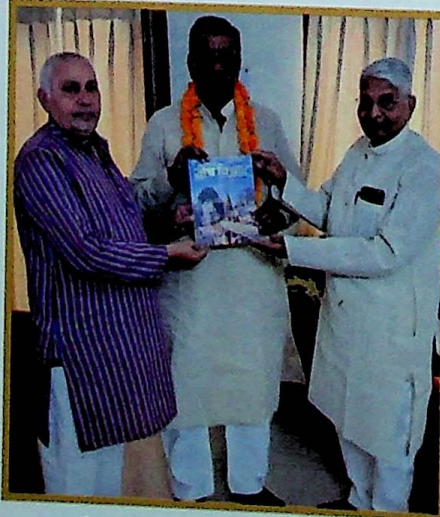
माननीय श्री सुरेश राही (राज्यमंत्री, उ.प्र.) को काशी अंक–12 भेंट करते हुए संपादक नरेंद्र नाथ मिश्र एवम् श्री श्रीराम माहेश्वरी
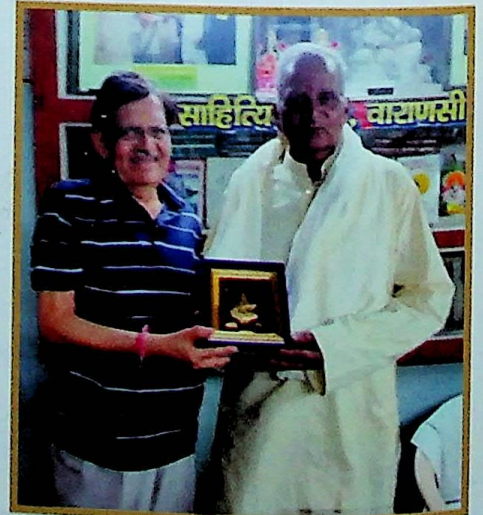
अमृत जयंती वर्ष में डॉ जितेंद्र नाथ मिश्र का उनके निवास स्थान पर अभिनन्दन करते हुए **श्री ओ. एन. सिंह**

SUPERCON

Durable, Hygienic, Strong Quality Products

Take a Step towards better hygine..

Water Tanks

- Easy Installation
- Easy To Clean
- Safe for Drinking Water

Septic Tanks

- No Maintenance Required
- No Construction Required
- Keeps Environment Clean
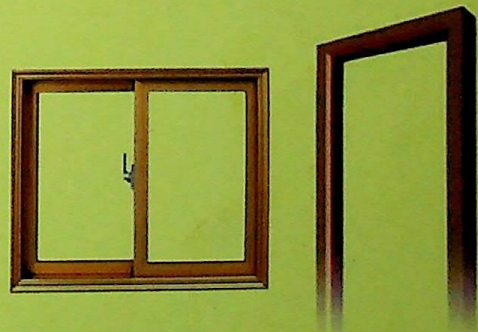
Solid Plastic Chakhats

Available in Sizes & Design As Per Requriments

- Water, Termite and Warping Proof
- Maintenance Free
- Life 50+ Years

Jain Agencies

17 A, Neel Cottage Maldhaiya, Varanasi 221002

email: jainagencies3@gmail.com +91 88874 58519